संपादकीय

“ अपने हक के लिए संघर्ष करो, वरना जिंदगी भर गुलामी सहनी पड़ेगी। - सुभाष चंद्र बोस

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के आंकड़ों के अनुसार उपभोक्ता मूल्य सूचकांक आधारित खुदरा मुद्रास्फीति दर का आठ साल के निम्नतम स्तर पर पहुंचना अर्थव्यवस्था के लिहाज से शुभ संकेत है, लेकिन वर्तमान वैश्विक आर्थिक अनिश्चितताओं के मद्देनजर इसे सतही राहत के बजाय व्यापक संदर्भ में देखे जाने की जरूरत है।

राहत और संकेत

ऐसे वक्त में जब अमेरिका की आर्थिक नीतियों में बदलाव की वजह से वैश्विक अर्थव्यवस्था पर अनिश्चितताएं छाई हुई हैं, तब राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय द्वारा जारी आंकड़ों का यह बताना कि उपभोक्ता मूल्य सूचकांक आधारित खुदरा मुद्रास्फीति दर आठ वर्षों के निम्नतम स्तर पर आ गई है, भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए यकीनन एक सकारात्मक संकेत है, लेकिन इसके साथ कुछ चिंताएं और नीतिगत सवाल भी उठते हैं। महंगाई में कमी आने का प्रमुख कारण खाद्य पदार्थों की कीमतों में आई कमी को बताया जा रहा है। इसके अलावा, मानसून की बेहतर स्थिति, जलाशयों में पर्याप्त जलस्तर और खरीफ की अच्छी बुआई को भी कीमतों में स्थिरता के लिहाज से अच्छा संकेत माना जा रहा है। महंगाई दर का 1.55 फीसदी पर पहुंचना उपभोक्ताओं के लिए राहत की बात है। इससे उनकी क्रयशक्ति बढ़ती है, क्योंकि वस्तुओं और सेवाओं की कीमतें स्थिर रहती हैं। खासकर, निम्न और मध्यम आय वर्ग के लिए यह उत्साहजनक संकेत है, जो अपनी आय का बड़ा हिस्सा आवश्यक वस्तुओं पर खर्च करते हैं। कुल मिलाकर यह पूरा परिदृश्य पहली नजर में बेहद सकारात्मक लगता है। लेकिन, हर आर्थिक सूचक की तरह, इसे भी सतही राहत के बजाय व्यापक संदर्भ में देखना चाहिए। सामान्य अर्थशास्त्रीय नियम है कि महंगाई कम होने से मांग बढ़ती है। लेकिन इतनी कम महंगाई का मतलब यह भी हो सकता है कि अर्थव्यवस्था में मांग की गति धीमी हो रही हो। अगर उपभोक्ता खर्च कम कर रहे हैं, तो उत्पादन पर असर पड़ता है, और यह रोजगार सृजन व औद्योगिक वृद्धि के लिए भी चेतावनी का संकेत हो सकता है। औद्योगिक उत्पादन और थोक महंगाई के आंकड़े इस दृष्टिकोण से अधिक स्पष्ट तस्वीर दे सकेंगे। दरअसल, केंद्रीय बैंक के लिए यह स्थिति एक दोधारी तलवार की तरह है। एक ओर, कम महंगाई उपभोक्ताओं के लिए फायदेमंद है, तो दूसरी तरफ, यह मौद्रिक नीति को जटिल बनाती है। पिछले हफ्ते

केंद्रीय बैंक ने नीतिगत रेपो दर को अपरिवर्तित रखने का फैसला किया था, लेकिन अभी इसमें घटाव की कुछ गुंजाइश है। हालांकि, यह टैरिफ युद्ध के भारत की अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पर निर्भर होगा। मुद्रास्फीति का दो फीसदी से नीचे आना, ब्याज दरों में कटौती की संभावना को बढ़ाता है, ताकि मांग को बढ़ावा दिया जा सके। हालांकि, यह कदम सावधानी से उठाना होगा, क्योंकि अत्यधिक ढीली मौद्रिक नीति भविष्य में मुद्रास्फीति को फिर से बढ़ा सकती है। खुदरा मुद्रास्फीति दर का रिकॉर्ड निचाई पर पहुंचना अर्थव्यवस्था के लिहाज से आश्वस्त करने वाला है। वैश्विक अनिश्चितताओं को देखते हुए यह जरूरी है कि सरकार व केंद्रीय बैंक इस अवसर का उपयोग कर ऐसे फैसले लें, जो आर्थिक स्थिरता और विकास को सुनिश्चित करने वाले हों।

ये मुलाकात एक बहाना है

खुद को दुनिया का सबसे महान वार्ताकार समझने वाले ट्रंप कल जब इतिहास के पन्नों पर अपनी छाप छोड़ने की मंशा से पुतिन से शिखर बैठक में मिलेंगे, तो उन पर पूरी दुनिया की नजर होगी। लेकिन, जो पुतिन को जानते हैं, वे समझ सकते हैं कि इस मुलाकात का सकारात्मक नतीजा निकलने की उम्मीद कम ही है।

ब्रेट स्टीफेंस
द न्यूयॉर्क टाइम्स

खुद को दुनिया का सबसे महान वार्ताकार समझने वाले डोनाल्ड ट्रंप कल यानी शुक्रवार को अलास्का में व्लादिमीर पुतिन के साथ होने वाली शिखर बैठक से पहले शायद किसी सलाह की जरूरत न समझते हों, फिर भी उन्हें रॉबर्ट क्राफ्ट नाम के सज्जन को फोन कर लेना चाहिए। मशहूर उद्योगपति क्राफ्ट जानते हैं कि रूसी राष्ट्रपति द्वारा ठगे जाने का मतलब क्या होता है। दरअसल, 2005 में अमेरिकी व्यापारिक नेताओं के साथ रूस की यात्रा के दौरान क्राफ्ट ने सिटीग्रुप के तत्कालीन अध्यक्ष सैंडी वेइल के कहने पर पुतिन को अपनी 25 हजार डॉलर की अंगूठी दिखाई थी।

क्राफ्ट ने 2013 में यह वाकया बताया कि किस तरह से पुतिन ने उनकी अंगूठी को पहनते हुए कहा था, 'इस अंगूठी से मैं किसी की जान भी ले सकता हूं।' वह बताते हैं, 'मैंने अंगूठी वापस लेने के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाया, लेकिन उन्होंने उसे अपनी जेब में रख लिया, और केजीबी के तीन लोग उन्हें घेरते हुए बाहर निकल गए।' क्राफ्ट बताते हैं कि तत्कालीन बुश प्रशासन ने उनसे आग्रह किया था कि वह यह दिखावा करें कि अंगूठी एक उपहार थी, जबकि पुतिन ने बाद में इस मामले में क्राफ्ट का मजाक बनाते हुए कहा था कि अंगूठी तो बेहद सस्ती निकली। यह घटना दर्शाती है कि पुतिन आखिर चीज क्या हैं और क्यों उनके जैसे शातिर नेता को हल्के में नहीं लिया जा सकता।

ट्रंप और पुतिन के रिश्ते भी कुछ अजीब ही रहे हैं। फिर भी, ट्रंप शायद 2018 के हेलसिंकी शिखर सम्मेलन जैसा प्रदर्शन नहीं दोहराना चाहेंगे, जहां उन्होंने पुतिन के इस आश्वासन को नकार दिया था कि 2016 के चुनाव में रूस की तरफ से कोई दखल अंदाजी नहीं हुई थी और तब रिपब्लिकन पार्टी को इस तरह शर्मिंदा किया था कि वह आज भी वैसी ही दिखती है।

ट्रंप को शायद यह एहसास भी होगा कि उनके कुछ पूर्ववर्तियों ने पिछले रूस शिखर सम्मेलनों में किस तरह से खुद को मूर्ख बनाया था। जॉर्ज डब्ल्यू बुश को कैसे भूला जा सकता है, जब उन्होंने कहा था, 'मैंने उस व्यक्ति की आंखों में देखा और मुझे वह बेहद सीधे व भरोसेमंद दिखे। मैं उनकी

आत्मा तक को देख पा रहा था।' या फिर, बराक ओबामा का यह कहना, 'चुनाव के बाद मेरे पास अधिक लचीलापन है', उन्होंने यह बात पुतिन के सहयोगी दिमित्री मेदवेदेव से कही थी।

पुतिन की गैंगस्टर वाली शैली शायद ट्रंप को रास नहीं आती है, लेकिन वह बिल्कुल नहीं चाहेंगे कि ताजा बैठक में पुतिन उन पर हावी रहें। दरअसल, ट्रंप और पुतिन की इस मुलाकात में काफी कुछ गड़बड़ होने की आशंका है, जिसमें रूस व यूक्रेन के बीच 'भूमि की अदला-बदली' की अस्पष्ट बातचीत भी शामिल है। इसके बावजूद कुछ तरीके हैं, जिनसे इस शिखर सम्मेलन को सार्थक बनाया जा सकता है। इस शिखर सम्मेलन के बारे में सबसे सकारात्मक बात यह है कि इसे एक अंतहीन युद्ध को रोकने के सम्मानजनक रास्ते के रूप में देखा जा सकता है। इसमें ट्रंप रूस पर लगे प्रतिबंध हटाने की पेशकश कर सकते हैं और वादा कर सकते हैं कि यूक्रेन नाटो में शामिल नहीं होगा, लेकिन रूस को इसकी भारी कीमत चुकानी होगी। पुतिन को यह स्वीकारना होगा कि फरवरी, 2022 की तर्ज पर रूस की यूक्रेन से समग्र वापसी होगी, कीव को पश्चिमी सहायता जारी रहेगी और यूरोपीय संघ में यूक्रेन की सदस्यता पर कोई रोक नहीं होगी। फिलहाल यह टेढ़ी खीर ही दिखता है।

पुतिन निश्चित तौर पर युद्ध रोकने के इन प्रयासों को खारिज करेंगे, भले ही इससे उनकी अर्थव्यवस्था को सहारा मिल रहा हो या 2014 में क्रीमिया और पूर्वी यूक्रेन के कुछ हिस्सों पर उनके अवैध, पर अपरिवर्तनीय कब्जे को मंजूरी मिल जाए। ट्रंप रूस की अस्वीकृति के नतीजों के बारे में पुतिन से स्पष्ट बातचीत करके अपनी ही मदद करेंगे। इसके अतिरिक्त भी ट्रंप को कुछ मोर्चों पर ध्यान देना होगा। उन्हें यूरोप के साथ मिलकर अनुमानित तीन सौ अरब डॉलर की जब्त रूसी सरकारी संपत्तियों को अपने कब्जे में लेने की कोशिश करनी चाहिए, ताकि यह यूक्रेन द्वारा पश्चिमी हथियारों की खरीद के लिए धन जुटाने का एक जरिया बन सके।

अमेरिकी राष्ट्रपति के पास 1977 के अंतरराष्ट्रीय आपातकालीन आर्थिक शक्ति अधिनियम के तहत ऐसा करने का कानूनी अधिकार है और जॉर्ज एच डब्ल्यू बुश ने सद्दाम हुसैन के कुवैत पर आक्रमण के बाद इराक की जब्त संपत्तियों पर कब्जा करके उसे एक मुआवजा कोष में स्थानांतरित करके एक मिसाल कायम की थी। ट्रंप को इस्राइल के साथ अमेरिकी संबंधों की तर्ज पर कीव के साथ भी एक रक्षा और तकनीकी सहयोग समझौते पर विचार करना चाहिए। वर्तमान समय में युद्ध के मैदान में ड्रोन के तेज विकास और तैनाती के बारे में अमेरिका को यूक्रेन से काफी कुछ सीखना है। उन्हें कीव को एफ-16 और अन्य हथियारों के अतिरिक्त उपकरणों की आपूर्ति सुनिश्चित करनी चाहिए, ताकि यूक्रेन के आकाश की रक्षा हो सके। अमेरिका द्वारा आपूर्ति किए गए हथियारों के यूक्रेन द्वारा उपयोग पर सभी तरह के प्रतिबंधों को हटाने पर भी ट्रंप को गौर करना चाहिए।

शिखर बैठक के जरिये ट्रंप रूसी जनता को यह संदेश देना चाहेंगे कि उनके राष्ट्रपति को सम्मानजनक शांति का प्रस्ताव दिया गया था, जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया। हालांकि, ऐसे शिखर सम्मेलन का कोई अर्थ नहीं, अगर इसमें वोलोदिमीर जेलेंस्की और यूक्रेनी जनता की भागीदारी न हो, जिनके साथ वैसा ही व्यवहार होने का खतरा है, जैसा 1938 में म्यूनिख में मिले सत्ताधारियों ने चेकोस्लोवाकिया की सरकार के साथ किया था। नेविल चैंबरलेन, जो 1937 से लेकर 1940 तक ब्रिटेन के प्रधानमंत्री रहे, एक और ऐसे नेता हैं, जिनसे ट्रंप अपनी तुलना नहीं देखना चाहेंगे। गौरतलब है कि चैंबरलेन ने दूसरे विश्वयुद्ध से ठीक पहले की अवधि में हिटलर के जर्मनी के प्रति तुष्टीकरण का रवैया अपनाया था। कल ट्रंप के पास यह दिखाने का मौका है कि पुतिन, पुतिन हैं, तो वह भी ट्रंप हैं। इस दौरान वह पुतिन से क्राफ्ट की अंगूठी लौटाने के लिए भी कह सकते हैं।

जीवन धारा

हेराक्लीटस

हम चाहे किसी भी बदलाव का अनुभव करें, हम उसे कैसे अपनाते हैं, यह हमेशा इस बात को प्रभावित करेगा कि हम बदलाव के साथ कैसे जी पाते हैं। हम जो चुनते हैं, जो सोचते हैं, जो करते हैं, वही हम बन जाते हैं।

जो बदलाव से डरते हैं, वे पीछे रह जाते हैं

जीवन में कुछ भी स्थिर नहीं है। सब कुछ बहता है, जैसे नदी का पानी। हम सभी सोचते हैं कि दुनिया वैसी ही रहेगी जैसी आज है, लेकिन नहीं। 'पंता रेई' यानी सब कुछ बहता है। कोई व्यक्ति एक ही नदी में दो बार पैर नहीं रख सकता। पहली बार जब हम पैर रखते हैं, पानी बह जाता है, नदी बदल जाती है, और हम खुद भी बदल जाते हैं। अनुभव, समय, सब कुछ हमें नया बनाता है। हम एक ही नदी में दो बार नहीं उतर सकते, क्योंकि वह वही नदी नहीं रहती और हम भी वही व्यक्ति नहीं रहते। यह जीवन का मूल सत्य है। परिवर्तन ही एकमात्र स्थिर चीज है। कल जो था, आज नहीं है। कल जो होगा, वह आज से अलग होगा। इस बदलाव को स्वीकार करें। जो लोग बदलाव से डरते हैं, वे जीवन में पीछे रह जाते हैं। बदलाव से लड़ें नहीं, उसके साथ चलें। परिवर्तन एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, जो हमेशा होती रहती है। जीवन में संघर्ष आवश्यक है। बगैर चुनौतियों के, जीवन स्थिर हो जाता है। हमारा चरित्र महत्वपूर्ण है। चरित्र हमें चुनौतियों से लड़ने में सक्षम बनाता है। अच्छा चरित्र एक हफ्ते या एक महीने में नहीं बनता। यह धीरे-धीरे बनता है। अच्छा चरित्र विकसित करने के लिए निरंतर और धैर्यपूर्ण प्रयास की आवश्यकता होती है।

कुछ लोग अपने दैनिक जीवन में जो करते हैं, उसके प्रति उतने ही अनजान होते हैं, जितने कि वे सोते समय होते हैं। सोते हुए लोग अपनी ही दुनिया में रहते हैं, केवल जागने वालों की ही एक दुनिया होती है। वे बिना सोचे-समझे काम करते हैं और उनके कार्यों के परिणामों के बारे में ज्यादा नहीं सोचते हैं। हम सभी हर दिन बदलावों का सामना करते हैं, चाहे वह मौसम में एक साधारण बदलाव हो, हमारी दिनचर्या हो या ऋतुओं में अपेक्षित बदलाव हो। बदलाव हम सभी को प्रभावित करता है और हम सभी बदलाव से अलग तरह से निपटते हैं। जीवन में यही एकमात्र स्थिर तत्व है, जिसके बारे में हम निश्चित हो सकते हैं कि वह घटित होगा। हम चाहे किसी भी बदलाव का अनुभव करें, हम उस बदलाव को कैसे अपनाते हैं, यह हमेशा इस बात को प्रभावित करेगा कि हम बदलाव के साथ कैसे जी पाते हैं। हम जो चुनते हैं, जो सोचते हैं, जो करते हैं, वही हम बनते हैं।

दिन-प्रतिदिन की पसंद से हमारा व्यक्तित्व बनता है। अधिकांश लोगों को उन चीजों की कोई समझ नहीं होती, जिनका वे प्रतिदिन सामना करते हैं, और न ही, उन्हें निर्देश दिया जाता है। इससे उन्हें उन चीजों का सही ज्ञान नहीं हो पाता है, यद्यपि स्वयं उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि उनके पास ज्ञान है। वे समझ नहीं पाते, बहरों की तरह सुनते हैं। मौजूद रहते हुए भी अनुपस्थित रहते हैं। अच्छे विचार रखें, सिद्धांतों पर चलें। यही वह प्रकाश है, जो हमारा मार्गदर्शन करता है। हर पल सीखें, लेकिन मूल सिद्धांत रखें। जीवन बहता है, हम उसके साथ बहें, लेकिन दिशा स्वयं चुनें। संघर्ष से डरें नहीं, वह हमें मजबूत बनाएगा। बुद्धि की खोज करें, खुद को जानें। यही जीवन का सार है।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

बदलाव को स्वीकारें

सूत्र

हर पल कुछ नया हो रहा है, इसी का परिणाम है कि दुनिया हर बार अलग और अनोखे रूप में नजर आती है। आज हर पल हमारे सामने एक नई चुनौती और कुछ नया बदलाव है, जीवन में सफलता और कुछ नया बनने के लिए अपने विचारों को जरूर बदलें और हर बदलाव को स्वीकार करें।

दूसरा पहलू

सर्जरी के मरीजों को बेहोश करने के लिए इस्तेमाल होने वाली डेसफ्लुरेन दवा को स्कॉटलैंड में प्रतिबंधित कर दिया गया है।

दवाएं भी बढ़ा रहीं धरती का तापमान

स्कॉटलैंड मौजूदा समय में 'डेसफ्लुरेन' नामक एनेस्थेटिक के उपयोग और विक्रय पर प्रतिबंध लगाने वाला दुनिया का इकलौता देश है। मरीजों की सर्जरी के दौरान बेहोशी के लिए प्रयुक्त की जाने वाली यह दवा पर्यावरण के लिए बड़ा खतरा बन चुकी है। स्कॉटलैंड के इस साहसिक कदम से प्रेरित होकर 27 देशों के समूह यूरोपीय संघ ने एक जनवरी, 2026 से इसके उपयोग पर पाबंदी लगाने का निर्णय लिया है।

सुधीर कुमार

डेसफ्लुरेन का उपयोग 'सर्जिकल एनेस्थेसिया' के रूप में पिछली सदी के अंतिम दशक से किया जा रहा है। सर्जरी के दौरान सांस के माध्यम से दी जाने वाली यह गैस वायुमंडल में उत्सर्जित होने पर शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैस के रूप में व्यवहार करती है। इससे होने वाले पर्यावरणीय नुकसान का आकलन इस बात से किया जा सकता है कि एक बोतल (240 मिलीलीटर) डेसफ्लुरेन के इस्तेमाल से ग्लोबल वार्मिंग पर उतना ही असर पड़ता है, जितना 440 किलोग्राम कोयला जलाने से होता है। जाहिर है, यह दवा पर्यावरण को जीवाश्म ईंधनों के दहन के मुकाबले कहीं अधिक नुकसान पहुंचाती है।

एक बोतल (240 एमएल) डेसफ्लुरेन के इस्तेमाल से ग्लोबल वार्मिंग पर उतना ही असर पड़ता है, जितना 440 किलोग्राम कोयला जलाने से होता है।

स्कॉटलैंड से प्रेरित होकर 27 देशों के समूह यूरोपीय संघ ने एक जनवरी, 2026 से डेसफ्लुरेन के उपयोग पर पाबंदी लगाने का निर्णय लिया है, ताकि पर्यावरण व ऊर्जा संरक्षण में उल्लेखनीय योगदान दिया जा सके।

ब्रिटेन की राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अनुसार, डेसफ्लुरेन की ग्लोबल वार्मिंग क्षमता (ऊष्मा को रोकने के गुण) कार्बन डाइऑक्साइड से 2,590 गुना अधिक है। दूसरी तरफ, वातावरण में पहुंचने के बाद यह गैस लगभग डेढ़ दशक तक वहां विद्यमान रहती है, जो सेवोफ्लुरेन (1.4 वर्ष) और आइसोफ्लुरेन (3.5 वर्ष) जैसी एनेस्थेटिक गैसों के मुकाबले कई गुना अधिक है। व्यापक 'कार्बन फुटप्रिंट' होने के कारण ही इसके उपयोग को प्रतिबंधित करने और वैकल्पिक उपायों को अपनाने की मांग उठने लगी है। स्कॉटलैंड में डेसफ्लुरेन पर लगाए गए प्रतिबंध के नतीजे आशाजनक रहे हैं। वहां की राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा की ओर से कहा गया है कि इस प्रतिबंध से प्रतिवर्ष लगभग 6.17 किलोटन कार्बन उत्सर्जन में कमी आई है, जो प्रतिवर्ष 1,700 घरों को बिजली देने के बराबर है। इस तरह डेसफ्लुरेन से दूरी न सिर्फ ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाती है, बल्कि ऊर्जा संरक्षण के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान देती है। डेसफ्लुरेन पर प्रतिबंध स्वास्थ्य क्षेत्र में पर्यावरणीय जवाबदेही और सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। कम कार्बन उत्सर्जक सर्जिकल एनेस्थेटिक उपायों को अपनाना वैश्विक खुशहाली के लिए जरूरी है। यह पहल चिकित्सा क्षेत्र को पर्यावरण अनुकूल बनाने में मील का पत्थर साबित हो सकती है।

आंकड़े

व्यस्ततम बंदरगाह

समुद्री मार्ग से देश के कई बंदरगाहों से माल ढुलाई का काम होता है। जून 2025 में ओडिशा का पारादीप देश का सबसे व्यस्ततम बंदरगाह था।

पारादीप	131.4
दीनदयाल	120.3
जवाहरलाल नेहरू	75.6
विशाखापत्तनम	73.3
श्यामा प्रसाद मुखर्जी	59.3

आंकड़े बंदरगाहों पर संभाले गए भार के लाख मीट्रिक टन में | स्रोत : MoPSW

भगवान शंकर ने योगी वनराज महाराज की भक्ति से प्रसन्न होकर कहा, 'तात! जिस प्रकार तुम मुझे प्रसन्न करते हो, वैसे ही भगवान श्रीकृष्ण को प्रसन्न करो।'

कृष्णरूप भज कृष्णरूप हो

योगी वनराज महाराज का जन्म विक्रम संवत 1922 को पौष कृष्ण अष्टमी के दिन जोधपुर में हुआ था। परिवार से मिले संस्कार और पूर्व जन्म की भक्ति से उनका मन शुरू से ही भगवान की भक्ति में रमता था।

वनराज महाराज के संबंध में बताते हैं कि उन्होंने वेद और शास्त्रों का अध्ययन किया था। पहले वह भगवान शिव की भक्ति करते थे और पूजन में आठ घंटे लगा देते थे। उन्होंने *संगीतपंचरत्न* नामक पुस्तक की रचना भी की। उनके राग और भक्ति से भगवान शंकर ने प्रसन्न होकर उन्हें स्वप्न में दर्शन दिए और कहा, 'तात! जिस प्रकार तुम मुझे प्रसन्न करते हो, वैसे ही भगवान श्रीकृष्ण को प्रसन्न करो।' भवानीपति के उपदेश से ठीक उसी दिन से वनराज महाराज अपनी पारिवारिक और सांसारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन रहने लगे। उन्होंने गीता में दिए भगवान श्रीकृष्ण के उपदेशों को अपने जीवन में आत्मसात किया। बताते हैं कि वनराज महाराज की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें चतुर्भुज रूप में दर्शन दिए। भक्ति की महिमा का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा, *'जिन्ह कृष्ण चरण रति कीति, जिन्हें नहीं जगत सुहावे हो। नट चढ़ वनतरु बांस गही पुन, मन न डुलावे हो। जिमि हरिचरण प्रीति अतिशय सो, भक्त कहावे हो।। कह वनराज भक्ति कर ऐसी, जन्म न आवे हो। कृष्णरूप भज कृष्णरूप हो, निज पद पावे हो।।'* यह कृष्णभक्ति की महिमा थी कि राधाष्टमी के दिन उन्होंने भौतिक चोला त्यागा।

अंतर्यात्रा
संकलित

आज का इतिहास

छलनी हुआ भारत मां का सीना, देश के हुए दो टुकड़े

देश के इतिहास में 14 अगस्त की तारीख आंसुओं से लिखी गई है। यही वह दिन था, जब देश का विभाजन हुआ और 14 अगस्त 1947 को पाकिस्तान तथा 15 अगस्त, 1947 को भारत को एक पृथक राष्ट्र घोषित कर दिया गया। इस विभाजन में न केवल भारतीय उप-महाद्वीप के दो टुकड़े किये गये, बल्कि बंगाल का भी विभाजन किया गया और बंगाल के पूर्वी हिस्से को भारत से अलग करके पूर्वी पाकिस्तान बना दिया गया, जो 1971 के युद्ध के बाद बांग्लादेश बना। कहने को तो यह एक देश का बंटवारा था, लेकिन दरअसल यह दिलों का, परिवारों का, रिश्तों का और भावनाओं का बंटवारा था। भारत मां के सीने पर बंटवारे का यह जख्म सदियों तक रिसता रहेगा और आने वाली नस्लें तारीख के इस सबसे दर्दनाक और रक्तरंजित दिन की टीस महसूस करती रहेंगी। वर्ष 2021 में केंद्र सरकार ने घोषणा की कि 14 अगस्त को विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस के रूप में मनाया जाएगा। 1862 : बंबई उच्च न्यायालय की स्थापना।

ट्रंप, टैरिफ और एमएसएमई

ट्रंप के टैरिफ से सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यमों को अधिक नुकसान होने का अनुमान है। कुल निर्यात में 45 प्रतिशत से ज्यादा योगदान इसी क्षेत्र का है।

सतीश सिंह | आर्थिकी

टैरिफ, ट्रंप की आर्थिक योजना का हिस्सा है। अमेरिका इसके जरिये राजस्व, अर्थव्यवस्था का आकार, विनिर्माण, रोजगार सृजन आदि में तेजी लाना चाहता है। वर्ष 2024 में अमेरिका में आयात का 40 फीसदी से अधिक हिस्सा चीन, मेक्सिको और कनाडा से आए उत्पादों का रहा था। वर्ष 2023 में अमेरिका को चीन से 30.2 प्रतिशत, मेक्सिको से 19 प्रतिशत और कनाडा से 14.5 प्रतिशत व्यापार घाटा हुआ था। कुल मिलाकर ये तीनों देश 2023 में अमेरिका के करीब 40 लाख करोड़ रुपये के व्यापार घाटे के लिए जिम्मेदार थे। टैरिफ के जरिये ट्रंप इसी घाटे को कम करना चाहते हैं। इस क्रम में उन्होंने 27 अगस्त से भारत पर 50 फीसदी टैरिफ लगाने का फैसला किया है।

वैश्विक रेटिंग एजेंसी मूडीज के अनुसार, ट्रंप के इस

फैसले से वित्त वर्ष 2026 में भारत की जीडीपी वृद्धि दर में 30 आधार अंकों की कमी आ सकती है, जिससे यह छह फीसदी के आसपास रह सकती है। एजेंसी का यह भी मानना है कि स्थानीय मांग और भारत के सेवा क्षेत्र की मजबूती की बदौलत भारत टैरिफ का दबाव झेल सकता है। भारत अमेरिका से शीर्ष पांच उत्पाद जैसे, क्रूड पेट्रोलियम, पेट्रोलियम उत्पाद, सोना, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण और कोयला व कोक खरीदता है, जबकि पेट्रोलियम, दवा, मोती, महंगे पत्थर और इलेक्ट्रॉनिक मशीनरी व उपकरण आदि निर्यात करता है। अमेरिका से व्यापार भारत के लिए फायदेमंद रहा है। वित्त वर्ष 2023-24 में भारत ने अमेरिका को 6.75 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया था, जबकि आयात किया 3.67 लाख करोड़ रुपये का। कुल कारोबार में भारत के लिए 3.07 लाख करोड़ रुपये का सरप्लस ट्रेड बैलेंस रहा। भारत ने वित्त वर्ष 2022-23 के दौरान अमेरिका को 6.84 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया, जबकि आयात 4.43 लाख करोड़ रुपये का किया। वित्त वर्ष 2024-25 के दौरान भारत ने सबसे अधिक चीन से 7.36 लाख करोड़ रुपये का आयात किया, जबकि रूस से 4.32 लाख करोड़ रुपये, यूएई से 3.98 लाख करोड़ रुपये, अमेरिका से 2.98 लाख करोड़ रुपये और सऊदी अरब से 1.96 लाख करोड़ रुपये का आयात किया। वहीं, अमेरिका को सबसे अधिक 5.22 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया, जबकि यूएई को 2.34 लाख करोड़ रुपये, नीदरलैंड को 1.58 लाख करोड़ रुपये, ब्रिटेन को 0.94 लाख करोड़ रुपये और चीन को महज 0.91 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया। टैरिफ से सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) को अधिक नुकसान होने का अनुमान है। देश के कुल निर्यात में 45 प्रतिशत से अधिक का योगदान एमएसएमई क्षेत्र का है। 50 फीसदी टैरिफ लगने से कारोबार को 30 अरब डॉलर से ज्यादा का नुकसान होने का अंदेशा है। एक अनुमान के अनुसार, अमेरिकी टैरिफ से भारतीय निर्यातकों की लागत दूसरे देशों के निर्यातकों की तुलना में 30 से 35 प्रतिशत तक बढ़ जाएगी। हालांकि, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) आदि देशों के साथ कारोबारी समझौता करने से भी कारोबार में इजाफा हो सकता है, पर इसे तत्काल मूर्त रूप देना आसान नहीं। एमएसएमई मौजूदा चुनौतियों का सुचारु रूप से सामना कर सके, इसके लिए उसे डिजिटल व्यापार प्लेटफॉर्म उपलब्ध कराने, समयबद्ध आर्थिक सहायता मुहैया कराने तथा आवश्यक जानकारी तत्काल मुहैया कराने के साथ-साथ सरकार को इस क्षेत्र को नीतिगत व आर्थिक मदद भी देनी होगी और दुनिया के सभी प्रमुख शहरों में ट्रेड डेस्क, गोदाम और निर्यात वितरण केंद्र बनाने या बनवाने की दिशा में कार्य करना होगा। भारत से 27 फीसदी वाहन पुर्जे व 17 फीसदी टायर अमेरिका जाते हैं। टैरिफ से भारी वाहन मशीनरी और रिप्लेसमेंट टायर की श्रेणी में वियतनाम व इंडोनेशिया जैसे एशियाई देशों से साथ कीमत की होड़ में भारत पिछड़ सकता है, क्योंकि इन दोनों देशों पर कम टैरिफ लगाया गया है। भारत के दवा निर्यात में अमेरिका की हिस्सेदारी 35 प्रतिशत है और दवा को अभी टैरिफ की जद से बाहर रखा गया है, क्योंकि अमेरिका निर्यात की जाने वाली जेनेरिक दवाओं की कीमत बहुत कम होती है।

Special arrangements by Amar Ujala

स्वत्वाधिकारी रामगोपाल इन्वेस्टमेन्ट्स प्रा.लि. के लिए मुद्रक, प्रकाशक समीर माहेश्वरी द्वारा नवभारत प्रेस, नवभारत भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जी.ई.रोड, रायपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित. प्रधान संपादक : समीर माहेश्वरी, संपादक : राजेश आर. जोशी* (पी.आर.बी. कानून के अनुसार संपूर्ण संपादकीय दायित्व के लिये जिम्मेदार)
■ रायपुर फोन : 0771-4343434, 2535555-66-77, ■ भुवनेश्वर : 0674-2380511/2380518 ■ बिलासपुर : 07752-230591, 407748, 224563 ■ वर्ष 66 ■ अंक 81 (रजि.नं. 13045/59 आरएनआई), पो. रजिस्टर्ड नं. छ.ग./रायपुर संभाग/61/2025-27 ■ भिलाई फोन : (0788) 2294181, 4030655

देशप्राण
बृहस्पतिवार
रांची, 14 अगस्त, 2025

परमाणु युद्ध की धमकी

पाकिस्तान के सेना प्रमुख असीम मुनीर ने जिस तरह खुले आम परमाणु युद्ध की धमकी दी है, उसे गंभीरता से लिया जाना चाहिए। इससे भारत की यह चिंता पुष्ट होती है कि पाकिस्तान के पास एटॉमिक पावर होना पूरी दुनिया के लिए खतरा है। उस पर निगरानी बढ़ाए जाने की जरूरत है। मुनीर इस समय अमेरिका के दौरे पर हैं। पहली बार किसी ने अमेरिकी धरती से किसी तीसरे देश के लिए इस तरह धमकी भरे शब्दों का इस्तेमाल किया है। यह भी पहली बार है, जब किसी सेना प्रमुख ने कहा कि जरूरत पड़ने पर वह परमाणु हथियार भी इस्तेमाल कर सकता है। मुनीर की बातें जितनी गैरजिम्मेदार हैं, उतनी ही चिंता बढ़ाने वाली भी। पाकिस्तान के सिस्टम में सेना क्या भूमिका रखती है, यह सभी को मालूम है। भले वहां चुनी हुई सरकार हो, लेकिन फैसले सेना प्रमुख के होते हैं। ऐसे में मुनीर के बयान को पाकिस्तान की पॉलिसी की तरह देखा जाना चाहिए। अब किसी को इस बारे में शक नहीं होना चाहिए कि पाकिस्तान की सत्ता किसके हाथ में है। वहां की निर्वाचित सरकार सेना के हाथ की कठपुतली भर है।

भारत ने 'नो फर्स्ट यूज' की नीति अपना रखी है यानी वह परमाणु हथियारों का पहले इस्तेमाल नहीं करेगा। साथ ही किसी गैर परमाणु शक्ति देश के खिलाफ भी एटमी पावर नहीं दिखाई जाएगी। लेकिन, पाकिस्तान ऐसी किसी नीति से नहीं बंधा और यही फिक्र की बात है। मुनीर का अंदाज कि 'हम अपने साथ आधी दुनिया को ले डूबेंगे', पाकिस्तान के असुरक्षित परमाण्विक सिद्धांत का नमूना है। मुनीर का बयान उकसाने वाला और शांति की कोशिशों के खिलाफ है। यह विडंबना है कि उन्होंने इन बातों के लिए उस जगह को चुना, जिसके राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप आधा दर्जन युद्ध रुकवाने का दावा कर रहे हैं और जिनके लिए शांति का नोबेल मांगने वालों में पाकिस्तान भी है। यह आम बात नहीं हो सकती कि मुनीर दो महीने के भीतर दूसरी बार अमेरिका की यात्रा पर हैं। इन दो महीनों के दौरान दो देशों के रिश्तों में काफी बदलाव आया है। ट्रंप को अब इस्लामाबाद के रूप में एक प्रमुख क्षेत्रीय सहयोगी दिख रहा है। मुनीर के बयान का भारतीय विदेश मंत्रालय ने बिल्कुल सही जवाब दिया है कि जिस देश में सेना आतंकवादी समूहों के साथ मिली हो, वहां परमाणु कमांड और कंट्रोल की विश्वसनीयता पर संदेह होना स्वाभाविक है। एएअ ने यह भी कहा कि भारत किसी न्यूक्लियर ब्लैकमेल के आगे नहीं झुकेगा। ऑपरेशन सिंदूर के दौरान भी सरकार का यही रुख था। मुनीर के बयान का इस्तेमाल भारत को पाकिस्तान पर अंतरराष्ट्रीय दबाव बढ़ाने और उसके परमाणु कार्यक्रम को सीमित करने के लिए करना चाहिए।

देश विभाजन कांग्रेस की ऐतिहासिक गलती

नीरज कुमार दुबे

1947 का भारत-विभाजन इतिहास की सबसे दर्दनाक घटनाओं में से एक है। लाखों लोग अपने घर-परिवार, जमीन-जायदाद छोड़ने पर मजबूर हुए, लाखों लोगों की हत्या हुई और करोड़ों लोग विस्थापन की त्रासदी से जूझे। यह केवल एक भू-राजनीतिक घटना नहीं थी, बल्कि एक स्थायी घाव था, जो आज भी भारत के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक ताने-बाने को प्रभावित करता है। कांग्रेस के तत्कालीन नेताओं ने अंग्रेजों द्वारा पेश किए गए विभाजन के प्रस्ताव को स्वीकार कर ऐतिहासिक भूल की थी जिसकी भरपाई आज भी समस्त भारतीय कर रहे हैं। हालांकि कई इतिहासकार तत्कालीन परिस्थितियों में विभाजन के प्रस्ताव को स्वीकार करने को व्यावहारिक समाधान बताते हैं, लेकिन इसके आलोचक मानते हैं कि यह एक ऐसी रणनीतिक गलती थी, जिसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी है।

उस समय की परिस्थितियों पर गौर करें तो उभर कर आता है कि 1940 के दशक के अंत में भारत की राजनीतिक स्थिति बेहद अस्थिर थी। मुस्लिम लीग, मोहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व में, दो-राष्ट्र सिद्धांत पर अड़ी हुई थी — यानी हिंदू और मुस्लिम अलग-अलग राष्ट्र हैं और साथ नहीं रह सकते। अंग्रेज, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कमजोर हो चुके थे और जल्द-से-जल्द भारत छोड़ना चाहते थे।

उस समय की परिस्थितियों पर गौर करें तो उभर कर आता है कि 1940 के दशक के अंत में भारत की राजनीतिक स्थिति बेहद अस्थिर थी। मुस्लिम लीग, मोहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व में, दो-राष्ट्र सिद्धांत पर अड़ी हुई थी– यानी हिंदू और मुस्लिम अलग-अलग राष्ट्र हैं और साथ नहीं रह सकते। अंग्रेज, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कमजोर हो चुके थे और जल्द-से-जल्द भारत छोड़ना चाहते थे। वह एकीकृत भारत छोड़ने की बजाय बंटा हुआ भारत छोड़ने में ज्यादा सहज थे, क्योंकि इससे भविष्य में उनके सामरिक हित साधे जा सकते थे। कांग्रेस नेतृत्व, खासकर जवाहर लाल नेहरू लगातार सांप्रदायिक हिंसा, दंगे और मुस्लिम लीग के साथ गतिरोध से थक चुके थे। उनके लिए विभाजन, भले ही दर्दनाक था, लेकिन तत्काल स्थिरता का एक साधन लग रहा था।

देखा जाये तो विभाजन स्वीकार करना, जिन्ना के इस तर्क को अप्रत्यक्ष रूप से वैध ठहराना था कि हिंदू और मुस्लिम एक साथ नहीं रह सकते। इससे न केवल भारत की धर्मनिरपेक्षता को झटका लगा, बल्कि यह तर्क बाद के दशकों में पाकिस्तान के भारत-विरोधी नैरेटिव की जड़ बन गया। साथ ही पाकिस्तान बनने से भारत का भू-राजनीतिक नक्शा बदल गया। पश्चिम में पाकिस्तान और पूर्व में (1971 तक) पूर्वी पाकिस्तान की मौजूदगी ने भारत को दो मोर्चों पर रक्षा की चुनौती में झोंक दिया। इसके साथ ही विभाजन के साथ ही कश्मीर का मुद्दा सामने आया। अक्टूबर 1947 में पाकिस्तान के कबायली हमले ने इस विवाद को जन्म दिया, जो आज तक भारत की सबसे बड़ी राष्ट्रीय सुरक्षा चुनौती है। इसके अलावा, पाकिस्तान की स्थापना ने भारत की पश्चिमी सीमा पर एक स्थायी शत्रु पैदा कर दिया। चार बड़े युद्ध (1947, 1965, 1971, 1999) और लगातार सीमा पार आतंकवाद इस गलती की प्रत्यक्ष कीमत हैं। इसके अलावा, विभाजन से उपजी समस्याएं जो आज भी भारत को परेशान कर रही हैं उनमें सीमा पार आतंकवाद सबसे बड़ी चुनौती है। दरअसल पाकिस्तान की सुरक्षा नीति का केंद्र भारत को अस्थिर करना है। इसके साथ ही भारत का रक्षा बजट हर साल बढ़ता जा रहा है, क्योंकि पाकिस्तान से खतरा हमेशा बना हुआ है। यह खर्च शिक्षा, स्वास्थ्य और बुनियादी ढांचे में निवेश को सीमित करता है। अगर पाकिस्तान नहीं बना होता, तो यह पैसा विकास कार्यों में लगाया जा सकता था।

इसके अलावा, विभाजन ने हिंदू-मुस्लिम अविश्वास की खाई गहरी की। आज भी चुनावी राजनीति में पाकिस्तान का हवाला देकर वोट बैंक प्रभावित करने की कोशिश होती है। यह सामाजिक एकता के लिए एक बड़ी चुनौती है। साथ ही, अगर विभाजन न हुआ होता, तो भारत के पास अफगानिस्तान और मध्य एशिया तक सीधी जमीनी पहुंच होती। आज पाकिस्तान के कारण यह संपर्क टूट चुका है और भारत क्षेत्रीय व्यापारिक ब्लॉकों से भी वंचित है। इसके अलावा, 1947 में करोड़ों लोगों का पलायन हुआ, जिसमें हिंसा, बलात्कार, लूटपाट और सामूहिक हत्याएं हुईं। इन घावों की स्मृति पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है, जिसने साम्प्रदायिक संबंधों में तनाव बनाए रखा है।

कुछ इतिहासकार मानते हैं कि अगर कांग्रेस नेतृत्व विशेषकर नेहरू ब्रिटिश हड़बड़ी और मुस्लिम लीग की ज़िद के सामने कुछ और समय तक टिका रहते तो पाकिस्तान का गठन रोका जा सकता था। वहीं कुछ अन्य कहते हैं कि तत्कालीन हिंसक माहौल, ब्रिटिश समय-सीमा और विभाजन-रोधी ताकतों की कमजोर स्थिति को देखते हुए यह बात पक्के तौर पर नहीं कही जा सकती कि विभाजन को रोका जा सकता था। देखा जाये तो कांग्रेस द्वारा विभाजन स्वीकारना तत्कालीन हालात में 'समाधान' की तरह दिख रहा था, लेकिन इसके दीर्घकालिक परिणाम भारत के लिए बेहद महंगे साबित हुए। यह निर्णय केवल सीमाओं का नहीं, बल्कि भरोसे, विकास और सामाजिक सौहार्द का भी बंटवारा था। आज 78 साल बाद भी, भारत पाकिस्तान-जनित चुनौतियों– कश्मीर विवाद, सीमा पार आतंकवाद, रक्षा बोझ और साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण से जूझ रहा है।

महात्मा गांधी धर्म के आधार पर देश के बंटवारे के खिलाफ थे। उनके लिए आजादी का मतलब केवल राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि शांति, सद्भाव और समानता वाला भारत था। इसी वजह से वह 15 अगस्त 1947 के जश्न में शामिल नहीं हुए क्योंकि यह वह 'पूर्ण स्वतंत्रता' नहीं थी जिसके लिए उन्होंने सत्याग्रह और असहयोग आंदोलनों की अगुवाई की थी। कांग्रेस नेतृत्व की सहमति ने उनके सपनों को आधा-अधूरा कर दिया था।

साथ ही, इतिहास गवाह है कि अंग्रेजों ने जिन देशों में विभाजन कराया– आयरलैंड, फिलिस्तीन, साइप्रस और भारत, उनमें भारत का विभाजन ही सबसे रक्तरंजित रहा। सबसे बड़ा सवाल यही है कि जब कांग्रेस का तत्कालीन नेतृत्व अंग्रेजों की चाल और उनकी 'फूट डालो, राज करो' नीति को भली-भांति समझता था, तब भी उन्होंने विभाजन का खुलकर विरोध क्यों नहीं किया था? क्या यह राजनीतिक थकान थी, साम्प्रदायिक हिंसा के दबाव में लिया गया समझौता था? या फिर सत्ता तक शीघ्र पहुंचने की अधीरता थी? जो भी कारण रहे हों, उनका परिणाम आज भी भारत भुगत रहा है।

देश के विभाजन के दर्द को कभी भुलाया नहीं जा सकता है। अपनी आजादी का जश्न मनाते हुए एक कृतज्ञ राष्ट्र के रूप में हमें अपनी मातृभूमि के उन बेटे-बेटियों को 14 अगस्त के दिन विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस पर अवश्य नमन करना चाहिए, जिन्हें हिंसा के उन्माद में अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी थी। विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस हमें भेदभाव, वैमनस्य और दुर्भावना के जहर को खत्म करने के लिए न केवल प्रेरित करता है बल्कि इससे देश की एकता, सामाजिक सद्भाव और मानवीय संवेदनाएं भी मजबूत होंगी।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

वर्कफोर्स में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने बढ़ाने की जरुरत

तृप्ति सिंघल सोमानी

गौर करने वाली बात यह है कि भले ही अब पहले से अधिक महिलाएं ग्रेजुएट हो रही हैं, लेकिन फॉर्मल वर्कफोर्स में उनकी भागीदारी अभी भी अपेक्षाकृत कम है। डब्ल्यूईपी डेटा के अनुसार, सभी ग्रेजुएट्स में से लगभग आधी हिस्सेदारी के बावजूद केवल 20 फीसदी महिलाएं ही फॉर्मल एम्प्लॉयमेंट या एंटरप्रेन्योरशिप में प्रवेश कर पाती हैं। यहां तक कि ग्रेजुएशन में सबसे अच्छा प्रदर्शन करने वालीं महिलाएं भी कभी-कभी वर्कफोर्स का हिस्सा नहीं बन पातीं। शिक्षा और नौकरी के बीच का यह अंतर महिलाओं की क्षमता का प्रतिबिंब नहीं है, बल्कि ऐसे माहौल को दशार्ता करता है, जहां महिलाओं को अपनी प्रोफेशनल यात्रा को आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त सपोर्ट नहीं मिलता। एजुकेशनल इंस्टिट्यूट अक्सर अपने यहां बढ़ती स्टूडेंट्स की संख्या का जश्न मनाते हैं, लेकिन उतने उत्साह के साथ शायद ही कन्वर्शन रेट को ट्रैक करते हैं।

भारत ने जेंडर इक्विटी की दिशा में काफी कुछ किया है, लेकिन अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। देश ने महिला साक्षरता और हायर एजुकेशन में महत्वपूर्ण प्रगति की है। हालांकि, ये उपलब्धियां अभी तक प्रपोशनल वर्क फोर्स पार्टिसिपेशन में तब्दील नहीं हुई हैं। हालिया डब्ल्यूईपी (वुमन एम्पावरमेंट प्रिंसिपल्स) लेबर फोर्स विश्लेषण के अनुसार, 2024 में महिला साक्षरता दर 77% से अधिक पहुंच गई थी और महिलाएं अब उच्च शिक्षा में महिलाओं का हिस्सा करीब 48 प्रतिशत हैं। इसके बावजूद फीमेल लेबर फोर्स पार्टिसिपेशन रेट 2023-24 में 41.7 फीसदी थी, जो वैश्विक औसत से काफी नीचे है। यह आंकड़ा शिक्षा और रोजगार के बीच एक बड़े अंतर को उजागर करता है।

गौर करने वाली बात यह है कि भले ही अब पहले से अधिक महिलाएं ग्रेजुएट हो रही हैं, लेकिन फॉर्मल वर्कफोर्स में उनकी भागीदारी अभी भी अपेक्षाकृत कम है। डब्ल्यूईपी डेटा के अनुसार, सभी ग्रेजुएट्स में से लगभग आधी हिस्सेदारी के बावजूद केवल 20 फीसदी महिलाएं ही फॉर्मल एम्प्लॉयमेंट या एंटरप्रेन्योरशिप में प्रवेश कर पाती हैं। यहां तक कि ग्रेजुएशन में सबसे अच्छा प्रदर्शन करने वालीं महिलाएं भी कभी-कभी वर्कफोर्स का हिस्सा नहीं बन पातीं। शिक्षा और नौकरी के बीच का यह अंतर महिलाओं की क्षमता का प्रतिबिंब नहीं है, बल्कि ऐसे माहौल को दशार्ता करता है, जहां महिलाओं को अपनी प्रोफेशनल यात्रा को आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त सपोर्ट नहीं मिलता। एजुकेशनल इंस्टिट्यूट अक्सर अपने यहां बढ़ती स्टूडेंट्स की संख्या का जश्न मनाते हैं, लेकिन उतने उत्साह के साथ शायद ही कन्वर्शन रेट को ट्रैक करते हैं।

वूमेनोवेटर में हम नीतिगत बदलाव की पुरजोर वकालत करते हैं। भारत के नेशनल रैंकिंग फ्रेमवर्क में कॉलेजों और विश्वविद्यालयों की रैंकिंग में एक प्रमुख पैरामीटर के रूप में कन्वर्शन रेट को शामिल किया जाना चाहिए। संस्थानों का मूल्यांकन न केवल एकेडमिक प्रदर्शन के आधार पर बल्कि महिलाओं को वर्क फोर्स में शामिल करने की उनकी क्षमता के आधार पर किया जाना चाहिए। यदि ऐसा सही तरीके से होता है, तो यह न केवल फीमेल एम्प्लॉयमेंट रेशियो में सुधार करेगा बल्कि भारत की जीडीपी वृद्धि में भी सार्थक योगदान देगा। फीमेल वर्कफोर्स पार्टिसिपेशन में हालिया वृद्धि उल्लेखनीय है, लेकिन इसका अधिकांश हिस्सा सेल्फ-एम्प्लॉयमेंट या अनपेड फैमिली वर्क के कारण है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसा ज्यादा देखने को मिलता है। इस तरह की भागीदारी अक्सर वित्तीय स्थिरता और विकास के अवसरों में कमी की वजह बनती है। शहरी क्षेत्रों में, लैंगिक असमानताएं अभी भी मौजूद हैं। एंट्री लेवल की भूमिकाओं में महिलाओं की हिस्सेदारी 31 फीसदी हैं, जबकि लीडरशिप पोजीशन में यह आंकड़ा महज 13 फीसदी है।

वूमेनोवेटर में हम इस तस्वीर को बदलने के लिए काम कर रहे हैं। हमारा मेंटर-मेंटी प्रोग्राम पहले ही 1000 से ज्यादा अनुभवी पेशेवरों को विभिन्न क्षेत्रों की महत्वाकांक्षी महिलाओं से जोड़ चुका है, जिसका सीधा असर 300 से ज्यादा महिलाओं के करियर पर पड़ा है। हमारा मानना है कि वास्तविक सशक्तिकरण कम्युनिटी, मेंटरशिप और सपोर्ट से उत्पन्न होता है, और हम एक ऐसा इकोसिस्टम बना रहे हैं जो सुनिश्चित करता है कि महिलाएं अपनी प्रोफेशनल जर्नी में कभी अकेली न रहें। जमीनी स्तर पर शिक्षा और नौकरी के इस अंतर को पाटने के लिए, वूमेनोवेटर में हम कॉलेजों में सेल स्थापित करने का लक्ष्य लेकर चल रहे हैं। यह एक तरह का डेडिकेटेड संगठन है, जो मेंटरशिप, करियर काउंसलिंग और एंटरप्रेन्योरियल ट्रेनिंग प्रदान करता है। ये सेल पीयर-टू-पीयर नेटवर्क को बढ़ावा देते हैं और युवा महिलाओं को आत्मविश्वास से वर्कफोर्स में प्रवेश करने और आगे बढ़ने के लिए तैयार करते हैं।

इसके अतिरिक्त, हमने महिलाओं को लीडरशिप और कम्युनिटी-बिल्डिंग स्किल्स से लैस करने के लिए डिजाइन किया गया एक कम्युनिटी डेवलपमेंट एंड लीडरशिप कोर्स भी शुरू किया है। यह कोर्स न केवल प्रतिभागियों को अपनी पहचान विकसित करने में मदद करता है, बल्कि उन्हें दूसरों को ऊपर उठाने में भी सक्षम बनाता है, ताकि सशक्तिकरण का प्रभाव विभिन्न क्षेत्रों तक महसूस किया जा सके।

भारत जैसे देश में जहां सामाजिक और संरचनात्मक बाधाएं अभी भी महिलाओं की प्रोफेशनल प्रगति को सीमित करती हैं, वूमेनोवेटर एक रिलेवेंट, स्केलेबल और इम्पैक्ट-ड्रिवेन सल्यूशन प्रदान करता है। हमारे प्रयास प्रत्यक्ष तौर पर राष्ट्रीय आर्थिक लक्ष्यों के साथ संरेखित हैं और क्षमता को भागीदारी में बदलने की प्रतिबद्धता को दशार्ते हैं। शोध से पता चलता है कि रोजगार में लैंगिक अंतर यानी जेंडर गैप को पाटने से 2025 तक भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 770 अरब डॉलर की वृद्धि हो सकती है। यदि भारत अपने 5 ट्रिलियन डॉलर के आर्थिक लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है, तो वह महिलाओं के रूप में अपनी आधी प्रतिभावान आबादी को पीछे नहीं छोड़ सकता। महिलाओं को वर्कफोर्स का हिस्सा बनने और लीडरशिप की भूमिका निभाने के लिए सशक्त बनाना महज एक सामाजिक अनिवार्यता नहीं है- यह एक आर्थिक आवश्यकता भी है।

वूमेनोवेटर केवल बदलाव की वकालत नहीं कर रहा- हम खुद ऐसे रास्ते निर्मित कर रहे हैं जो इसे संभव बनाते हैं। मेंटरशिप, पॉलिसी एडवोकेसी और कम्युनिटी लीडरशिप के माध्यम से, हम वर्कफोर्स में भारतीय महिलाओं की भूमिका को फिर से परिभाषित करने के लिए काम कर रहे हैं। इस अंतर को पाटने का समय अब आ गया है, और इसकी शुरूआत सफलता को मापने के लिए कन्वर्शन रेट को आवश्यक पैमाना बनाने से होती है।

खेल विधेयक
भारतीय खेलों में सुधार

आखिरकार, लंबे समय से उपेक्षित भारतीय खेल जगत में प्रशासनिक सुधार आकार लेने लगे हैं। यह कोई रहस्य नहीं है कि वैश्विक आयोजनों में भारत के पदक उसके एथलीटों की वास्तविक क्षमता से बहुत कम हैं। प्रतिभाओं का एक विशाल भंडार अक्सर नौकरशाही की लालफीताशाही के बोझ तले दब जाता है, जबकि खिलाड़ी बुनियादी सुविधाओं के लिए संघर्ष करते हैं, जबकि शासी निकाय उदार बजट पर बैठे हैं। एक से ज्यादा मौकों पर, अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में भारत के दल में एथलीटों से ज्यादा अधिकारी रहे हैं, जो व्यवस्था में विषम प्राथमिकताओं को उजागर करता है। अब, ऐसा प्रतीत होता है कि बदलाव आखिरकार क्षितिज पर है, या कम से कम, इस दिशा में पहले वास्तविक कदम उठाए जा रहे हैं।

लोकसभा ने 11 अगस्त, 2025 को राष्ट्रीय डोपिंग रोधी (संशोधन) विधेयक के साथ-साथ बहुप्रतीक्षित राष्ट्रीय खेल प्रशासन विधेयक को भी पारित कर दिया, जिसे खेल मंत्री मनसुख मंडाविया ने स्वतंत्रता के बाद से भारतीय खेलों में सबसे बड़ा सुधार बताया। विधेयक पेश किए जाने के समय अधिकांश विपक्षी सदस्य अनुपस्थित थे, क्योंकि उन्हें चुनाव आयोग तक मार्च के दौरान हिरासत में लिया गया था। मंडाविया ने खेल संचालन विधेयक के पारित होने को एक परिवर्तनकारी क्षण बताया, जो जवाबदेही सुनिश्चित करेगा, न्याय प्रदान करेगा और खेल संघों में शासन के उच्चतम मानकों को स्थापित करेगा।

यह विधेयक देश में खेलों के संचालन के तरीके को नया रूप देने के उद्देश्य से एक व्यापक संस्थागत बदलाव का प्रस्ताव करता है। यह एक राष्ट्रीय खेल बोर्ड का गठन करता है, जिसके पास खेल निकायों, जिनमें क्रिकेट का शक्तिशाली संगठन बीसीसीआई भी शामिल है, को उनके शासन मानदंडों, पारदर्शिता और नैतिक आचरण के पालन के आधार पर मान्यता देने, वित्त पोषित करने या यहां तक कि मान्यता रद्द करने का अधिकार है। यह विवादों को शीघ्रता और निष्पक्षता से निपटाने के लिए सिविल न्यायालयों के अधिकारों वाला एक राष्ट्रीय खेल न्यायाधिकरण भी स्थापित करता है, जिसकी अपील केवल सर्वोच्च न्यायालय में ही की जा सकती है।

पारदर्शिता एक केंद्रीय विषय है, मान्यता प्राप्त खेल निकायों को सूचना के अधिकार अधिनियम के दायरे में लाया गया है, जिससे उनके कामकाज की जनता द्वारा जांच की जा सकेगी। हालांकि हाल के संशोधनों ने कुछ छूट प्रदान की हैं, लेकिन खुलेपन की यह पहल उन अपारदर्शी प्रथाओं से एक स्पष्ट बदलाव है जो लंबे समय से भारतीय खेल प्रशासन को त्रस्त करती रही हैं।

इसके अलावा, यह विधेयक शीर्ष पदाधिकारियों पर आयु और कार्यकाल की सख़्त सीमाएं लगाता है, उनके कुल कार्यकाल को 12 वर्ष तक सीमित करता है और आयु सीमा 70 वर्ष निर्धारित करता है, जिसे वैश्विक मानदंडों के अनुरूप विशेष मामलों में 75 वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है। कार्यकारी समितियां अब अधिक समावेशी होंगी, जिनमें महिलाओं और प्रतिष्ठित खिलाड़ियों का अनिवार्य प्रतिनिधित्व होगा, जिससे यह सुनिश्चित होगा कि निर्णय लेने की प्रक्रिया विविधता और जीवंत खेल अनुभव, दोनों को प्रतिबिंबित करे।

संरचनात्मक सुधारों से परे, यह विधेयक वैश्विक खेल मंच पर भारत की बढ़ती महत्वाकांक्षा का संकेत देता है। शासन को पेशेवर बनाकर और अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप बनाकर, देश ओलंपिक सहित प्रमुख आयोजनों की मेजबानी के लिए अपने दावे को मजबूत करता है। यदि प्रभावी ढंग से लागू किया जाता है, तो राष्ट्रीय खेल प्रशासन विधेयक एक नए युग की शुरूआत कर सकता है जहां पारदर्शिता, निष्पक्षता और व्यावसायिकता संरक्षण और अस्पष्टता का स्थान ले लेगी, जिससे भारतीय एथलीटों और महासंघों को उच्चतम स्तरों पर प्रतिस्पर्धा करने और उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए आवश्यक ठोस आधार मिलेगा।

मानचित्रों से विमर्श अधिक महत्वपूर्ण

आज वैश्विक शक्ति हथियारों या सीमाओं तक सीमित नहीं है। यह कहानियों, आख्यानों को आकार देने और किसी राष्ट्र के दीर्घकालिक हितों की पूर्ति के लिए उन धारणाओं को कुशलतापूर्वक निर्देशित करने के इर्द-गिर्द घूमती है।

चैतन्य के प्रसाद
लेखक, पूर्व सिविल सेवक हैं।

आज जब हम वैश्विक शक्ति की बात करते हैं, तो हम अब सिर्फ. हथियारों या सीमाओं की बात नहीं करते, हम कहानियों की बात करते हैं। हम इस बारे में बात करते हैं कि कहानी को कौन नियंत्रित करता है। भू-रणनीतिक संचार मूलतः यही हैः वैश्विक मानस में किसी देश की छवि को आकार देना और उस धारणा को उसके पक्ष में काम में लाना।

लेकिन यह कोई नए जमाने का प्रचलित शब्द नहीं है। भू-राजनीतिक संचार हमेशा से रहा है, बस समय के साथ विकसित होता आया है। पहले, इसका मतलब था देश अखबारों के जरिए बयान जारी करते थे या प्रधानमंत्री रेडियो पर राष्ट्र को संबोधित करते थे। द्वितीय विश्व युद्ध के दौर के प्रचार या शीत युद्ध के शॉर्टवेव रेडियो स्टेशनों जैसे वॉयस ऑफ अमेरिका और बीबीसी वर्ल्ड सर्विस के बारे में सोचिए। उस समय, सब कुछ नियंत्रण, एक राष्ट्र, एक कहानी, एक चैनल के बारे में था। और सच कहें तो, यह कारगर रहा। खास तौर पर रेडियो ने एक बड़ा बदलाव लाया। इसने सीमाओं को पार किया, सेंसरशिप को दरकिनार किया और सीधे घरों तक पहुंच बनाई।

आज भी, कुछ संघर्ष क्षेत्रों और दूरदराज के इलाकों में, रेडियो अजीब तरह से प्रासंगिक बना हुआ है, ज्यादातर इसलिए क्योंकि इसे साक्षरता, इंटरनेट या उच्च बैंडविड्थ की जरूरत नहीं है। लेकिन इसका प्रभाव कम होता जा रहा है, क्योंकि दुनिया अब सिर्फ.जानकारी का उपभोग नहीं करती, बल्कि हम उससे जुड़ते भी हैं।

हैशटैग और ट्रेंडिंग रील्स से पहले, राय बनाने का काम अक्सर संपादकीय, विचार-पत्रों और विशिष्ट पत्रिकाओं के जरिए होता था। ये प्लेटफॉर्म अब भी मायने रखते हैं; नीति-निर्धारक मंडलों, अकादमिक मंचों और उन पाठकों के बीच इनका महत्व है जो शोरगुल के बजाय तर्कपूर्ण, आँकड़ों पर आधारित राय चाहते हैं। कई मायनों में, ये धीमी गति से जलने वाली आग की तरह काम करते हैंः दिखावटी नहीं, बल्कि दीर्घकालिक धारणाओं को आकार देने और अभिजात वर्ग के निर्णय लेने को प्रभावित करने में सक्षम। आज, भू-रणनीतिक संचार एक अनूठा मैट्रिक्स बन गया है, जो पुराने जमाने की विश्वसनीयता और नए जमाने की तात्कालिकता का मिश्रण है। एक तरफ, आपके पास गहन थिंक-टैंक रिपोर्ट, नीतिगत संक्षिप्त विवरण और विद्वत्तापूर्ण विश्लेषण हैं; दूसरी तरफ, तेज-तर्रार सोशल मीडिया हमले जो कुछ ही घंटों में वैश्विक आख्यानों को बदल सकते हैं।

दोनों एक साथ मौजूद हैं। दोनों प्रभाव डालते हैं। पॉडकास्ट, यूट्यूब कूटनीति, दूतावासों द्वारा संचालित ट्विटर हैंडल और नेताओं की नागरिकों से मुलाकात की वायरल रीलों के युग में प्रवेश करें। संचार अब केवल प्रेस विज्ञप्तियां और भाषण नहीं रह गया है, बल्कि यह सौंदर्यबोध, प्रासंगिकता और डिजिटल प्रवाह है।

उदाहरण के लिए, पॉडकास्ट गहराई, विश्लेषण और कहानी कहने की ऐसी क्षमता प्रदान करते हैं जो पुराने माध्यम कभी नहीं कर सकते थे। लेकिन वे एक निश्चित स्तर की मीडिया साक्षरता की अपेक्षा रखते हैं। यदि आप राय को तथ्य से, या कथन को हेरफेर से अलग नहीं कर सकते, तो वे जितनी आसानी से जानकारी देते हैं उतनी ही आसानी से गुमराह भी कर सकते हैं। वैश्विक दक्षिण के अधिकांश हिस्सों में, जहाँ डिजिटल साक्षरता अभी भी असमान है, यह एक बड़ी बाधा बनी हुई है। विरोधाभास स्पष्ट हैः नए माध्यम अधिक शक्तिशाली हैं, लेकिन हमेशा अधिक सुलभ नहीं होते। रेडियो के विपरीत, जिसके लिए केवल एक कार्यशील उपकरण और सिग्नल की आवश्यकता होती थी, डिजिटल मीडिया स्थिर इंटरनेट, तकनीकी पहुँच और एक अव्यवस्थित, तेज-तर्रार वातावरण में सूचना को संसाधित करने की क्षमता की अपेक्षा करता है।

आज के भू-रणनीतिक संचार शस्त्रागार में सबसे ज्यादा दिखाई देने वाला हथियार सोशल मीडिया का धमाका है, जिसमें समय-समय पर सामग्री की बौछार की जाती है ताकि फीड, ट्रेंड और सुर्खियों पर छा जाए। चाहे वह विदेश नीति की पहल की शुरूआत हो, आपदा राहत कूटनीति हो, या सांस्कृतिक पहुंच हो, उद्देश्य एक ही हैः प्रतिस्पर्धी आख्यान उभरने से पहले बातचीत को संतृप्त कर देना।

लेकिन इसका एक दूसरा पहलू भी है, फर्जी खबरों का खतरा। गलत सूचनाएं तथ्य-जांच से ज्यादा तेजी से फैलती हैं, और भू-राजनीति में, कुछ घंटों की झूठी कहानियां भी गठबंधनों को बदल सकती हैं, तनाव बढ़ा सकती हैं, या प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचा सकती हैं। एक बार जब कोई भ्रामक खबर लोकप्रिय हो जाती है, तो उसे सही करना पानी से स्याही निकालने जैसा होता है, यह दाग छोड़ जाती है। यह अच्छे विश्लेषण को अपरिहार्य बना देता है। पहले स्थान पर आने की होड़ में, बहुत से लोग यह बात भूल जाते हैं कि सही होने से ही विश्वसनीयता बनी रहती है।

पहले, राज्य लोगों से बात करते थे। अब उनसे उनके साथ बात करने की उम्मीद की जाती है। नागरिक अब निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं हैं, वे प्रतिक्रिया देते हैं, आलोचना करते हैं और जनमत को आकार देते हैं। सरकारें अब केवल आधिकारिक बयानों पर निर्भर नहीं रह सकतीं, उन्हें संदेश पहुंचाने के लिए इंस्टाग्राम स्टोरीज, मीम्स, प्रभावशाली लोगों के सहयोग और कभी-कभी हास्य का भी सहारा लेना पड़ता है।

और यह सिर्फ नागरिक ही नहीं, बल्कि पूरा वैश्विक दर्शक वर्ग देख रहा है। एक गलती मिनटों में वायरल हो जाती है; सही समय पर उठाया गया एक कदम रातोंरात सॉफ्ट पावर पॉइंट हासिल कर सकता है। अंतरराष्ट्रीय विकास साझेदारियां, शैक्षिक आदान-प्रदान, यहां तक कि जलवायु परिवर्तन से जुड़े संकल्प भी अब किसी देश की वैश्विक कहानी के हिस्से के रूप में गढ़े और प्रदर्शित किए जा रहे हैं।

आज आप युवाओं, तकनीक और संस्कृति के बारे में बात किए बिना प्रभाव की बात नहीं कर सकते। यही वह तिकड़ी है जहाँ कहानियाँ गढ़ी जाती हैं, उन पर बहस की जाती है और उन्हें बढ़ाया जाता है। लेकिन युवा ऑनलाइन हेरफेर और ध्रुवीकृत प्रतिध्वनि कक्षों के प्रति सबसे ज्यादा संवेदनशील होते हैं।

इसलिए मीडिया साक्षरता, न कि सिर्फ. पहुँच, जरूरी है। अगर हम चाहते हैं कि अगली पीढ़ी वैश्विक नागरिक बने जो जटिलताओं से निपट सके, तो उन्हें यह पूछने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिएः यह कौन कह रहा है? क्यों? क्या कमी है? और कौन से सबूत इसका समर्थन करते हैं?

सॉफ्ट पावर, चाहे सांस्कृतिक निर्यात के माध्यम से हो, शैक्षणिक आदान-प्रदान के माध्यम से हो, या राजनयिक उपस्थिति के माध्यम से हो, अब ₹अच्छा-होनाः₹ नहीं रह गया है। यह रणनीतिक प्रभाव का एक सक्रिय स्तंभ है। असली बढ़त एक ऐसी राष्ट्रीय कहानी कहने में है जो सीमाओं के पार भी गूंजती हो और साथ ही घर में भी प्रामाणिक बनी रहे।

देशों, खासकर ग्लोबल साउथ के देशों को बुनियादी ढांचे के साथ-साथ रणनीतिक संचार क्षमता में भी निवेश करना चाहिए। इसका मतलब है राजनयिकों, नौकरशाहों और युवाओं को प्रभाव-आधारित संचार का प्रशिक्षण देना, शिक्षा प्रणालियों में संचार और मीडिया साक्षरता मॉड्यूल को शामिल करना, तथ्य-आधारित विश्लेषण के लिए विश्वसनीय मंचों को मजबूत करना, स्थानीय कहानीकारों को वैश्विक आख्यानों को आकार देने के लिए प्रोत्साहित करना, और राष्ट्रीय हितों को विकृत करने के बजाय उन्हें बढ़ाने के लिए तकनीक का उपयोग करना।

भू-रणनीतिक संचार एक उद्देश्यपूर्ण कहानी कहने का तरीका है। इसे अपने दर्शकों के साथ विकसित होना चाहिए, चाहे वह ग्रामीण बिहार में धूल भरे ट्रांजिस्टर के माध्यम से हो या मुंबई में ट्रेंडिंग इंस्टाग्राम रील के माध्यम से। प्रभाव की दौड़ में, विजेता वे होंगे जो विश्वसनीयता को चपलता के साथ, गहराई को पहुँच के साथ मिला सकते हैं।

क्योंकि आज, शक्ति केवल सेनाओं या जीडीपी के बारे में नहीं है, यह इस बारे में है कि कौन वास्तविकता को ढाल सकता है, उसे बनाए रख सकता है और उसे विकृत होने से बचा सकता है। और अगर हम समझदार हैं, तो हम अगली पीढ़ी को न केवल जानकारी का उपभोग करने के लिए, बल्कि उसे चुनौती देने के लिए भी प्रशिक्षित करेंगे। क्योंकि कल के युद्ध सीमाओं पर नहीं लड़े जाएंगे, वे ब्राउजरों में लड़े जाएंगे।

विकास के लिए टिकाऊ नगर नियोजन आवश्यक

विकास के साथ, अर्थव्यवस्थाएं कृषि से उद्योग और फिर सेवाओं की ओर व्यावसायिक बदलाव देख रही हैं, जो विकास, उत्पादकता और नई तकनीकों के उद्भव का संकेत है।

कजलीन कौर
लेखिका, दिल्ली विवि में सह प्रोफेसर हैं।

विश्व बैंक की एक हालिया रिपोर्ट (डब्ल्यूबीआर) के अनुसार, भारत की शहरी आबादी 2050 तक लगभग दोगुनी होकर 95.1 करोड़ हो जाने की उम्मीद है, जो भारत की कुल आबादी का 40 प्रतिशत है। शहर देश के कुल भूभाग का केवल तीन प्रतिशत हिस्सा कवर करते हैं, लेकिन सकल घरेलू उत्पाद में 60 प्रतिशत का योगदान करते हैं।

2030 तक, दस लाख से अधिक आबादी वाले 87 शहर होंगे, और अनुमान है कि ये शहर सभी नए रोजगार का 70 प्रतिशत उत्पन्न करेंगे। आशावादी विकास संभावनाओं के साथ, इस तीव्र बदलाव से 2030 तक भारत की प्रति व्यक्ति आय 2008 की तुलना में चौगुनी होने की उम्मीद है। यह भारत में शहरीकरण की ओर एक संरचनात्मक परिवर्तन का संकेत देता है, जिसके लिए एक ऐसी राष्ट्रीय योजना की तत्काल आवश्यकता है जो एक सुसंगठित शहरी नेटवर्क का निर्माण करे, जो विकसित भारत के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

विकास के साथ, अर्थव्यवस्थाएं कृषि से उद्योग और फिर सेवाओं की ओर व्यावसायिक बदलाव देख रही हैं, जो विकास, उत्पादकता और नई तकनीकों के उद्भव का संकेत है। इसलिए, संतुलित विकास के साथ, शहरीकरण समग्र विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो आगे और पीछे, दोनों तरह के संबंधों की प्रबल संभावनाएं प्रदान करता है।

अग्रगामी संबंध अन्य विकसित देशों में उपलब्ध उन्नत बुनियादी ढांचे और सुविधाओं को अपनाने से संबंधित हैं, जो एक वैश्विक दृष्टिकोण और बेहतर अवसर प्रदान करते हैं। पश्चगामी संबंध, क्योंकि शहरी विकास आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों को विकास के अवसर प्रदान करता है, नौकरियों, बाजारों और शहरी बुनियादी ढांचे तक बेहतर पहुंच प्रदान करता है।

आज बड़े शहरी केंद्रों से सटी ग्रामीण आबादी की अनुमानित मासिक आय ग्रामीण औसत से 10 से 20 प्रतिशत अधिक है। विश्व ग्रामीण विकास रिपोर्ट का दावा है कि भारत में शहरी विकास से लगभग 20 करोड़ लोग लाभान्वित होते हैं। इसके अतिरिक्त, शहरी क्षेत्र विकास लागतों के वित्तपोषण के लिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह भारत के कर राजस्व में 80 से 85 प्रतिशत का योगदान देता है। हालाँकि, भारत इस प्रक्रिया में पिछड़ रहा है, क्योंकि शहरी विकास के प्रति उसका वर्तमान दृष्टिकोण बढ़ती जनसंख्या के बोझ और विभिन्न सेवाओं की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

सभी शहरों में, चाहे उनका आकार कुछ भी हो, शहरों की ओर बढ़ते जनसंख्या प्रवास के साथ सुविधाओं और प्रावधानों की जरूरत में कई गुना वृद्धि होने की उम्मीद है। विडंबना यह है कि शहरी बुनियादी ढांचे में निवेश अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार बहुत कम है और अपने कई निवासियों के लिए बुनियादी जीवन स्तर भी प्रदान करने में विफल रहता है। आवास, पोर्टेबल जल आपूर्ति, स्वच्छता और सीवेज उपचार जैसी बुनियादी सुविधाओं के प्रावधान में कमियां नियोजित शहरी मॉडलिंग में भारी खामियों को दर्शाती हैं।

इसके अतिरिक्त, अन्य गुणात्मक कारक जैसे कि अनियंत्रित निजी वाहन स्वामित्व के कारण यातायात की भीड़-भाड़ और उसके परिणामस्वरूप प्रदूषण का स्तर, शिक्षा और चिकित्सा सुविधाओं का अभाव, शहरीकरण की तेज गति को बनाए रखने के लिए आवश्यक औसत से भी कम हैं।

भारत को वर्ष 2036 तक बुनियादी ढांचे में 840 अरब डॉलर का निवेश करना होगा, जो औसतन 55 अरब डॉलर या सकल घरेलू उत्पाद का 1.2 प्रतिशत प्रति वर्ष है, जो 2011 और 2018 के बीच खर्च किए गए मात्र 0.6 प्रतिशत से दोगुना है।

केंद्र और राज्य सरकारें शहरी बुनियादी ढांचे के 72 प्रतिशत का वित्तपोषण करती हैं, और निजी क्षेत्र का योगदान नगण्य मात्र पांच प्रतिशत है। 2047 तक आवश्यक लगभग 70 प्रतिशत शहरी बुनियादी ढांचे का निर्माण अभी बाकी है, इसलिए निजी क्षेत्र को इस कमी को पूरा करने की आवश्यकता है, और लचीले बुनियादी ढांचे में निवेश के लिए पूंजी जुटाने हेतु सार्वजनिक-निजी सहयोग आवश्यक है।

डब्ल्यूबीआर ने भारत में लचीले और समृद्ध शहरों की ओर शीर्षक से 2050 तक 2.4 ट्रिलियन डॉलर और 2070 तक 10.9 ट्रिलियन डॉलर के निवेश की आवश्यकता का अनुमान लगाया है। भारत सरकार शहरीकरण की क्षमता का दोहन करने के लिए विभिन्न योजनाओं पर काम कर रही है।

इसमें स्मार्ट सिटी मिशन, अटल कायाकल्प और शहरी परिवर्तन मिशन और प्रधानमंत्री आवास योजना शामिल हैं। एक अनुकूल और व्यापक शहरी बुनियादी ढांचा नीति आवश्यक है, जो टिकाऊ, जलवायु-लचीले और समावेशी शहरों के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण होगी जो अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ा सकें।

आप की बात

अमेरिका का दोगलापन

विश्व भर को लोकतंत्र की नसीहत देने वाला एवं सबसे पुराने लोकतंत्र होने का दम्भ भरने वाला वाला अमेरिका यदि पाकिस्तान की चुनी हुई लोकतांत्रिक सरकार के प्रमुख को महत्व देने की बजाय यदि वहां के सेना प्रमुख को अधिक महत्व दे रहा है तो उससे अमेरिका का दोगलापन ही उजागर होता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि अमेरिका यह मान चुका है कि सत्ता की बागडोर सेना ही सम्हालती है तथा वहां की चुनी हुई सरकार सेना के हाथों की कठपुतली मात्र है। यानी अमेरिका को केवल अपने स्वार्थों से मतलब है। इसीलिए उसने पाकिस्तान में सेना की हुकूमत का कभी विरोध नहीं किया। इसी अमेरिकी शह के कारण पाकिस्तानी सेना प्रमुख मुनीर उसी की धरती से भारत के बांधो को मिसाइल से उडा देने तथा परमाणु युद्ध के जरिए आधी दुनिया को अपने साथ ले डूबने की धमकी देने की हिमाकत कर रहा है । आश्चर्य इस बात का है कि उनकी इस खुली एवं गंभीर धमकी पर अमेरिका की प्रेस अथवा किसी भी राजनेता ने आपत्ति नहीं ली। पाकिस्तान उस दादा पहलवान जैसा व्यवहार कर है जो शारीरिक रुप से क्षीण है तथा मोहल्ले में तमंचा लहराता घूमता पुरे मोहल्ले को धनकाता है। लेकिन अमेरिका जैसा चौधरी उसकी हरकतों को नजरअंदाज कर रहा है।

– **विमलेश पगारिया**, बदनावर, मप्र

अफ़वाहों का बाजार गर्म

सोशल मीडिया पर चल रहा है कि पूर्व चुनाव आयुक्त राजीव कुमार का कोई अता पता नहीं है। शिवसेना उद्धव गुट के सांसद ने पोस्ट करते हुए लिखा है कि उन्होंने देश छोड़ दिया है, उन्होंने यूरोप के छोटे से देश माल्टा की नागरिकता ले ली है। इसी प्रकार नाना प्रकार की अफवाहों का बाजार गर्म है। हालांकि सोशल मीडिया पर आई खबरों का विश्वास नहीं किया जा सकता है, आंख मूंदकर करना भी नहीं चाहिए। क्योंकि इस पर झूठ का तड़का ज्यादा, सच्चाई का कम होता है। लेकिन पिछले तीन-चार दिनों से 'राजीव कुमार कहां हो!' यह चल रहा है। कहीं कोई खंडन नहीं। कोई भी वास्तविक वस्तुस्थिति बताने को तैयार नहीं है। जो आशंका को सच साबित करने वाला है। भारत सरकार को तथा स्वयं पूर्व चुनाव आयुक्त राजीव कुमार को सामने आकर स्पष्ट करना होगा कि वास्तविकता में राजीव कुमार वर्तमान में कहा है? वे देश में ही है, यह जो कुछ भी चल रहा है, सिर्फ झूठ-मूठ की कोरी अफवाहें है। देश इस समय उनके बारे में वास्तविक स्थिति जानना चाहता है। क्योंकि इस समय देश में मतदाता सूची, लोकसभा के चुनाव 2024 में वोटो की चोरी व हेरा फेरी का बवाल मचा हुआ है। ऐसे में वे पूरी तरह से इस बवाल पर सच्चाई बयां करते हुए सही जवाब दे सकते हैं, इस बवाल का पटाक्षेप भी कर सकते हैं।

– **हेमा हरि उपाध्याय**, अक्षत खाचरोद, उज्जैन

संवेदनहीनता की हद

नागपुर-जबलपुर नेशनल हाईवे पर हुए हादसे का यह मामला न केवल एक परिवार के लिए गहरा व्यक्तिगत दुख है, बल्कि समाज की मानवीय संवेदनाओं के ह्रास का भी कठोर उदाहरण है। अमित की पत्नी की आंखों के सामने ट्रक से टक्कर में मौत हो गई, पर आधे घंटे तक वह सड़क पर खड़े होकर मदद की गुहार लगाता रहा—फिर भी कोई रुका नहीं। यह घटना बताती है कि आजकल लोग दुर्घटना, मारपीट या आपदा के समय पीड़ित की मदद करने की बजाय दूरी बनाकर खड़े रहना या वीडियो बनाना ज्यादा आसान समझते हैं। हमारे समाज में यह संवेदनहीनता कई कारणों से बढ़ रही है—कानूनी झंझट का डर, समय की कमी, और ₹यह मेरी जिम्मेदारी नहीं जैसी सोच। नतीजा यह है कि इंसान अब इंसान के लिए नहीं रुकता, जबकि जानवरों के लिए बहस और आंदोलनों में जोश दिखाया जाता है। यह असंतुलन बताता है कि भावनाएं केवल मुद्दों तक सीमित रह गई हैं, जमीनी कार्यों में नहीं। इसे सुधारने के लिए सबसे पहले ₹गुड सेमैरिटन₹ कानून की जानकारी हर नागरिक तक पहुंचानी होगी, जिसमें मदद करने वालों को कानूनी सुरक्षा दी जाती है। स्कूल और कॉलेज स्तर पर मानवीय मूल्यों और प्राथमिक चिकित्सा की शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए। मीडिया और सोशल प्लेटफॉर्म पर ऐसे अभियानों को बढ़ावा दिया जाए।

– **सुभाष बुड़ावनवाला**, रतलाम

खोजने होंगे स्थायी विकल्प

अमेरिका से शुल्क विवाद के बीच भारत का चीन से व्यापार बढ़ाना वर्तमान समय में मजबुरी हो सकती है इसे स्थायी समाधान समाधान समझा जाना बड़ी गलती साबित हो सकती है। चीन लंबे समय से भारतीय बाजार में दोबारा पैठ बनाने की फिराक में है और ट्रंप प्रशासन के साथ खटपट का लाभ उठाना चाहता है। ड्रैगन के स्वार्थपूर्ण रवैये को देखते हुए भारत के लिए जरूरी है कि वह न अमेरिका पर पूरी तरह निर्भर रहे और न ही चीन पर। इसके बजाय स्वदेशी निर्माण क्षमता को मजबूत करना और आत्मनिर्भरता की दिशा में ठोस कदम उठाना सर्वोत्तम रणनीति होगी। ह्यमेक इन इंडियाह्न, स्थानीय उत्पादन को प्रोत्साहन, तकनीकी नवाचार और वैश्विक बाजारों में विविधता जैसे प्रयास भारत को बाहरी दबावों से बचाएंगे और आर्थिक स्थिरता देंगे। विदेशी बाजारों पर अत्यधिक भरोसा जोखिम भरा है जिसे हालिया हालात ने स्पष्ट कर दिया है। क्षेत्रीय साझेदारियों और घरेलू उत्पादन क्षमता के सहारे भारत एक संतुलित, स्वतंत्र और मजबूत आर्थिक शक्ति बन सकता है। ऐसी स्थिति में न टैरिफ युद्ध और न ही नीतिगत पलटी उसकी प्रगति की राह रोक सकेगी, बल्कि भारत अपने दम पर वैश्विक अर्थव्यवस्था में प्रभावी और आत्मनिर्भर भूमिका निभा सकेगा।

– **अमृतलाल मारू**, इंदौर

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

ट्रंप की नीतियों से एकजुट होता ब्रिक्स

आनंद कुमार
एसोसिएट फेलो, एमपी-आइडीएसए
anandkrai@gmail.com

ट्रंप ब्रिक्स से घृणा करते हैं, पर उनकी ही कार्रवाइयां ब्रिक्स को मजबूत कर रही हैं. यह भावना बढ़ रही है कि ब्रिक्स के साथ मिलकर आर्थिक लचीलापन बढ़ाना और पश्चिमी दबाव का सामना करना जरूरी है. ब्रिक्स के भीतर वैकल्पिक भुगतान तंत्र, साझा मुद्रा या 'ब्रिक्स पे' आदि पर चर्चा हो रही है, जो अमेरिकी वित्तीय प्रभुत्व को चुनौती दे सकती है. ब्रिक्स अब वैश्विक राजनीति में वास्तविक शक्ति गुट बनने की ओर अग्रसर है. एकता अब भी प्रारंभिक और नाजुक है, पुराने मतभेद कायम हैं, लेकिन दिशा स्पष्ट है.

डोनाल्ड ट्रंप जब दूसरे कार्यकाल में व्हाइट हाउस लौटे, तो यह उम्मीद थी कि भारत–अमेरिका संबंध और प्रगाढ़ होंगे, पर ट्रंप की अस्थिर व्यापार नीतियों और टकरावपूर्ण बयानबाजी ने इन उम्मीदों को झटका दिया. उनके द्वारा शुल्क को भू-राजनीतिक हथियार की तरह इस्तेमाल ने न केवल पारंपरिक साझेदारों को असहज किया, बल्कि अनपेक्षित नतीजे भी दिये. जिस ब्रिक्स को कमजोर माना जाता था, वह पहले से अधिक एकजुट दिख रहा है. ब्रिक्स को शुरू में एक अजीब गठबंधन माना जाता था, जिसमें लोकतांत्रिक और अलोकतांत्रिक, दोनों प्रकार की व्यवस्थाएं शामिल थीं. ब्राजील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका के इस समूह का उद्देश्य वैश्विक व्यवस्था में ग्लोबल साउथ की आवाज मजबूत करना था, पर चीन और भारत के बीच सीमा विवाद इसकी प्रभावशीलता को सीमित करते रहे. वर्ष 2024-25 में सऊदी अरब, मिस्र, संयुक्त अरब अमीरात, इथियोपिया, इंडोनेशिया और ईरान के जुड़ने से इसका आर्थिक वजन बढ़ा, पर आलोचकों ने कहा कि इससे समूह और बिखर सकता है, पर ट्रंप की ताजा शुल्क वृद्धि ने वह कर दिखाया, जो वर्षों के शिखर सम्मेलनों से भी नहीं हो पाया- यानी ब्रिक्स के देश साझा रणनीति पर साथ दिख रहे हैं.

बीते दिनों ट्रंप ने भारतीय वस्तुओं पर टैरिफ में 25 फीसदी की अतिरिक्त वृद्धि की. इसके पीछे कारण बताया गया कि भारत रूस से तेल खरीद रहा है. भारत अकेला निशाने पर नहीं है. चीन, ब्राजील और रूस पर भी भारी शुल्क लगाये गये. चीन के साथ यह आर्थिक प्रतिस्पर्धा का हिस्सा था, ब्राजील पर उनके राजनीतिक निर्णयों के लिए और रूस पर यूक्रेन युद्ध को लेकर. ट्रंप ने भारत और रूस को 'मृत अर्थव्यवस्थाएं' कहा तथा ब्रिक्स को 'अमेरिका विरोधी गठबंधन' करार दिया. उन्होंने ब्रिक्स देशों पर अतिरिक्त 10 फीसदी सार्वभौमिक शुल्क लगाने की धमकी दी, जिसे वह अमेरिकी हितों की रक्षा के लिए जरूरी बताते हैं, हालांकि अधिकांश इसे संरक्षणवादी आक्रामकता मानते हैं. ब्रिक्स देशों की प्रतिक्रिया तेज और सामूहिक थी. नेताओं ने इसे बहुपक्षवाद पर हमला और स्वतंत्र देशों की आर्थिक संप्रभुता को कमजोर करने का प्रयास बताया. ब्राजील के राष्ट्रपति ने, जो अभी ब्रिक्स के अध्यक्ष हैं, ट्रंप की एकतरफा नीति की आलोचना की और प्रधानमंत्री मोदी से लंबी बातचीत की. यह औपचारिक संवाद नहीं था, ब्रिक्स की संयुक्त रणनीति की नींव रखने वाला कदम था. लूला ने स्पष्ट किया कि मौजूदा हालात में अमेरिका के साथ व्यापार रियायतों पर बातचीत की कोई इच्छा नहीं है. भारत में चीन के राजदूत ने भारत का समर्थन करते हुए कहा कि शुल्क को आर्थिक हथियार की तरह इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए. चीनी सरकारी मीडिया ने भी संकेत दिये हैं कि अमेरिकी रवैये के चलते चीन-भारत के ठंडे पड़े रिश्तों में गर्माहट आ सकती है.

कुछ वर्ष पहले तक चीन और भारत सीमा विवादों में उलझे थे तथा आपसी अविश्वास गहरा था. अब अमेरिकी शुल्कों के खिलाफ साझा प्रतिरोध ने संवाद का नया अवसर पैदा किया है. मोदी सात वर्ष बाद शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) शिखर सम्मेलन में भाग लेने के लिए चीन जायेंगे, जो उच्च स्तरीय जुड़ाव की इच्छा को दर्शाता है. वहीं पुतिन ने मोदी से सीधे बात कर रणनीतिक और ऊर्जा सहयोग को मजबूत करने की सहमति दी. राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल की रूस यात्रा भी इस दिशा में गंभीरता को रेखांकित करती है. ट्रंप की नीतियों के कारण जटिल हैं, पर ब्रिक्स पर उनका ध्यान डॉलर वर्चस्व की चिंता से भी जुड़ा है. ब्रिक्स के भीतर वैकल्पिक भुगतान तंत्र, साझा मुद्रा या 'ब्रिक्स पे' पर चर्चा हो रही है, जो अमेरिकी वित्तीय प्रभुत्व को चुनौती दे सकती है. रूस पर लगे प्रतिबंध और स्विफ्ट से उसकी निकासी ने इस सोच को बल दिया है. भारत साझा ब्रिक्स मुद्रा की योजना से इनकार करता है, पर डॉलर पर निर्भरता घटाने का समर्थन करता है. विडंबना यह है कि ब्रिक्स की संभावित मुद्रा को लेकर डर ने ट्रंप को क्रिप्टोकरेंसी पर अपना रुख पलटने पर मजबूर कर दिया है. पहले वह बिटकॉइन और डिजिटल संपत्तियों के आलोचक थे, पर अब वह अमेरिका को वैश्विक क्रिप्टो केंद्र बनाने की बात कर रहे हैं. उनकी सरकार ने क्रिप्टो को प्रोत्साहित करने के आदेश जारी किये हैं, जैसे रिटायरमेंट खातों में डिजिटल संपत्तियों की अनुमति और 'स्ट्रेटेजिक बिटकॉइन रिजर्व' का गठन. यह कदम न केवल भविष्य की आर्थिक रणनीति के तौर पर, बल्कि उनके परिवार के निजी व्यावसायिक हितों से भी मेल खाता है. इसे ब्रिक्स की वित्तीय नवाचार योजनाओं का जवाब माना जा रहा है.

भारत के लिए यह स्थिति संतुलन साधने वाली है. नयी दिल्ली ने अमेरिकी शुल्कों को 'अनुचित' बताया है और वाशिंगटन से आग्रह किया है कि वह भारत के ऊर्जा एवं व्यापारिक फैसलों का सम्मान करे, पर नीति-निर्माताओं के बीच यह भावना बढ़ रही है कि ब्रिक्स के साथ मिल कर आर्थिक लचीलापन बढ़ाना और पश्चिमी दबाव का सामना करना जरूरी है, तब जब ग्लोबल साउथ बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था की दिशा में बढ़ रहा है. आज ब्रिक्स विश्व की 46 फीसदी आबादी और 35.6 फीसदी वैश्विक जीडीपी का प्रतिनिधित्व करता है. इसका विस्तारित स्वरूप ऊर्जा उत्पादकों, विनिर्माण केंद्रों और उभरते बाजारों का मिश्रण है. लूला और मोदी पहले ही 2024 के 12 अरब डॉलर के भारत-ब्राजील द्विपक्षीय व्यापार को 2030 तक 20 अरब डॉलर तक बढ़ाने का लक्ष्य तय कर चुके हैं. यह लक्ष्य ब्रिक्स की उस व्यापक महत्वाकांक्षा का हिस्सा है, जिसमें आत्मनिर्भरता और एकतरफा पश्चिमी प्रतिबंधों या शुल्कों से बचाव की रणनीति शामिल है. ट्रंप की शुल्क हथियार नीति से उत्पन्न यह एकजुटता वैश्विक राजनीति के परिदृश्य को बदल रही है. जो भारत-अमेरिका संबंध कभी 21वीं सदी की निर्णायक साझेदारी माने जाते थे, वे अब तनावपूर्ण दौर में हैं. वहीं ब्रिक्स के भीतर संवाद और सहयोग का स्तर वर्षों में सबसे अधिक है. मोदी की लूला और पुतिन से बातचीत, चीन के साथ संभावित कूटनीतिक नरमी, सब भारत की विदेश नीति में पुनर्संतुलन का संकेत है. ब्राजील, रूस और चीन के लिए एक अधिक संगठित ब्रिक्स न केवल आर्थिक, बल्कि वैश्विक शासन संस्थाओं में भी अधिक प्रभाव का साधन है. ट्रंप ब्रिक्स से घृणा करते हैं, पर उनकी ही कार्रवाइयां इसे मजबूत कर रही हैं. जो कभी एक संक्षिप्त नाम मात्र था, वह अब वैश्विक राजनीति में वास्तविक शक्ति गुट बनने की ओर अग्रसर है. एकता अब भी प्रारंभिक और नाजुक है, पुराने मतभेद कायम हैं, लेकिन दिशा स्पष्ट है.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

खुदरा महंगाई में रिकॉर्ड कमी

विगत जुलाई में खुदरा महंगाई दर का लुढ़क कर 1.55 फीसदी पर पहुंच जाना, जो जून, 2017 के बाद सबसे निचला स्तर है, वैश्विक उथल-पुथल के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए राहत भरी खबर है. इससे एक महीने पहले-यानी जून में खुदरा महंगाई दर 2.1 प्रतिशत थी. जनवरी, 2019 के बाद पहली बार खुदरा महंगाई दो फीसदी से नीचे आ गयी है और पिछले छह साल में पहली बार है, जब यह रिजर्व बैंक के दो से छह फीसदी के सहनशीलता दायरे से नीचे आयी है. खाद्य महंगाई दर भी, जिसे खुदरा महंगाई दर (सीपीआइ) से मापा जाता है, जुलाई में जनवरी, 2019 के बाद सबसे निचले स्तर पर पहुंच गयी. राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) के मुताबिक, खुदरा महंगाई दर में यह गिरावट अनाज, दाल, चीनी, अंडे तथा परिवहन सेवाओं आदि की कीमत में कमी के कारण आयी है. खासकर सब्जियों और दालों की कीमतों में एक साल पहले के मुकाबले आयी तेज गिरावट को खुदरा महंगाई दर में कमी की सबसे बड़ी वजह बताया जा रहा है. एक साल पहले की तुलना में सब्जियों की कीमत में 20.69 प्रतिशत और दाल तथा उनके उत्पाद के दाम में 13.76 फीसदी की कमी आयी. मांस और मछली की महंगाई दर में भी गिरावट जारी रही. इस कारण गांवों तथा शहरों, दोनों जगह रहने वाले लोगों को राहत मिली. हालांकि इस दौरान ईंधन और बिजली की महंगाई दर में वृद्धि भी देखी गयी. खुदरा महंगाई दर में रिकॉर्ड गिरावट को देखते हुए रिजर्व बैंक ने पूरे साल की महंगाई का अनुमान घटाकर 3.1 प्रतिशत कर दिया है, जो पहले 3.7 फीसदी था. केंद्रीय बैंक के अनुमान के मुताबिक, औसत महंगाई दूसरी तिमाही में 2.1 फीसदी, तीसरी तिमाही में 3.1 प्रतिशत और चौथी तिमाही में 4.4 फीसदी रहने की उम्मीद है. जबकि अप्रैल से अब तक औसत महंगाई दर तीन प्रतिशत से भी कम रही है. गौरतलब है कि महंगाई दर में कमी लाने और जीडीपी ग्रोथ को मजबूत करने के लिए रिजर्व बैंक की तरफ से फरवरी से जून तक रेपो दर में 100 बेसिस पॉइंट (एक फीसदी) की कमी की गयी. बाजार में इसका असर दिखाई दे रहा है. हालांकि इस महीने रिजर्व बैंक ने मौद्रिक नीति समिति की बैठक में रेपो दर को 5.5 प्रतिशत पर अपरिवर्तित ही रखा. केंद्रीय बैंक फिलहाल 'देखो और इंतजार करो' की नीति अपना रहा है, ताकि अमेरिकी व्यापार नीतियों और ब्याज दर में पिछली कटौतियों के असर का आकलन किया जा सके.

खुदरा महंगाई दर का गिरकर 1.55 फीसदी पर पहुंच जाना वैश्विक उथल-पुथल के बीच राहत भरी खबर है, जिसका अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक असर होगा. यह दर गिरकर पिछले आठ साल के निचले स्तर पर पहुंच गयी है.

देश का बंटवारा और सांप्रदायिक दंगों का दंश

विवेक शुक्ला
वरिष्ठ पत्रकार
vivekshukladelhi@gmail.com

विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस

देश को अपने बंटवारे के समय सांप्रदायिक दंगों का दंश झेलना पड़ा था. महात्मा गांधी हिंसाग्रस्त क्षेत्रों में जाकर शांति स्थापित करने की कोशिश कर रहे थे. नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद भी दंगों को रोकने में लगे हुए थे. काश! जिन्ना ने भी ऐसा किया होता.

मोहम्मद अली जिन्ना सात अगस्त,1947 को दिल्ली से कराची के लिए रवाना हो रहे थे. उनके साथ उनकी बहन फातिमा जिन्ना भी थीं. तब यहां पहाड़गंज, करोल बाग, किशनगंज, सब्जी मंडी आदि में सांप्रदायिक दंगे भड़के हुए थे, पर मजाल है कि उन्होंने दिल्ली को हमेशा-हमेशा के लिए छोड़ने से पहले एक बार भी दंगाग्रस्त क्षेत्रों में जाकर शांति बहाली की जरूरत महसूस की हो. पाकिस्तान के 1970 के दशक के तेज गेंदबाज सिकंदर बख्त का परिवार करोल बाग में रहता था. वे कहते हैं कि दिल्ली में दंगे नहीं भड़कते, तो उनके पुरखे पाकिस्तान नहीं जाते. हालांकि, जिन जिन्ना ने 16 अगस्त, 1946 को 'डायरेक्ट एक्शन डे' का आह्वान किया था, उनसे इस तरह की उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि वह नफरत की आग को बुझाने का काम करेंगे. जिन्ना के आह्वान के चलते कोलकाता में इस दिन शुरू हुई हिंसा में हजारों बेगुनाह मारे गये. इसे 'ग्रेट कलकत्ता किलिंग्स' कहा गया. जिन्ना या मुस्लिम लीग ने खून-खराबे को रोकने के बजाय आग में घी डालने का ही काम किया था. जब कलकत्ता जल रहा था, तब हुसैन शहीद सुहरावर्दी बंगाल के मुख्यमंत्री थे. उन पर आरोप लगे कि उन्होंने पुलिस को निर्देश दे दिये थे कि वे आंखें बंद कर बैठी रहे. इन दंगों में हिंदुओं को विशेष रूप से भारी नुकसान उठाना पड़ा. सुहरावर्दी आगे चलकर पाकिस्तान के प्रधानमंत्री भी बने.

वरिष्ठ लेखक त्रिलोक दीप 1947 के बंटवारे पर बातें करने से बचते हैं. उन्हें बंटवारे ने बहुत गहरे घाव दिये हैं, पर इसरार करने पर बताने लगते हैं कि 'मैं तब दसेक साल का था और अपने माता-पिता के साथ अगस्त, 1947 से कुछ पहले ही रावलपिंडी से लाहौर होता हुआ लखनऊ पहुंच गया था. रावलपिंडी के हालात लगातार खराब हो रहे थे.' भारत का विभाजन हुए एक लंबा अरसा गुजर गया है, पर अब भी हमारे आसपास ऐसे तमाम लोग मौजूद हैं, जिन्होंने उस दौर में हुए दंगों में अपनों को खोया. स्वीडन में रहने वाले पाकिस्तान मूल के राजनीतिक चिंतक डॉ इश्तियाक अहमद अपनी किताब 'द पंजाब ब्लडीड, पार्टिशंड एंड क्लींज्ड' में लिखते हैं कि मोहम्मद अली जिन्ना की बयानबाजी ने सांप्रदायिक तनाव को और बढ़ाया. वे कभी सांप्रदायिक दंगों को रोकने के लिए दंगाइयों के बीच नहीं गये. दरअसल, 1947 में जब विभाजन की प्रक्रिया शुरू हुई, तब पंजाब और बंगाल में हिंसा अपने चरम पर थी. तब जिन्ना का ध्यान मुख्य रूप से सत्ता पर काबिज होना था. उन्होंने 11 अगस्त, 1947 को कराची में दिये अपने भाषण में पाकिस्तान को धर्मनिरपेक्ष मुल्क बनाने का वादा किया, पर जब वे इस तरह का वादा कर रहे थे, तब कराची जल रही थी. वहां अल्पसंख्यकों का कत्लेआम हो रहा था. जिन्ना के पास दंगे रोकने की कोई इच्छाशक्ति नहीं थी. जिन्ना की तरह मुस्लिम लीग में उनके बाद नंबर दो समझे जाने वाले लियाकत अली खान और बाकी नेताओं का भी ध्यान दंगों को रोकने की ओर नहीं था.

पश्चिम दिल्ली के जनकपुरी में 'सुखो खालसा' स्कूल है. प्रख्यात रचानकार भीष्म साहनी ने 'तमस' में 'सुखो' का उल्लेख किया है. यह एक छोटी-सी तहसील है रावलपिंडी जिले की. सुखो बेहतरीन जगह थी. उसका चरित्र समावेशी था, पर देश के बंटवारे के समय आपसी नफरत का दौर था. जो दोस्त और पड़ोसी सदियों से एक-दूसरे के साथ रह रहे थे, वे भी एक-दूसरे की जान के प्यासे हो गये थे. आजादी के ठीक पहले सांप्रदायिकता की बैसाखियां लगाकर पाशविकता का जो नंगा नाच सुखो में खेला गया था, उसका मार्मिक चित्रण भीष्म साहनी ने तमस में किया है. भीष्म साहनी का परिवार भी रावलपिंडी से ही था. वे बताते थे कि सुखो में मुस्लिम लीग का कोई भी नेता दंगों को रोकने के लिए आगे नहीं आया, पर जिन्ना के विपरीत, महात्मा गांधी हिंसाग्रस्त क्षेत्रों में जाकर शांति स्थापित करने की कोशिश कर रहे थे. वे नोआखाली (अब बांग्लादेश) में छह नवंबर, 1946 को पहुंचे. वहां सात सप्ताह रहे और जब वहां से निकले, तो हालात सामान्य हो चुके थे. जिन्ना के 'डायरेक्ट एक्शन' के आह्वान के बाद कोलकाता में भड़की हिंसा का असर नोआखाली में भी हुआ था. गांधी जी की नोआखाली की शांति यात्रा का मुस्लिम लीग के मंत्रियों, कार्यकर्ताओं और स्थानीय मौलवियों ने घोर विरोध किया था. मुख्यमंत्री हुसैन शहीद सुहरावर्दी ने भी गांधी जी से नोआखाली छोड़ने के लिए कहा था. वे नोआखाली के बाद बिहार, कलकत्ता और अंत में दिल्ली के दंगे रोकने के लिए निकल पड़े.

गांधी जी सात सितंबर, 1947 को अंतिम बार कोलकाता से दिल्ली के शाहदरा रेलवे स्टेशन पर उतरे. दिल्ली सांप्रदायिक दंगों के कारण धू-धू कर जल रही थी. गांधी जी दंगा प्रभावित जगहों पर गये, सभाएं कीं और हिंदू, मुस्लिम तथा सिख समुदायों के बीच सुलह की अपील की. उन्होंने 13 जनवरी, 1948 को एक और अनशन शुरू किया, जिसका उद्देश्य दिल्ली में शांति स्थापित करना था. इस अनशन के चलते दिल्ली में अमन की बहाली हो गयी. गांधी जी के अलावा, नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद आदि भी दंगों को रोकने के काम में दिन-रात लगे हुए थे. काश! जिन्ना और मुस्लिम लीग के नेताओं ने भी ऐसा किया होता.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

अपने देश में चीनी नागरिकों के हितों की रक्षा करे ऑस्ट्रेलिया

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

हाल ही में, ऑस्ट्रेलिया में चीनी पर्यटकों और छात्रों के खिलाफ कई हिंसक घटनाएं हुई हैं. ताजा घटना पिछले सप्ताह तस्मानिया के होबार्ट स्थित एक शॉपिंग मॉल में हुई, जहां एक चीनी छात्र पर कई नाबालिगों ने बेरहमी से हमला किया, जिससे वह गंभीर रूप से घायल हो गया और उसे अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा. प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार, हमलावरों ने खुले तौर पर नस्लवादी और भेदभावपूर्ण भाषा का इस्तेमाल किया. मेलबर्न स्थित चीनी महावाणिज्य दूतावास ने ऑस्ट्रेलिया से अपराधियों को कड़ा दंड देने और चीनी नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए ठोस कदम उठाने का आग्रह किया है. यदि एक छात्र और ऑस्ट्रेलियाई उपद्रवियों के एक समूह के बीच हुई इस मुठभेड़ को हम संयोग मान भी लें, पर वर्ष की पहली छमाही में ऑस्ट्रेलिया में कई चीनी नागरिकों पर लगातार हुए हमले को केवल संयोग कह कर खारिज नहीं किया जा सकता. चीनी छात्रों और पर्यटकों को निशाना बनाना, उनके साथ गाली-गलौज और लूटपाट की घटनाएं यहां बार-बार होती रहती हैं. प्रश्न उठता है कि आखिर वे किस तरह के सामाजिक माहौल हैं जो इन युवाओं को अपरिचित चीनी लोगों के साथ हिंसा करने के लिए उकसाते हैं. स्पष्ट रूप से इस समस्या के लिए केवल अपरिपक्व नाबालिगों को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता. आधिकारिक आंकड़े बताते हैं कि ऑस्ट्रेलिया में राष्ट्रव्यापी युवा अपराध में कोई वृद्धि दर्ज नहीं हुई है. चीनी नागरिकों पर हाल में हुए हमले क्षेत्र विशेष के लोगों को चुनकर निशाना बनाये जाने और पूर्व में हुई हिंसा की नकल करने का मिश्रण प्रतीत होते हैं, जिसमें नस्लीय घृणा से और वृद्धि हुई है. कुछ हद तक ये आपराधिक घटनाएं बीते कुछ वर्षों में ऑस्ट्रेलिया की चीन नीति के प्रति कट्टरपंथी होने का परिणाम भी हैं. ऐसे में एक सुरक्षित सामाजिक वातावरण बनाना ऑस्ट्रेलिया के लिए जरूरी है, चीन विरोधी भावनाओं में होती वृद्धि को आंख मूंदकर सहन करने से अंततः ऑस्ट्रेलिया को ही नुकसान पहुंचेगा.

GLOBAL TIMES

बोधि वृक्ष

अस्थिर मनोदशा

विपत्ति अस्तित्व की एक अटल सच्चाई है. चाहे हम कितनी भी मेहनत से धर्म के मार्ग का अनुसरण करें, दुख अपरिहार्य है. सबसे सफल लोगों ने दुनिया की सबसे भयावह परिस्थितियों का सामना किया है, फिर भी उन्होंने इतिहास के पन्नों में अपनी छाप छोड़ी है. सूरदास जन्म से नेत्रहीन थे, मीराबाई विधवा थीं, कबीरदास अज्ञात माता-पिता की संतान थे, और नरसी मेहता व तुलसीदास को समाज ने उपहास का पात्र बनाया. इसी प्रकार, बीथोवन ने अपनी श्रेष्ठतम संगीत रचनाएं तब कीं, जब वे लगभग बहरे हो चुके थे. विपत्तियों की वर्षा ने उनके उत्साह को कम नहीं किया. इसके विपरीत, कुछ लोग सोचते हैं कि उनकी मनोदशा का चालन चक्र दूसरों के हाथों में है. वे बार-बार दूसरों के व्यवहार के आधार पर भावनात्मक उतार-चढ़ाव से ग्रसित हो जाते हैं. ऐसे लोग दोषारोपण की अनुत्पादक आदत विकसित करते हैं, और इसलिए, वे कभी भी अपनी मनोदशा को सुधारने के लिए व्यक्तिगत जिम्मेदारी महसूस नहीं करते. किंतु, सच्चे सफल व्यक्ति वे होते हैं जो उद्दीपन (परिस्थिति) और प्रतिक्रिया (हमारी भावनाएं) के बीच के अंतर को समझते हैं और बार-बार एक उन्नतिशील तरीके से प्रतिक्रिया देने का सचेत निर्णय लेते हैं. जीवन हमें प्रतिकूल परिस्थितियों से भर सकता है, परंतु हम हमेशा अपनी दृष्टि में बदलाव कर खुश रहना चुन सकते हैं. जो हमारे पास नहीं है, उसे लेकर दुखी होने के बजाय, हमें अपने आशीर्वादों को गिनना चाहिए और हृदय को कृतज्ञता से भरना चाहिए. कठिन परिस्थितियों में सकारात्मकता की खोज करने की शुरुआत होती है बाहरी परिस्थितियों और हमारी भावनाओं के बीच के अंतर को समझने से. जब हम इस अंतर को स्वीकार करते हैं, तो हम सिक्के को पलटने और उज्ज्वल पक्ष को देखने में सक्षम होते हैं. भगवद्गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा- 'अपने मन की शक्ति से अपना आत्म उत्थान करो और अपना पतन मत होने दो, क्योंकि नियंत्रित मन आपका सबसे अच्छा मित्र बन सकता है, जबकि अनियंत्रित मन आपका सबसे बड़ा दुश्मन बन जायेगा.'

-स्वामी मुकुंदानंद

कुछ अलग

बाल विवाह की समस्या और जागरूकता

निहारिका मौर्या
टिप्पणीकार
niharikamauryascholar@gmail.com

भारत में बाल विवाह के आंकड़े चिंताजनक तस्वीर पेश करते हैं. यह ऐसी सामाजिक समस्या है, जो न केवल बालिकाओं के अधिकारों का हनन करती है, बल्कि बालकों पर भी असमय परिवार का बोझ डाल देती है. इस कारण लड़के-लड़की दोनों का ही शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास प्रभावित होता है. देश में बाल विवाह की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही हैं. इसे विडंबना ही कहेंगे कि आज भी इसका पूर्णतः उन्मूलन नहीं हो सका है.

यूनिसेफ की 2023 में जारी 'एंडिंग चाइल्ड मैरिज : ए प्रोफाइल ऑफ प्रोग्रेस इन इंडिया' रिपोर्ट कहती है कि बाल विवाह को समाप्त करने की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद दुनिया में सबसे अधिक बाल वधुएं भारत में ही देखी गयी हैं. देश में बाल विवाह निषेध अधिनियम-2006 के तहत बाल विवाह को गैरकानूनी घोषित किया गया है और इसमें संलिप्त व्यक्तियों के लिए दंड का प्रावधान भी किया गया है. राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार, 2021 में उपरोक्त कानून के तहत देश में बाल विवाह के कुल 1,050 मामले दर्ज किये गये, जबकि 2020, 2019 और 2018 में क्रमशः 785, 523 और 501 मामले सामने आये थे. आंकड़े दर्शाते हैं कि कानूनी प्रावधानों और जागरूकता अभियानों के बावजूद बाल विवाह की घटनाएं थमी नहीं हैं. बाल विवाह की मुख्य वजह गरीबी, अशिक्षा, लैंगिक असमानता और पारंपरिक सामाजिक धारणाएं हैं, जिन्हें समाप्त किये बिना इसका उन्मूलन संभव ही नहीं है. बाल विवाह एक सामाजिक कलंक है, जो भुखमरी, गरीबी, सार्वभौमिक शिक्षा, लैंगिक समानता और महिला स्वास्थ्य को बेहतर बनाने की दिशा में बड़ी बाधा है.

कम उम्र में विवाह के कारण न केवल लड़के-लड़कियों का बचपन तबाह होता है, ऐसे विवाह बच्चों को शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा जैसे अधिकारों से वंचित कर उन्हें शोषण के मुहाने पर भी खड़ा कर देते हैं. खेलने-कूदने की उम्र में जिम्मेदारियों का बोझ थोपे जाने के कारण उनका भविष्य अंधकारमय हो जाता है. गर्भावस्था और बच्चों के जन्म के समय लड़कियों के लिए स्वास्थ्य संबंधी जटिलताएं बढ़ जाती हैं. बाल विवाह लड़के-लड़की दोनों को शिक्षा, ज्ञान और रोजगार के अवसर से वंचित कर उनके एक उपयोगी मानव संसाधन के रूप में परिणत होने की संभावनाओं पर भी प्रहार करता है. कम उम्र में विवाह के कारण लड़के-लड़कियों को अपनी खुशियों से समझौता करना पड़ता है. यह दोनों की आशाओं और सपनों पर तुषारापात करता है. अतः इस सामाजिक समस्या को दूर करने के लिए समाज को जागरूक करना अत्यंत आवश्यक है.

आपके पत्र

कृषि कार्य से दूर होते युवा

देश की आधी से अधिक आबादी कृषि कार्य पर निर्भर है, लेकिन देश का युवा वर्ग कृषि कार्य से विमुख हो रहा है. अधिक मेहनत एवं निम्न आय की वजह से किसान अपने बच्चों को इस कार्य से दूर रखना चाहते हैं. यह भी सच है कि आज भी भारत के अधिकांश जगहों में कृषि कार्य परंपरागत ढंग से किया जाता है, जिसमें मेहनत अधिक होती है और उपज कम. ऐसे में बहुत जरूरी है कि कृषि कार्य में वैज्ञानिक तरीके का समावेश किया जाये, ताकि युवा कृषि से विमुख न हो.

हिमांशु शेखर, गयाजी

पार्किंग एक बड़ी समस्या

आज पार्किंग एक बड़ी समस्या बन चुकी है. शहरी विकास की योजनाओं में अक्सर पार्किंग को नजरअंदाज कर दिया जाता है, जो सही नहीं है. चाहे महानगर हों या छोटे शहर, सभी जगह गाड़ियां बढ़ती जा रही हैं, सो पार्किंग की समस्या भी बढ़ रही है. पार्किंग की उचित व्यवस्था नहीं होने से लोग सड़क पर ही गाड़ी पार्क कर देते हैं, जिससे वाहनों की आवाजाही में दिक्कत होती है और जाम लगा रहता है. टाउन प्लानर और शहरी प्रशासन को इस बारे में पुख्ता कदम उठाने की जरूरत है.

वीरेंद्र कुमार जाटव, दिल्ली

पोस्ट करें : प्रभात खबर, 15 पी, इंडस्ट्रियल एरिया, कोकर, रांची 834001 ■ **फैक्स करें :** 0651-2544006 ■ **मेल करें :** eletter@prabhatkhabar.in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है.

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । मुंबई । गुरुवार, 14 अगस्त 2025

ये दोस्ती...

विदेश मंत्री एस. जयशंकर और उनके रूसी समकक्ष सर्गेई लावरोव के बीच इसी 21 तारीख को मॉस्को में मुलाकात होगी। जयशंकर की यह यात्रा ऐसे वक्त में हो रही है, जब वैश्विक परिस्थितियां बिल्कुल भी सामान्य नहीं हैं। ऐसे में यह यात्रा भी विशेष हो जाती है। भारत-अमेरिका संदर्भ में इसका खास महत्व है।

मॉस्को महत्वपूर्ण । कूटनीति में सबसे अहम चीज होती है टाइमिंग। अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने रूस से तेल खरीदने के कारण जिस दिन भारत पर 25% एक्स्ट्रा टैरिफ लगाया था, उसके अगले ही दिन भारतीय राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल ने मॉस्को में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पूतिन से भेंट की थी। डोभाल के तुरंत बाद अब जयशंकर का दौरा यह दिखाता है कि भारत के लिए रूस के साथ रिश्ते कितने महत्वपूर्ण हैं और दोनों की दोस्ती दशकों पुरानी है।

जयशंकर 21 को जाएंगे रूस

स्वतंत्र विदेश नीति । भारत और रूस पर दबाव बनाने के लिए ट्रंप हर मुमकिन कोशिश कर रहे हैं। पाकिस्तान के साथ ट्रेड डील, उसके सेना प्रमुख की अगवानी ऐसे कुछ कदम हैं, जो भारतीय हितों से मेल नहीं खाते। रूसी तेल को लेकर ट्रंप के दबाव में भारत नहीं आया है और न ही उसे आना चाहिए। भारत का रुख यही रहा है कि वह देशहित में फैसला करेगा।

द्विपक्षीय संबंधों पर बात । जयशंकर की रूस यात्रा का ऐलान रूसी विदेश मंत्रालय की तरफ से किया गया। इसमें बताया गया कि बैठक में दोनों नेताओं के बीच द्विपक्षीय संबंधों समेत कई अहम मुद्दों पर बात होगी। स्वाभाविक तौर पर इसमें एक मुद्दा अमेरिका का भी होगा। यह भी महत्वपूर्ण है कि इसी शुक्रवार को अलास्का में यूक्रेन युद्ध के मुद्दे पर ट्रंप और पूतिन मिलने वाले हैं।

व्यापारिक संबंध । रूस पहले से ही पश्चिमी पाबंदियों की मार झेल रहा है, जबकि ट्रंप की टैरिफ पॉलिसी से होने वाले नुकसान की भरपाई के लिए भारत को नए बाजारों की तलाश है। यही मौका है, जब दोनों देश अपने व्यापारिक संबंधों को नया आयाम दे सकते हैं। 2024-25 में भारत-रूस के बीच 68.7 बिलियन डॉलर का व्यापार हुआ था।

संवाद अच्छा । कुछ दिनों पहले पीएम नरेंद्र मोदी ने पूतिन से फोन पर बात की थी और उन्हें भारत आने का निमंत्रण दिया था। पूतिन का भारत दौरा इसी साल के आखिर में प्रस्तावित है। इससे पहले वह दिसंबर 2021 में नई दिल्ली में आयोजित भारत-रूस वार्षिक शिखर सम्मेलन में हिस्सा लेने के लिए आए थे। फिर इस महीने के आखिर में शंघाई को-ऑपरेशन समिट में भी मोदी और पूतिन की मुलाकात की संभावना है। आशा है कि दोनों देश आपसी संबंधों को ऐसे मंचों के जरिये और आगे ले जाएंगे।

आमची मुंबई

मुहावरे में कीचड़

हरि मृदुल

कई बार लगता है कि कीचड़ उछालने वाला मुहावरा मुंबई की सड़कों से गुजरने के बाद ही बना होगा। जरा सी बरसात हुई नहीं कि गड्ढे ही गड्ढे और कीचड़ ही कीचड़! आप ऑफिस जा रहे हैं। आपने इस्त्री करवा सबसे नई कमीज पहनी है। थमी बारिश में आप गुनगुनाते हुए बढ़ रहे हैं। तभी आपके एकदम बगल से कोई कार या बाइक सर्र से निकल जाए, तो आप थोड़ा भौंचक और थोड़ा भयभीत हो ही जाएंगे। एक इंच भी इधर को होते, तो ऐक्सिडेंट तय था! तब आप एकाएक छलक आए पसीने को पोंछने के बाद अपने ऊपर एक नजर घुमाते हैं। न आप खुद को पहचान पाते हैं और न ही अपनी कमीज को। आप देखते हैं कि कमीज की डिजाइन अब एकदम अलहदा है। कमीज का कलर भी काफी हद तक बदल चुका है!

चूंकि आप सड़क पर चल रहे हैं, इसलिए इस कमीज को उतार भी नहीं सकते। मजबूरी में आपको इसी कमीज के साथ ऑफिस जाना पड़ता है। अच्छी बात यह है कि आपको इस कमीज के बारे में किसी को सफाई देने की जरूरत नहीं पड़ती। कीचड़ ने ऑफिस के सहकर्मियों को इतना समझदार तो बना ही दिया है कि ऐसे मामलों में किसी तरह की सफाई नहीं देनी पड़ती। सभी भुक्तभोगी हैं, इसलिए खुद ही समझ जाते हैं कि यह करामात अकस्मात उछले कीचड़ के अलावा किसी और की हो ही नहीं सकती!

हालांकि जब आप घर पहुंचते हैं, तब बीवी जरूर पूछती है कि यह किसकी कमीज पहन लाए? पहन के तो कोई और ही कमीज गए थे! आप कोई जवाब नहीं देते, सिर्फ कुढ़ते हैं मन ही मन। कुछ भी जवाब देने पर कीचड़ के कमीज से निकल कमरे में फैल जाने की पूरी आशंका। हां, बीवी ने थोड़ी सी भी सहानुभूति दिखा दी, तो आपकी आंखों की कोरें भीग सकती हैं।

पहली बार बड़े चाव से पहनी महंगी कमीज की गत आखिरी बार पहनने जैसी हो जाए, तो रुआंसा होना स्वाभाविक है। मेरे जैसे लाखों लोग अच्छी कमीज खरीदने के लिए बाकायदा बजट बनाते हैं, तभी साल-छह महीने में एक कमीज खरीद पाते हैं। कमीज पर पड़े कीचड़ का असर सीधे हमारे बजट पर पड़ता है, असल बात यह है!!

एकदा

पिघलना सीख लो

फारसी साहित्य के महान लेखक, सूफी संत मौलाना जलालुद्दीन रूमी के पास एक बार एक युवा साधक आत्मज्ञान की तलाश में पहुंचा। उसने रूमी से कहा, 'मैं ईश्वर को पाना चाहता हूं। लेकिन, जब भी ध्यान लगाता हूं, मेरा मन भटकने लगता है, क्रोध आ जाता है,

Subrata Dhar

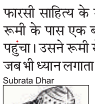

वासना जग उठती है, कभी पुराने मोह खींचने लगते हैं। क्या ईश्वर मुझसे बहुत दूर है?' रूमी ने अपने शिष्य से एक जलता हुआ दीपक मंगवाया और युवक से कहा, 'इस दीपक को ध्यान से देखो। इसकी लौ प्रकाश दे रही है, शांति फैला रही है। तुम अपनी उंगली इसमें डालोगे, तो क्या होगा?' युवक ने तुरंत जवाब दिया, 'मैं जल जाऊंगा।' रूमी ने पूछा, 'तो फिर क्या तुम यह कहोगे कि लौ बुरी है? या फिर यह कि तुमने उसे समझे बिना छूने की कोशिश की?' युवक चुप रहा। रूमी ने अपनी बात आगे बढ़ाई, 'यही बात जीवन और ईश्वर के साथ है। ईश्वर की उपस्थिति लौ की तरह है, बिलकुल शुद्ध, शांत, उज्ज्वल। लेकिन जब तक तुम अपने अहंकार की उंगली लेकर उसके पास जाओगे, तो जलते रहोगे। यदि सच में ईश्वर को पाना है, तो मोम बनो। पिघल जाओ, विनम्र हो जाओ। तब वही लौ तुम्हें अपनाएगी, तुम्हें आलिंगन देगी।' युवक मर्म को समझ चुका था।

संकलन : **रिंकल शर्मा**

शीर्ष अदालत ने आवारा कुत्तों को हटाने का फ़ैसला गुस्से में दिया है, इसके नतीजे ठीक नहीं होंगे

सहानुभूति, तर्क और नैतिकता वाली राह हो

मेनका गांधी

1994 में गुजरात के सूरत नगर निगम आयुक्त ने शहर के सभी कुत्तों को मारने का आदेश दिया। दो हफ्तों में सारे कुत्ते मारे गए। ठीक दो हफ्ते बाद दुनिया की सबसे घातक बीमारियों में से एक ब्यूबोनिक प्लेग का पहला मामला सामने आया। शिकारी कुत्तों से बेखौफ चूहे जमीन पर आ गए और शहर भर में फैल गए। ढेरों लोग चूहों के काटने का शिकार हुए और प्लेग के तीन मामले दर्ज हुए। भारत भर में लोग मास्क पहनने लगे, निर्यात रुक गया और पर्यटन लंबे समय तक ठप हो गया।

बड़ा नुकसान । 1880 के दशक में पेरिस ने अपने सभी कुत्ते-बिल्लियों को मार डाला और नतीजे वही सामने आए। चीन में चेयरमैन माओ ने सभी गौरैयों को मारने का आदेश दिया कि वे अनाज खाती हैं। नतीजतन देश में भारी अकाल पड़ गया। जिन टिड्डियों को खाकर गौरैया नियंत्रित रखती थीं, वे फैल गईं और फसलों को बर्बाद कर दिया। मॉरीशस ने अपना उड़ न पाने वाला पक्षी डोडो विदेशी नाविकों को मांस के लिए देकर खो दिया। फिर द्वीप को गन्ना उगाने पर मजबूर होना पड़ा, भारत से मजदूर मंगाने पड़े और पूरी भाषा-संस्कृति बदल गई। एक ही पक्षी ने यह सब कर दिया।

उलटे नतीजे । सुप्रीम कोर्ट ने स्वतः संज्ञान लेते हुए सड़कों से सभी कुत्तों को हटाने का आदेश गुस्से में दिया है। उन्होंने न तो मौजूदा कानूनों पर ध्यान दिया है और न ही इसके नुकसानदायक नतीजों पर विचार किया है। भारत में कुल 1.4 करोड़ कुत्ते हैं। यह आंकड़ा WHO के हर 100 लोगों पर 1 कुत्ते के सर्वे के आधार पर है। आइए, इसके नतीजों की सूची देखते हैं-

- अगर दिल्ली या राजस्थान, तमिलनाडु जैसे अन्य राज्य इस आदेश को लागू करते हैं, तो उन्हें अपने बजट का आधे से ज्यादा हिस्सा शेल्टर बनाने में लगाना पड़ेगा। दिल्ली के मामले में इसका मतलब होगा 3,000 शेल्टर बनाने के लिए जमीन ढूंढना, 1.5 लाख सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति, 500 वैन खरीदना और दर्जनों पशु चिकित्सक व गार्ड रखना। इसकी लागत ₹15,000 करोड़ आएगी, जिसमें जमीन की कीमत शामिल नहीं है, जो गैर-आवासीय इलाकों में होनी चाहिए। सिर्फ खाने का खर्च ही हर हफ्ते ₹5 करोड़ होगा, जो अभी समुदाय के लोग खुद कर देते हैं। जो भी राज्य यह तरीका अपनाएगा, उसे हर जिले में यही लागत कई गुना झेलनी पड़ेगी।
- डॉग शेल्टर बार-बार अप्रभावी साबित हुए हैं। जोधपुर में 30 साल पहले बना एक डॉग शेल्टर कुछ ही हफ्तों में बंद करना पड़ा क्योंकि सारे कुत्ते मर गए। हालात इतने ख़तरनाक थे कि स्टाफ अंदर नहीं जा सकता था, क्योंकि कुत्ते लगातार लड़ते थे। खाना दीवार के ऊपर से फेंकना पड़ता था। जनविरोध के बाद प्रशासन ने इसे ABC/शेल्टर सुविधा में बदल दिया। मोहाली में एक बड़ा शेल्टर बनाया गया, लेकिन वह आज भी खाली है। जब उसमें कुत्ते भरने शुरू किए, तो वही समस्याएं तुरंत आ गईं।

सवाल सह-अस्तित्व का
- कुत्तों को हटाने से बदल सकती है संस्कृति
- कंट्रोल करने का नसबंदी ही इकलौता तरीका
- अदालत नहीं तोड़ सकती है कानून

- क्या यह काम करेगा? नहीं। सभी जीव वहीं जाते हैं जहां खाना मिलता है। शहर में हजारों अवैध चिकन और मीट की दुकानें हैं, इसलिए खाने के स्रोत बहुत हैं। 5,000 कुत्तों को हटाने से बस एक खाली जगह बनेगी, जिसे जल्दी ही बाहर से आए 5,000 नए कुत्ते भर देंगे। ये नए कुत्ते नसबंदी-रहित होंगे, इलाके से अनजान होंगे और इनके लोगों को काटने की आशंका ज्यादा होगी।
- दिल्ली में 25,000 से अधिक बंदर हैं, जिनमें से 16,000 पहले ही असोला भेजे जा चुके हैं। मैंने देखा है कि बंदर शायद ही कभी पेड़ों से नीचे आते हैं और वे उन इलाकों से बचते हैं जहां आवारा कुत्ते होते हैं। मेरे अपने घर में, जब मैंने एक महीने के लिए कुत्ते हटा दिए, तो तीन दिन में ही बंदर जमीन पर आ गए और रसोई में घुसने की कोशिश करने लगे। अगर कुत्तों को असोला भेजा गया, तो बंदर बड़ी संख्या में शहर लौट आएंगे।

असली समाधान । हालांकि व्यवस्था में बहुत खामियां हैं, लेकिन कुछ व्यावहारिक उपाय हैं जिन्हें कम समय में अपनाकर इन समस्याओं को प्रभावी ढंग से हल किया जा सकता है-

- 30 साल पहले हुई WHO की स्टडी बताती है कि नसबंदी ही इकलौता असरदार तरीका है। भारत की अदालतों ने बाद में इसे मंजूरी दी। लेकिन दशकों में न तो इस कार्यक्रम को मानकीकृत किया गया और न ही पर्याप्त फंड दिया गया। यह कार्यक्रम एनिमल वेलफेयर बोर्ड ऑफ इंडिया के तहत है। यह पशुपालन मंत्रालय में है, लेकिन इसके पास न के बराबर स्टाफ और कोई अलग बजट नहीं है। कुत्तों की नसबंदी (ABC) केंद्रों के लिए फंड प्रत्येक राज्य के शहरी विकास मंत्रालय से आता है। यह मुख्य रूप से बड़े शहरों को दिया जाता है, जिससे नगरपालिकाओं को खुद ही संसाधन जुटाने पड़ते हैं। कई जगहों में, जैसे कांचीपुरम, भोपाल और इंदौर ABC केंद्र कचरा डंप करने वाले छोटे कमरों में बने हैं, जहां बदबू से काम करना असंभव है। नतीजा, कई केंद्र भ्रष्टाचार के अड्डे बन गए हैं, जहां अयोग्य या फर्जी NGO काबिज हैं। आंकड़े बढ़ा-चढ़ाकर ये ज्यादा फंड लेते हैं, स्थानीय अधिकारियों से बांटते हैं और कुत्तों को रोजाना इधर-उधर करते हैं, जिससे काटने की घटनाएं बढ़ती हैं।
- सभी ABC केंद्र और RWA रोजाना कुत्तों को हटाकर काटने की घटनाएं बढ़ा रहे हैं। समझने की बात यह है कि जो कुत्ते अनजान इलाकों में अवैध रूप से छोड़े जाते हैं, वे डरे और भूखे होते हैं, और स्थानीय कुत्तों व लोगों के हमले का शिकार होते हैं। ऐसे में काटना उनका एकमात्र बचाव बन जाता है।
- यह गलतफहमी है कि 'पशु प्रेमी' और 'पशु विरोधी' दो अलग वर्ग हैं। ऐसा नहीं है। भारत की आत्मा दोनों दृष्टिकोणों को अपनाती है और एक साझा लक्ष्य रखती है- कम कुत्ते, कम या न के बराबर काटने की घटनाएं, और ऐसा सहअस्तित्व जिसमें कुत्तों का फिर से इंसानी समुदाय में स्वागत हो।
- हमें कुत्ते के काटने के आंकड़े बढ़ा-चढ़ाकर पेश करना बंद करना चाहिए। सचाई यह है कि कुत्ते के काटने के मामले डॉक्टर दर्ज करते हैं, जो एंटी-रेबीज इंजेक्शन लगाते हैं। पूरा कोर्स 5 इंजेक्शन का होता है, और हरेक इंजेक्शन को 'काटने' के एक अलग केस के रूप में गिना जाता है। इसलिए संसद में पिछले साल बताए गए 37 लाख मामलों को 5 से भाग देने पर असली घटनाएं लगभग 7.2 लाख ही निकलती हैं। कोई आधिकारिक रेकॉर्ड यह नहीं बताता कि काटने के कितने केस पालतू कुत्तों के हैं और कितने आवारा कुत्तों के, लेकिन गैर-सरकारी अनुमान के अनुसार यह अनुपात 70:30 है। एक कारण यह भी है कि कई विदेशी नस्लों के कुत्ते, जो बंद जगह में रखे जाते हैं और आक्रामक बना दिए जाते हैं, भारतीय जलवायु के अनुकूल नहीं होते। भारत में 2024 में रेबीज से होने वाली मौतें कुल 54 हैं। इसके मुकाबले, सड़क हादसों में हर हफ्ते लगभग 2,000 मौतें होती हैं।
- यूपी के लखनऊ में न सिर्फ एक उत्कृष्ट ABC केंद्र है, बल्कि एक आदेश भी है कि सभी पालतू कुत्तों का रजिस्ट्रेशन हो। विदेशी नस्ल के मालिकों को हर साल ₹500 रुपये देने पड़ते हैं, जबकि देसी कुत्ते पालने पर कोई शुल्क नहीं है। प्रभावी सुविधाओं और समझदारी भरे नियमों की यह जुगलबंदी भारत के बाकी शहरों के लिए एक मॉडल है।

सफल पद्धति

विदेशों में भी इसी तरह की पद्धति सफल रही है। नीदरलैंड में एक भी आवारा कुत्ता नहीं है। देश ने 1970 के दशक की शुरुआत में एनिमल प्रोटेक्शन एक्ट पास किया, जिससे किसी भी मालिक द्वारा जानवर को नुकसान पहुंचाना गैर-कानूनी हो गया। 1990 के दशक में डच सरकार ने एक राष्ट्रीय नसबंदी कार्यक्रम लागू किया, जिसमें आवारा कुत्तों को पकड़कर उनकी नसबंदी की गई, नियमित टीकाकरण किया गया और उन्हें वापस सड़क पर छोड़ दिया गया। पूरी तरह सरकारी फंड से चलने वाले इस कार्यक्रम ने धीरे-धीरे आवारा कुत्तों की संख्या घटा दी। आज, डच नागरिकों में 20% से अधिक के पास कुत्ता है, और 10 लाख से ज्यादा कुत्तों को सड़कों से हटा लिया गया है।

कानून को मानें । अक्टूबर 2022 में जस्टिस माहेश्वरी की अगुआई वाली दो जजों की बेंच ने फैसला दिया कि सड़क के कुत्तों को कैद में नहीं रखा जा सकता, और नागपुर बेंच का वह आदेश रोक दिया, जिसमें आवारा कुत्तों को खाना खिलाने वालों से कहा गया था कि या तो उन्हें गोद लें, या शेल्टर में रखें। क्या एक स्वतः संज्ञान मामले में दिया गया आदेश इसे पलट सकता है? भारत में पहले से ही पशु संरक्षण के लिए साफ कानूनी ढांचा है, खासकर पशु क्रूरता निवारण अधिनियम और पशु जन्म नियंत्रण नियम। कोई भी कार्रवाई इन्हीं के तहत होनी चाहिए, वरना नतीजा दुखद ही होगा।

प्रेम भरे पल । हर दिन भारत भर में चुपचाप एक रस्म चलती है। कॉलोनी के एनिमल केयरटेकर अपने घरों से निकलते हैं, और स्थानीय आवारा कुत्तों की उम्मीद भरी आंखों और डोलती पूंछों से मिलते हैं। कई लोग अपनी मामूली बचत से बिस्कुट या चावल देकर इन भूखे, छोड़े गए जानवरों को खिलाते हैं। इससे दया और जुड़ाव के छोटे-छोटे पल बनते हैं। वक्त आ गया है कि इस करुणा को एक योजनाबद्ध, चरणबद्ध, सरकार-चालित कार्यक्रम में बदला जाए। ऐसा कार्यक्रम, जो आवारा कुत्तों की जिंदगी बेहतर करे और साथ ही व्यापक जनसंख्या के लिए जोखिम घटाए। आगे की राह सहानुभूति, तर्क और नैतिकता से निर्देशित होनी चाहिए।

(लेखिका पूर्व केंद्रीय मंत्री हैं)

आवारा कुत्तों के डर से बच्चे पार्कों में खेलने से कतरा रहे हैं

विजय गोयल

पिछले दो वर्षों से मैं लगातार आवारा कुत्तों के बढ़ते खतरे के खिलाफ आवाज उठा रहा हूं। मेरा मानना है कि यह सिर्फ एक सामाजिक समस्या नहीं, बल्कि गंभीर जन-स्वास्थ्य और सुरक्षा का मुद्दा भी है।

12 करोड़ आवारा कुत्ते । आज देश भर में लगभग 12 करोड़ आवारा कुत्ते हैं। अकेले दिल्ली में 8 लाख से अधिक। हर रोज देश में लाखों लोग इनके काटने का शिकार हो रहे हैं। दिल्ली में ही प्रतिदिन 2000 डॉग-बाइट के मामले सामने आते हैं। रैबीज जैसी जानलेवा बीमारी भी इन्हीं के कारण फैल रही है।

एनिमल लवर्स का विरोधाभास । ऐसे में आवारा कुत्तों को सड़कों से हटाकर शेल्टर होम भेजने का सुप्रीम कोर्ट का हालिया निर्णय स्वागत योग्य है। यह फैसला इंसान और जानवर दोनों की भलाई के लिए है। कुछ तथाकथित 'एनिमल लवर्स' इस निर्णय का विरोध कर रहे हैं। मैं पूछता हूं - क्या ये सभी 'एनिमल लवर्स' शाकाहारी हैं? अगर इनमें मांसाहारी भी हैं, तो क्या ये मुर्गा, मछली, बकरा, जैसे अन्य बेजुबान जानवरों के लिए भी उतना ही शोर मचाते हैं? अगर नहीं मचाते तो इसे क्या कहेंगे?

दायित्व नहीं निभाते । सच यह है कि इनका प्रेम चुनिंदा तौर पर सिर्फ कुत्तों तक सीमित है। ये लोग न तो इन कुत्तों को गोद लेते हैं, न ही स्थायी जिम्मेदारी निभाते हैं, बल्कि सड़कों पर खाना डालकर इन्हें स्थायी रूप से वहीं बसने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। और, फिर दावा करते हैं कि सुप्रीम कोर्ट बेजुबानों पर अत्याचार कर रहा है। सच यह है कि शेल्टर होम में उनकी बेहतर देखभाल, भोजन और सुरक्षा हो सकती है।

आक्रामक हैं एनिमल लवर्स । वैसे इन 'एनिमल लवर्स' की संख्या बहुत कम है, लेकिन इनमें से कुछ लोग सोशल मीडिया पर और जमीन पर काफी आक्रामक हो जाते हैं। जब से मैंने यह आंदोलन शुरू किया है, तब से मुझे गालियां, धमकियां और यहां तक कि मेरे मरने की कामनाएं की जाने लगी हैं। कई लोग तो यह तक कहने लगे कि कुत्ते मुझे काट लें। यह 'पशु प्रेम' है या 'मानव विरोध'? मुझे पूरा यकीन है कि जब कुत्तों को उठाने के लिए गाड़ियां आएंगी, तो यही लोग वहां जाकर हंगामा करेंगे।

इच्छाशक्ति चाहिए । एक बड़ी चुनौती शेल्टर होम की भी है। इनकी संख्या जरूरत से काफी कम है। इनका इंतजाम करना आसान नहीं। सुप्रीम कोर्ट ने भी

कहा है कि शेल्टर होम बनाना समय और संसाधनों का काम है - लेकिन अगर सरकार की इच्छा शक्ति हो, तो यह काम टी-20 मैच की तरह तेजी से भी हो सकता है, जैसा पहले कोविड में के दौरान हो चुका है।

बच्चों को लेकर डर । आज बच्चे पार्कों में खेलने से डरते हैं। माता-पिता अपने बच्चों को बाहर भेजने से कतराते हैं। पर्यटक भी इन हमलों से परेशान होकर भारत आने से बचते हैं। अगर कुत्तों की संख्या इसी रफ्तार से बढ़ती रही, तो एक समय आएगा जब सड़क पर इंसानों से ज्यादा कुत्ते होंगे। यह किसी भी सभ्य समाज की तस्वीर नहीं हो सकती।

शेल्टर होम का सवाल । दो बड़े मुद्दे हैं। पशु प्रेमी कहते हैं सुप्रीम कोर्ट का फैसला व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि शेल्टर होम इतनी जल्दी बन नहीं पाएंगे। इनकी दलील को स्वीकार कर लिया जाए तो भी पूछा जाना चाहिए कि मान लीजिए शेल्टर होम बन जाएं तो क्या पशु प्रेमी सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले का समर्थन करेंगे?

डॉग बाइट का मसला । दूसरा मुद्दा यह है कि पशु प्रेमी कहते हैं आप नसबंदी और वैक्सीन से इनकी संख्या को नियंत्रित करें। तो सवाल यह है कि क्या नसबंदी के जरिए इनकी संख्या के नियंत्रित होने तक दिल्ली में पुराने 8 लाख कुत्तों को यूं ही रहने दिया जाए? ये यूं ही सड़कों, पार्कों, गलियों में घूमते रहें लोगों को काटते रहें?

संतुलित फैसला । यह फैसला दोनों पक्षों के लिए संतुलित है। इंसानों की सुरक्षा और जानवरों की भलाई। शेल्टर होम में न तो कुत्तों को मारा जाएगा, न प्रताड़ित किया जाएगा। वहां उन्हें एक सुरक्षित, नियंत्रित वातावरण मिलेगा। दूसरी ओर, आम जनता भी राहत की सांस ले सकेगी। इसलिए मेरा साफ कहना है - सुप्रीम कोर्ट के फैसले का स्वागत कीजिए, न कि उसका विरोध। मानव जीवन और जनहित, किसी भी समाज की पहली प्राथमिकता होनी चाहिए।

(लेखक पूर्व केंद्रीय मंत्री हैं)

निवेश की रेस में तेजी से आगे बढ़ रहीं महिलाएं

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

राहुल पाण्डेय

देश के शेयर बाजार में महिलाओं की भागीदारी लगातार बढ़ रही है। नैशनल स्टॉक एक्सचेंज (NSE) की ताजा रिपोर्ट बताती है कि अब देश के आधे से अधिक राज्यों में महिला निवेशकों की हिस्सेदारी राष्ट्रीय औसत 24.5% से ऊपर पहुंच गई है। महाराष्ट्र, गुजरात, गोवा, मिजोरम, चंडीगढ़, दिल्ली और सिक्किम जैसे राज्यों ने इस बदलाव में बाकियों से आगे बढ़कर अपना रोल अदा किया है। महाराष्ट्र में महिला निवेशकों का हिस्सा दो साल में 25.6% से बढ़कर 28.4% हो गया। वहीं गुजरात में यह 26.6% से बढ़कर 27.8% तक जा पहुंचा। छोटे राज्य और केंद्रशासित प्रदेश भी पीछे नहीं हैं। गोवा और मिजोरम तो इस मामले में देश के कई बड़े राज्यों से आगे हैं। वहीं चंडीगढ़ में 32%, दिल्ली में 30.5% और सिक्किम में 30.3% महिला निवेशक हैं, जो राष्ट्रीय औसत से काफी ज्यादा हैं। उत्तर प्रदेश जैसे बड़े और पारंपरिक सोच वाले राज्य से होने वाले निवेश में महिलाओं की भागीदारी हालांकि अभी भी कम है, लेकिन यह बढ़ रही है। यहां महिला निवेशकों का प्रतिशत 16.9 से बढ़कर 18.7 हो गया है। जून 2025 तक ज्यादातर राज्यों से इक्विटी बाजार में महिलाओं की भागीदारी लगातार बढ़ी है। रिपोर्ट बताती है कि भारतीय शेयर बाजार में जेंडर डायवर्सिटी में लगातार सुधार हो रहा है। यह इस बात का संकेत है कि इस मामले में पॉजिटिव बदलाव आ रहा है। महिलाओं की बढ़ती भागीदारी के पीछे कई वजहें हैं। डिजिटल प्लैटफॉर्म और ऑनलाइन ट्रेडिंग ऐप्स ने निवेश की प्रक्रिया को आसान और सुलभ बना दिया है। वित्तीय साक्षरता के लिए चलाए गए अभियान, सोशल मीडिया के जरिए फैलती जानकारी और कार्यस्थल पर बढ़ती महिला मौजूदगी ने भी इसमें अहम भूमिका निभाई है। अब महिलाएं केवल बचत तक सीमित नहीं रहना चाहतीं, बल्कि अपने पैसे को बढ़ाने और निवेश के जरिए आर्थिक आजादी हासिल करने की दिशा में कदम बढ़ा रही हैं। यह बदलाव सिर्फ व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए भी शुभ है। लेकिन यह सफर अभी अधूरा है। ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे कस्बों में महिला निवेशकों की हिस्सेदारी अभी भी बहुत कम है।

आधी दुनिया

AI Image

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें
www.speakingtree.nbt.in

निर्भरता बढ़ाने का मतलब ख़ुद को ग़ुलाम बना लेना

सुमित पॉल

आज के समय में लगभग हर व्यक्ति के पास एक महंगा और हाई क्वॉलिटी का मोबाइल फोन है। शुरू में हम इन्हें जरूरतों के हिसाब से अपनी सुविधा को देखते हुए खरीदते हैं। लेकिन धीरे-धीरे यही फोन हमें अपने कब्जे में ले लेते हैं। हम दिन का ज्यादातर समय इन्हीं के साथ बिताते हैं - सोशल मीडिया, चैटिंग, विडियो देखने या अन्य ऐप्स में। अगर एक दिन हमारा फोन खो जाए या खराब हो जाए, तो असहज, बेचैन और अधूरे महसूस करने लगते हैं, मानो हमारी कोई महत्वपूर्ण चीज हमसे छिन गई हो।

जर्मन लेखक और नोवेलिस्ट Elias Canetti का कहना है कि जब हम किसी वस्तु, व्यक्ति या विचार को अपना मान लेते हैं, तो यह केवल एकतरफा प्रक्रिया नहीं होती। हमें लगता है कि हमने उस वस्तु या संसाधन पर अधिकार पा लिया है, लेकिन वही हमारे जीवन, विचारों और भावनाओं पर प्रभाव डालने लगता है, मानो वह हमें ही अपने कब्जे में ले लेता हो। जब हम किसी वस्तु को प्राप्त करते हैं, तो शुरुआत में एक प्रकार से अपने नियंत्रण और शक्ति का अनुभव होता है। हमें लगता है कि अब हमारे पास वह साधन है, जो हमारी जरूरतों को पूरा करेगा और हमें सुविधा देगा। लेकिन समय के साथ उस वस्तु से जुड़ी जिम्मेदारियां, उसकी देखभाल और मानसिक जुड़ाव बढ़ने लगता है। हम अक्सर सोचते हैं कि अधिक वस्तुएं और सुविधाएं हमारे जीवन को आसान बना देंगी, लेकिन होता इसके विपरीत है।

कैनेटी का विचार यह सोचने पर मजबूर करता है कि हमें अपने जीवन में किस प्रकार की वस्तुएं और कितनी मात्रा में रखनी चाहिए। सादगी और संतुलन हमें न केवल मानसिक शांति देते हैं, बल्कि उस अदृश्य बंधन से भी मुक्त रखते हैं, जिनसे भौतिक वस्तुएं हम पर राज करने लगती हैं। इस तरह, स्वामी वही है, जो अपने स्वामित्व के बंधन में नहीं रहता है, यानी स्वामित्व का बोझ ढोकर नहीं जीता है।

रीडर्स मेल www.edit.nbt.in

फिर हो सकता है युद्ध

भारत के थल सेनाध्यक्ष जनरल उपेंद्र द्विवेदी ने पाकिस्तान से दोबारा युद्ध होने की आशंका व्यक्त की है। उनका कहना है कि इन दिनों कश्मीर में जिस तरह से लगातार आतंकी घटनाएं बढ़ रही हैं, घाटी का वातावरण बिगाड़ने की कोशिशें हो रही हैं और सेना पर हमले तेज हो रहे हैं, वह बेहद चिंताजनक है। जनरल द्विवेदी के अनुसार, यही कारण है कि पाकिस्तान को सबक सिखाने के लिए कभी भी युद्ध की नौबत आ सकती है। इसी वजह से सेना को हर समय तैयार रखने और उसे आधुनिक हथियारों से लैस करने के प्रयास किए जा रहे हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि यदि पाकिस्तान से युद्ध हुआ, तो वह आर-पार की लड़ाई होगी और उसे कड़ा सबक सिखाया जाएगा। वह याद रखेगा कि भारत से युद्ध करना उसे कितना महंगा पड़ता है। आर्थिक तौर पर उसकी रीढ़ टूट जाएगी।

- मनमोहन राजावत, ईमेल से

प्रकृति से खिलवाड़ न हो

उत्तरकाशी के धराली-हर्षिल क्षेत्र में आई आपदा ने चेताया है कि प्रकृति से खिलवाड़ के गंभीर परिणाम होंगे। जलविद्युत परियोजनाओं, रेल सुरंगों और पर्यटन सुविधाओं के विकास ने पहाड़ों को खोखला कर दिया है। तबाही के लिए बारिश को जिम्मेदार ठहराकर जवाबदेही से नहीं बचा जा सकता। लोगों ने प्रकृति के साथ खिलवाड़ किया है। केदारनाथ में बिना मॉनसून के रुकावट के ही तबाही आ गई थी। पर्यावरण और विकास के बीच संतुलन साधना जरूरी है। ऐसा नहीं किया गया, तो हिमालय और उसकी नदियों का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा।

- प्रमोद भार्गव, ईमेल से

readersmail.nbt@gmail.com
पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

चीन-अमेरिका ने और 90 दिन टैरिफ टाला - एक खबर
- यह जिद का खेल है या मजबूरी की टालमटोल!

महेंद्र नागर

आर.एन.आई. पंजीयन नंबर 1613/1957 स्वत्वाधिकारी बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए आर. कृष्णमूर्ति द्वारा टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग, डॉ. डी. एन. रोड, फोर्ट, मुंबई 400001 से प्रकाशित और उनके द्वारा (1) टाइम्स ऑफ इंडिया सबर्बन प्रेस, आकुर्ली रोड, निकट वेस्टर्न एक्सप्रेस हाइवे, कांदिवली (पू.) मुंबई 400101 एवं (2) टाइम्स ऑफ इंडिया प्रिंट सिटी, प्लॉट नं. 4, टी.टी.सी. इंडस्ट्रियल एरिया, ठाणे बेलापुर रोड, ऐरोली, नवी मुंबई-400708. फोन नं. (022) 2760 9999 ; फैक्सः (022) 2760 5275। फोन मुंबईः (022) 66353535, 22733535 रेस्पांसः (022) 66353636, 22733636 फैक्सः (022) 22731889, 22731144, कांदिवली (022) 28872324 से मुद्रित। **स्थानीय संपादक (मुंबई) : सुंदर चंद ठाकुर** (पी. आर. बी. अधिनियम के अंतर्गत समाचारों के चयन के लिए उत्तरदायी) सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। सड़क व रेल परिवहन सेवा शुल्कः मुंबई, ठाणे व **रायगढ़** जिलों के बाहर 1.00 रुपया। विमान सेवा शुल्कः रायपुर, नागपुर, गोवा एवं वाया 2.00 रुपये, इंदौर, चेन्नै एवं वाया 3.00 रुपये, अहमदाबाद, बेंगलुरु, कोचीन, कोयम्बतूर, एरनाकुलम, हैदराबाद, कोझीकोड, मंगलूर, त्रिवेंद्रम, उदयपुर, वाइजग एवं वाया 4.00 रुपये, दिल्ली, कोलकाता, एवं वाया 5.00 रुपये।

Machine Translated by Google

सहायता और सलाह

सरकार की मंजूरी के बिना एलजी के नामांकन जम्मू-कश्मीर की चुनावी प्रक्रिया को प्रभावित कर सकते हैं, केंद्रीय गृह मंत्रालय ने जम्मू-कश्मीर उच्च

टी न्यायालय में कहा कि उपराज्यपाल (एलजी) बिना सरकारी मंजूरी के विधायकों को नामित कर सकते हैं।

निर्वाचित सरकार की "सहायता और सलाह" के बिना विधानसभा सदस्यों को मनोनीत करना लोकतांत्रिक जवाबदेही को दरकिनार कर देता है। निर्वाचित विधानसभा में मतदान के अधिकार वाले सदस्यों को नामित करने जैसे परिणामी निर्णय लोकतांत्रिक जनादेश से होने चाहिए, प्रशासनिक विवेक से नहीं। उच्च न्यायालय का संवैधानिक प्रश्न इससे अधिक सीधा नहीं हो सकता था: क्या जम्मू-कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम में 2023 के संशोधन, जो उपराज्यपाल को पांच विधानसभा सदस्यों को नामित करने की अनुमति देते हैं "जिनमें अल्पमत सरकार को बहुमत सरकार में बदलने की क्षमता है और इसके विपरीत," संविधान के मूल ढांचे का उल्लंघन करते हैं? इस पर ध्यान देने के बजाय, मंत्रालय कानूनी तकनीकीताओं में उलझ गया है। इसका तर्क है कि नामांकन निर्वाचित सरकार के अधिकार क्षेत्र से बाहर है,

प्रतीत होता है कि यह पुडुचेरी के के. लक्ष्मीनारायणन बनाम भारत संघ के उदाहरण का हवाला दे रहा है, जबकि दावा करता है कि "स्वीकृत संख्या" में निर्वाचित और नामित सदस्य शामिल हैं। यहाँ तक कि यह लोकतांत्रिक परामर्श को दरकिनार करने के औचित्य के रूप में 1963 के केंद्र शासित प्रदेश अधिनियम (मतदान प्रक्रिया) की धारा 12 का भी हवाला देता है। जब 119 सदस्यीय विधानसभा में पाँच मनोनीत सदस्य सरकार की स्थिरता का निर्धारण कर सकते हैं, तो यह मुद्दा "स्वीकृत संख्या" की वैधानिक परिभाषाओं से परे है। असली सवाल यह है कि क्या नियुक्त अधिकारियों को जनता के चुनावी फैसले को संभावित रूप से पलटने की अनुमति देने वाला कोई भी कानूनी ढाँचा संविधान के लोकतांत्रिक सार का उल्लंघन करता है।

संशोधनों ने 2019 के अधिनियम में धारा 15ए और 15बी को शामिल किया, जिससे एलजी को दो कश्मीरी प्रवासियों (एक महिला सहित) और पाकिस्तान के कब्जे वाले जम्मू-कश्मीर समुदाय से एक को नामित करने की अनुमति मिल गई, इसके अलावा दो महिलाओं को नामित करने की मौजूदा शक्ति भी है, यदि निर्वाचित विधानसभा में उनका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है। यह प्रभावी रूप से पाँच नामित सीटों का निर्माण करता है। उच्च न्यायालय द्वारा इस मुद्दे को तैयार करना इसमें शामिल दांव को स्वीकार करता है: यह "अल्पमत सरकार को बहुमत वाली सरकार में और इसके विपरीत" बदल सकता है, संभावित रूप से चुनावी प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है। यह चिंता निराधार नहीं है - लक्ष्मीनारायणन के तीन साल बाद, 2021 में, पुडुचेरी में नामित सदस्यों और दलबदलू निर्वाचित विधायकों ने कांग्रेस के नेतृत्व वाली सरकार के पतन में योगदान दिया। साथ ही, निर्वाचित प्रतिनिधियों के परामर्श के बिना, जम्मू-कश्मीर का केंद्र शासित प्रदेश बनना लोकतांत्रिक जवाबदेही को और भी महत्वपूर्ण बना देता है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किए जाने और जम्मू-कश्मीर में भारी समर्थन के बावजूद, राज्य का दर्जा बहाल करने का अधूरा वादा इस बात को पुष्ट करता है कि मौजूदा व्यवस्थाओं को लोकतांत्रिक शासन को मज़बूत करना चाहिए। मंत्रालय का यह तर्क कि नामांकन "निर्वाचित सरकार के कार्यक्षेत्र से बाहर" है, सर्वोच्च न्यायालय के विकसित होते न्यायशास्त्र का भी खंडन करता है। 2018 और 2023 के दिल्ली सेवा मामलों में, इसने फैसला सुनाया कि उपराज्यपाल को निर्वाचित सरकारों की सहायता और सलाह पर कार्य करना चाहिए, और विवेकाधीन शक्तियों को अपवाद माना जाना चाहिए। इस दृष्टि से देखा जाए तो मंत्रालय के तर्कों में दम नहीं है।

सीमित लाभ

टीकाकरण में एक अस्थायी कमी से मदद मिलेगी, लेकिन बहुत ज्यादा नहीं

एक राष्ट्र स्तर से निपटने से आरबीआई के आरामदायक बैंड से अधिक

महज दो साल पहले 2%-6% के स्तर पर, सरकार अब अपेक्षाकृत अधिक आरामदायक स्थिति में है जहां मुद्रास्फीति उस बैंड से कम आ रही है। जुलाई की खुदरा मुद्रास्फीति 1.55% रही, जो जून 2017 के बाद से सबसे कम है, यह लगभग पूरी तरह से खाद्य कीमतों में संकुचन के कारण संभव हुई। यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि जुलाई में सांख्यिकीय आधार प्रभाव कम था। यानी जुलाई 2024 में खाद्य मुद्रास्फीति स्वयं 13 महीने के निचले स्तर पर थी। इस जुलाई में कीमतों में उस आंकड़े से अधिक संकुचन एक सांख्यिकीय विसंगति के बजाय कीमतों में वास्तविक कमी को दर्शाता है। अर्थशास्त्रियों के बीच आम सहमति यह है कि बेहतर बुवाई, अच्छे मानसून और अनुकूल आधार प्रभाव के कारण यह जारी रहेगा क्योंकि पिछले साल के उत्तरार्ध में मुद्रास्फीति फिर से बढ़ गई थी। दूसरी सकारात्मक बात यह थी कि मुख्य मुद्रास्फीति, जिसमें ईंधन और खाद्य का प्रभाव शामिल नहीं है, गिरकर 4.1% हो गई, जो कि आरबीआई का लक्ष्य है। कुल मिलाकर, निवेश की संभावनाएँ अच्छी दिख रही हैं, खासकर मानसून की प्रगति को देखते हुए। कुछ जोखिम है, खासकर अगर भारत रूसी तेल छोड़कर कुछ ज़्यादा महंगे खाड़ी तेल को अपनाने का फैसला करता है। लेकिन सरकार के इस दावे को देखते हुए कि वह भारत के हितों को प्राथमिकता देगी, इसकी संभावना कम ही है। बहरहाल, ट्रंप-पुतिन की मुलाकात संभावित रूप से नवीनतम टैरिफ बाधाओं को महत्वहीन बना सकती है।

RBI को उम्मीद है कि जनवरी 2026 से ही विकास दर में तेजी आएगी। लेकिन अभी आत्मसंतुष्टि का समय नहीं है। हालाँकि भारत लगातार कम विकास और कम वृद्धि के ठहराव से दूर है, फिर भी यह विकास में मंदी की ओर बढ़ रहा है। औद्योगिक उत्पादन सूचकांक में नवीनतम वृद्धि दर 10 महीने के निचले स्तर पर रही, जिसमें पूंजीगत और उपभोक्ता वस्तुओं की गतिविधियाँ कमजोर रहीं। जून और जुलाई में GST राजस्व की वृद्धि दर घटकर एकल अंक रह गई। इस वित्तीय वर्ष में सकल प्रत्यक्ष कर संग्रह में संकुचन भी चिंताजनक है। जून में डीलरों को कार की बिक्री 18 महीने के निचले स्तर पर आ गई। UPI लेनदेन, जिसे पहले तेजी से बढ़ती आर्थिक गतिविधि का संकेत माना जाता था, 2025 में अब तक तीन बार पिछले महीने की तुलना में गिरा है। RBI ने इस वित्तीय वर्ष में 6.5% की वृद्धि दर का अपना पूर्वानुमान बरकरार रखा है, जो आशावादी लगता है। अगर अमेरिका के अतिरिक्त 25% टैरिफ हटा भी दिए जाएँ, तो भी शुरुआती 25% टैरिफ़ भारत की वृद्धि दर को 0.2 प्रतिशत अंक कम कर देंगे। भारत की वृद्धि दर इतनी मज़बूत नहीं है कि वह इस नुकसान को लेकर उदासीन हो। संरचनात्मक समस्याएँ बनी हुई हैं, माँग अभी भी कमज़ोर है, और मुद्रास्फीति में अस्थायी गिरावट अपने आप में ज़्यादा मददगार नहीं होने वाली है।

विश्वविद्यालयों में शैक्षणिक स्वतंत्रता का हनन

दीपक नैयर

एक अर्थशास्त्री हैं, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एमेरिटस विश्वविद्यालय, और पूर्व कुलपति, दिल्ली विश्वविद्यालय

उच्च शिक्षा में लगे सभी लोग यह मानना है कि शैक्षणिक स्वतंत्रता सर्वोपरि है क्योंकि विश्वविद्यालय हर चीज़ पर संदेह व्यक्त करने और प्रश्न पूछने के स्थान हैं। उत्कृष्टता की खोज में विचारों की खोज, मुद्दों पर बहस और स्वतंत्र रूप से सोचना आवश्यक है।

आखिरकार, ज्ञान का विकास तभी होता है जब हम मौजूदा ज्ञान पर सवाल उठाते हैं। इसका मतलब है कि छात्रों को सवाल पूछने की आज़ादी होनी चाहिए, ठीक उसी तरह जैसे शिक्षकों को अपने-अपने विषयों में प्रचलित ज्ञान पर सवाल उठाने की आज़ादी होनी चाहिए।

वास्तव में, संस्थानों के रूप में विश्वविद्यालयों को आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों के व्यापक संदर्भ में प्रश्न उठाने, राय व्यक्त करने या आलोचना व्यक्त करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

वास्तव में, ज्ञान का विकास विश्वविद्यालय शिक्षा का मूल है। छात्र उच्च शिक्षा की दुनिया में सीखने के लिए प्रवेश करते हैं।

मौजूदा ज्ञान को समझना पहला कदम है। प्रासंगिक प्रश्न पूछने की क्षमता, पारंपरिक ज्ञान की आलोचना करने की क्षमता, और मौखिक - यहाँ तक कि मुद्रित - शब्दों के अधिकार का विरोध करने का आत्मविश्वास, अगले क्रमिक चरण हैं। बेशक, सीखना एक सतत प्रक्रिया है जो कभी नहीं रुकती। इसलिए, यह विश्वविद्यालयों का काम है कि वे तय करें कि छात्रों को क्या पढ़ाया जाए, जिसे कहीं और से नियंत्रित नहीं किया जाना चाहिए।

इस बात पर कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए कि कौन छात्र दर्शकों को संबोधित करने के लिए आमंत्रित किया गया। इस स्थान को किसी भी तरह से सीमित करने से केवल सीखने पर ही असर पड़ेगा, जिससे आर्थिक और सामाजिक प्रगति को नुकसान पहुंच सकता है।

अनुसंधान की दुनिया को भी इसी प्रकार की स्वतंत्रता की आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों को अपनी शोध प्राथमिकताएँ तय करनी होती हैं। संकाय सदस्यों को अपना शोध एजेंडा तय करना होता है। बेशक, शोध के लिए वित्तीय सहायता बिना किसी वरीयता या पूर्वाग्रह के सहकर्मी समीक्षा पर आधारित होनी चाहिए।

असहमतिपूर्ण विचारों या अपरंपरागत सोच को, चाहे वह किसी भी विषय से संबंधित हो, प्रोत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि इसी से ज्ञान का विकास होता है। वास्तव में, मौलिक शोध के लिए न केवल स्वतंत्रता, बल्कि संसाधनों और समय की भी कहीं अधिक आवश्यकता होती है।

प्रतिभाशाली विद्वानों या विचारकों के उभरने, खिलने और फलने-फूलने के लिए ऐसा वातावरण आवश्यक है।

भारत में सामने आ रही वास्तविकता परेशान करने वाली है।

पाठ्यक्रम विनियमित एवं कठोर हैं। पाठ्य सामग्री निर्धारित की जाती है। वास्तव में, निर्धारित पठन सूची में क्या शामिल किया जाए या क्या शामिल किया जाए, यह कहीं और तय किया जाता है, ज़रूरी नहीं कि शिक्षक ही ऐसा करें। कुछ पाठ्य सामग्री को स्पष्ट रूप से बाहर रखा जाता है। आशाजनक शोध, जो मुख्यधारा से अलग हटकर हो, खासकर सामाजिक विज्ञान या मानविकी में, प्रतिबंधित कर दिया जाता है। शोध निधि को केंद्र सरकार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपनी शोध परिषदों और विभागों के माध्यम से नियंत्रित करती है। इस स्थिति में, भारत के विश्वविद्यालयों में मौलिक शोध असंभव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है। यह कोई संयोग नहीं है कि हमारे विश्वविद्यालयों ने कोई नोबेल पुरस्कार विजेता नहीं दिया है।

यहां तक कि छात्रों और शिक्षकों को भी स्वतंत्रता है कि वे परिसर में चर्चा या बहस आयोजित करना, जिसे भारतीय संविधान की आलोचना के रूप में देखा जाता है।

यह शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को नुकसान पहुंचा रहा है, साथ ही शोध में चिंतन और सृजनात्मकता को बाधित कर रहा है; दीर्घकाल में अर्थव्यवस्था, समाज और राजनीति को नुकसान होगा।

जनता पार्टी या केंद्र और उसके शासित राज्यों में उसकी सरकारों की स्वतंत्रता पर हर जगह, अक्सर प्रशासनिक या दंडात्मक कार्रवाई का प्रतिबंध लगा दिया जाता है। स्वतंत्रता पर और भी अंकुश लगाया जाता है, क्योंकि सोशल मीडिया पोस्ट के कारण कभी-कभी विश्वविद्यालयों द्वारा अनुशासनात्मक कार्रवाई या सरकारों द्वारा कानूनी कार्रवाई की जाती है।

कई केंद्रीय विश्वविद्यालयों में, यदि कोई संकाय सदस्य विदेश में किसी सम्मेलन में भाग लेने के लिए ड्यूटी अवकाश के लिए आवेदन करता है, तो उसे एक लिखित वचन देना होता है, जिसमें कहा जाता है: "मैं किसी भी सरकार विरोधी गतिविधियों में भाग नहीं लूंगा...जब मैं विदेश में हूं, चाहे सामाजिक कर्तव्य पर या व्यक्तिगत यात्रा पर, मैं सरकारी कर्मचारी आचरण नियमों के सभी प्रावधानों के अधीन रहूंगा, जिसमें प्रेस से संबंध और सरकार की आलोचना से संबंधित प्रावधान भी शामिल हैं...इसके अलावा, मैं समझता हूं कि...इन प्रावधानों का कोई भी उल्लंघन, चाहे भारत में किया गया हो या विदेश में, मुझे अनुशासनात्मक कार्रवाई के लिए समान रूप से उत्तरदायी बनाएगा।"

इस तरह की घुसपैठ, विभिन्न रूपों में, अब हो रही है निजी विश्वविद्यालयों तक भी इसका विस्तार किया गया है। छात्रों या संकाय सदस्यों की असहमति या आलोचनात्मक आवाज़ों को अनुशासनात्मक कार्रवाई से दबा दिया जाता है। कुछ मामलों में, यह और भी आगे बढ़ जाता है, क्योंकि जोखिम से बचने वाले प्रमोटर भी उनके साथ आ जाते हैं, क्योंकि वे केंद्र सरकार या उन राज्य सरकारों को नाराज़ या नाराज़ नहीं करना चाहते जहाँ उनके विश्वविद्यालय स्थित हैं।

स्वायत्तता और जवाबदेही: राजनीतिक लोकतंत्र के व्यापक संदर्भ में, जहाँ विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा प्रदान करने के अलावा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, विश्वविद्यालय स्थलों की स्वायत्तता भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। अर्थव्यवस्था में, वे विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अनुसंधान एवं विकास, नवाचार और आर्थिक या सामाजिक नीतियों के लिए विचारों का स्रोत हैं। समाज में, वे संकाय सदस्यों में से जन बुद्धिजीवियों के रूप में विवेक के रक्षक हैं, जो सार्वजनिक क्षेत्र से जुड़े हैं और अपने स्तंभों या व्याख्यानों में नागरिकों को जानकारी प्रदान करते हैं। राजनीति में, सरकारों के प्रदर्शन का उनका मूल्यांकन या आकलन जवाबदेही को बढ़ावा देता है।

बेशक, इस स्वायत्तता के साथ-साथ जवाबदेही भी होनी चाहिए। लेकिन सरकारों के लिए यह समझना ज़रूरी है कि विश्वविद्यालयों को संसाधन मुहैया कराने से उन्हें नियंत्रण का अधिकार नहीं मिल जाता।

ये संसाधन सार्वजनिक विश्वविद्यालयों के लिए सार्वजनिक धन हैं, जो मौजूदा या बनाए जा सकने वाले संस्थागत तंत्रों के माध्यम से छात्रों और समाज के प्रति जवाबदेह हैं। इस उद्देश्य के लिए, यह आवश्यक है कि विश्वविद्यालयों में शासन की संरचनाएँ जवाबदेही के लिए उपयुक्त और अनुकूल हों। सुशासन आवश्यक है, लेकिन पर्याप्त नहीं। सार्वजनिक क्षेत्र में भी जाँच और संतुलन होना चाहिए।

इस संदर्भ में विश्वविद्यालयों की रैंकिंग एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अपनी सीमाओं के बावजूद, ये रैंकिंग छात्रों, उनके अभिभावकों और समग्र समाज को जवाबदेही के लिए एक संस्थागत तंत्र प्रदान करती हैं।

यह अत्यंत आवश्यक है कि नियामक संरचनाएँ विश्वविद्यालयों को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान करें - प्रशासनिक, वित्तीय और शैक्षणिक। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एक आवश्यक शर्त है।

मौजूदा संसदीय या विधायी अधिनियम हमारे विश्वविद्यालयों के निर्माण में भी कई बाधाएँ और बंधन हैं। इसलिए, एक दृष्टिकोण के रूप में, नियामक ढाँचों में सुधार करना, विश्वविद्यालयों को स्वायत्तता प्रदान करना और प्रणालियों के माध्यम से जवाबदेही सुनिश्चित करना कहीं बेहतर होगा – हस्तक्षेप या नियंत्रण के बजाय – ताकि एक ऐसा वातावरण बनाया जा सके जो विचारों की स्वतंत्रता को प्रोत्साहित करे और सीखने के लिए अनुकूल हो।

एकरूपता की चाहत सोच, रचनात्मकता, समझ और ज्ञान का सबसे बड़ा दुश्मन है, जो केवल खुले समाजों में ही पनप सकता है। एक ही बात सभी पर लागू होती है, यह एक भयावह धारणा है। वास्तव में, विविधता और विभेदीकरण उच्च शिक्षा में उत्कृष्टता की खोज का एक अभिन्न अंग हैं।

विश्वविद्यालयों में शैक्षणिक स्वतंत्रता को नियंत्रित करने की सरकारें और उनकी कोशिशें न केवल भारत में बल्कि अर्जेंटीना, हंगरी और तुर्की जैसे देशों में भी सीमित हैं, जहां लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई सरकारें हैं।

बेशक, अफ्रीका और एशिया के तानाशाही शासन वाले देशों में शैक्षणिक स्वतंत्रता पर बहुत ज़्यादा पाबंदियाँ हैं। चीन, रूस और वियतनाम जैसे एकदलीय शासन वाले देशों में भी इस पर अंकुश लगा है। चीन कुछ हद तक अलग है।

भले ही शिक्षाविदों के लिए - विशेष रूप से सामाजिक विज्ञान और मानविकी में - सार्वजनिक क्षेत्र में लिखने या बोलने की स्वतंत्रता अत्यधिक प्रतिबंधित है, फिर भी प्रमुख विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में शैक्षणिक नियुक्तियों की गुणवत्ता में वरीयता या पूर्वाग्रह से प्रेरित होकर कोई समझौता नहीं किया जाता है।

वास्तविक आश्चर्य तो संयुक्त राज्य अमेरिका में है, जहां विश्वविद्यालयों में शैक्षणिक स्वतंत्रता एक सदी से भी ज़्यादा समय से पवित्र रही है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की संघीय सरकार अनुसंधान अनुदानों में कटौती कर रही है और अपने प्रमुख सार्वजनिक विश्वविद्यालयों पर प्रतिबंध लगा रही है। अगर ऐसा ही चलता रहा, तो शिक्षा, अनुसंधान, विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार में अमेरिकी विश्वविद्यालयों की अग्रणी स्थिति क्षीण हो जाएगी।

सरकारें विश्वविद्यालयों पर नियंत्रण इसलिए चाहती हैं क्योंकि उन्हें आलोचना या असहमति का डर रहता है। उतना ही महत्वपूर्ण यह भी है कि अगर असुरक्षा नहीं तो बेचैनी का एहसास ज़रूर होता है, क्योंकि शैक्षणिक स्वतंत्रता से सशक्त विश्वविद्यालय ऐसे सवाल पूछते हैं जिन्हें अशिष्ट माना जाता है। बेशक, कुछ देशों में, सरकारें सिर्फ़ वैचारिक अनुरूपता चाहती हैं। ज़्यादातर विश्वविद्यालय अपनी स्वायत्तता इसलिए छोड़ देते हैं क्योंकि वे अपने शिक्षण और शोध के लिए काफ़ी हद तक सरकारी अनुदान पर निर्भर हैं। शिक्षाविदों को, व्यक्तिगत रूप से, अक्सर डर या समझौते के कारण चुप करा दिया जाता है, जबकि कुछ लोग पुरस्कारों के लिए अपनी मान्यताओं का त्याग करने को तैयार रहते हैं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

कहानी का सार सरल है। विश्वविद्यालयों में अकादमिक स्वतंत्रता का हनन अनिवार्य रूप से शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को नुकसान पहुंचाएगा, ठीक उसी तरह जैसे यह अनुसंधान में सोच और रचनात्मकता को बाधित करेगा। ज़ाहिर है, छात्रों और शिक्षकों की हालत सबसे ज़्यादा ख़राब होगी। हालाँकि, अंततः अर्थव्यवस्था, समाज और राजनीति को नुकसान होगा।

एशिया में प्रभाव की लड़ाई में एक बड़ा बदलाव

आद्या माधवन

अनुसंधान विश्लेषक हैं, तक्षशिला संस्था

टी दुनिया ने पहली बार एक बड़े बदलाव को देखा दूसरे नागोर्नो-काराबाख युद्ध (2020) के दौरान युद्ध कैसे लड़े जाते हैं: ड्रोन की बढ़ती हुई अभिन्न भूमिका। भारत और पाकिस्तान के लिए, ऑपरेशन सिंदूर (7-10 मई) ने इस बदलाव को पुख्ता किया, क्योंकि मानवरहित हवाई वाहन (यूएवी) और मानवरहित लड़ाकू हवाई वाहन (यूसीएवी) अब केवल टोही ज़रूरतों से आगे बढ़कर सटीक हमलों के लिए उपयोगी बन गए।

आधुनिकीकरण की कवायद झड़पों के बाद, भारत अपनी सेना को उन्नत और आधुनिक बनाने की कोशिश कर रहा है। 2024 में, भारत ने अमेरिका से स्काईगार्डियन और सीगार्डियन मॉडल सहित 31 MQ-9B रीपर्स का ऑर्डर दिया है। ये विमान भारत की समुद्री क्षेत्र जागरूकता की ज़रूरत को पूरा करेंगे और दोनों देशों के बीच रणनीतिक साझेदारी को मज़बूत करेंगे। फिर भी, यह विविध भूभागों और कई विवादित सीमाओं वाले देश की ज़रूरतों में से केवल एक को ही आंशिक रूप से पूरा करता है। अपने विशाल सीमा क्षेत्रों को देखते हुए,

उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पाकिस्तान और चीन के साथ बढ़ते तनाव को देखते हुए, भारत को ऐसी प्रणालियों की आवश्यकता है जो उच्च ऊंचाई पर निगरानी करने में सक्षम हों - बड़ी, निश्चित-पंख वाली लंबी दूरी की प्रणालियां जो सटीक हमलों के दौरान महत्वपूर्ण पेलोड पहुंचा सकें, और सटीक हमलों के लिए छोटी, लागत-प्रभावी प्रणालियां।

वर्तमान में भारत जिन मानवरहित प्लेटफार्मों का उपयोग कर रहा है, परिचालन में इनमें से कुछ ही ज़रूरतों को पूरा किया गया है। अपेक्षाकृत पुराने हारोप लोइटरिंग म्यूनिशन और मध्यम-ऊंचाई वाली लंबी दूरी की हेरॉन जैसी इज़राइली प्रणालियाँ क्रमशः हवाई हमलों और निगरानी के लिए उपयोगी हैं। लेकिन ये बाज़ार में उपलब्ध सबसे उन्नत प्रणालियाँ नहीं हैं। इनके अलावा, भारत बड़े पैमाने पर पिछले दशक से पहले आयातित पुरानी प्रणालियाँ और कुछ स्वदेशी मॉडल ही इस्तेमाल करता है।

दोनों देशों के बीच लंबे रक्षा संबंधों के बावजूद चूंकि भारत अत्याधुनिक ड्रोन खरीदना चाहता है, इसलिए अब उसके लिए सीधे तौर पर अमेरिका पर निर्भर रहना समझदारी नहीं है।

चूंकि मानवरहित हवाई वाहन सटीक हमलों के लिए महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं,

भारत अंतरिक्ष में जगह भरने से लाभ उठा सकता है

इंडो-पैसिफिक ड्रोन बाजार

खरीद। एक बदलाव होने की संभावना है जहाँ अमेरिका बिजली संयंत्रों और इलेक्ट्रॉनिक पेलोड जैसे घटकों के लिए अधिक महत्वपूर्ण हो जाएगा।

अग्रणी मानवरहित हवाई प्रणालियों की चर्चा अक्सर अमेरिका, चीन, तुर्की और इज़राइल की ओर लौटती है। हालाँकि, हालिया रिपोर्टों में यह सवाल उठाया गया है कि क्या अमेरिकी ड्रोन अपनी घरेलू माँगों को पूरा करने के लिए भी पर्याप्त हैं, निर्यात बाजार पर अपना दबदबा बनाने की तो बात ही छोड़ दें।

अमेरिकी ड्रोन कम्पनियों के साथ अभ्यास के एक पर्यवेक्षक द्वारा लिखे गए न्यूयॉर्क टाइम्स के एक लेख में अमेरिकी प्रणालियों और रूस व चीन द्वारा निर्मित प्रणालियों के बीच बढ़ते अंतर का खुलासा किया गया है।

इन चिंताओं के अनुरूप, 'अमेरिकी ड्रोन प्रभुत्व' कार्यकारी आदेश को अमेरिकी ड्रोन उत्पादन की व्यापक योजनाओं के साथ लागू किया गया। सीएनएएस की एक रिपोर्ट में पाया गया है कि मिसाइल प्रौद्योगिकी नियंत्रण व्यवस्था (एमटीसीआर) के प्रति अमेरिका के अडिग रवैये के कारण, वह यूएवी निर्यात बाजार में चीन और तुर्की से काफी पीछे रह गया है, और 2023 के अंत तक बाजार का केवल 8% ही उसके पास रह जाएगा। हालाँकि एमटीसीआर में हालिया और आगामी सुधारों से अमेरिका को निर्यात बाजार में और अधिक प्रवेश करने का अवसर मिलेगा, फिर भी वह पहले से ही पिछड़ रहा है।

आज, भारत अपने शस्त्रागार में इन कमियों को आयात, संयुक्त उद्यमों और घरेलू उत्पादन के माध्यम से पूरा करने की कोशिश कर रहा है, और मुख्यतः इज़राइल और यूरोपीय देशों पर निर्भर है। चीन और तुर्की, दोनों के साथ अपने वर्तमान संबंधों को देखते हुए, भारत के लिए महत्वपूर्ण रक्षा तकनीकों के लिए किसी भी देश पर निर्भर रहने की संभावना नहीं है। अपने हितों को आगे बढ़ाने के प्रयासों के साथ, भारत को अपनी तकनीकी प्रगति का लाभ उठाकर व्यापक हिंद-प्रशांत क्षेत्र के लिए फिक्स्ड-विंग यूएवी का आपूर्तिकर्ता बनना चाहिए।

चीन कारक वियतनाम, फिलीपींस, ताइवान, दक्षिण कोरिया और जापान सहित कई देशों के चीन के साथ संबंध तनावपूर्ण ही कहे जा सकते हैं। इन देशों के लिए समुद्री क्षेत्र जागरूकता आवश्यक है ताकि वे चीन द्वारा 'ग्रे-ज़ोन' युद्ध के इस्तेमाल पर नज़र रख सकें और उसका मुकाबला कर सकें।

विवादित क्षेत्रीय दावों को लागू करने के लिए, वे अपने तटरक्षक बल और समुद्री मिलिशिया जैसे एजेंटों का उपयोग करते हैं। इससे उन्हें अपनी संप्रभुता की रक्षा करने और समुद्री व्यापार तथा ऊर्जा अन्वेषण जैसे महत्वपूर्ण आर्थिक हितों को निरंतर अतिक्रमण से बचाने में भी मदद मिलती है।

इजराइल पश्चिम एशिया में अपने लम्बे और लंबे संघर्ष में उलझा हुआ है, और इस क्षेत्र के लिए एक विश्वसनीय आपूर्तिकर्ता होने की संभावना नहीं है।

चूंकि अमेरिका इस दौड़ में बने रहने के लिए संघर्ष कर रहा है, इसलिए उच्च प्रदर्शन और लागत प्रभावी प्रणालियों की खरीद के लिए तुर्की प्राथमिक विकल्प है।

यह देखते हुए कि भारत और तुर्की के बीच काफी प्रतिकूल संबंध हैं, यह भारत के हित में है कि वह तुर्की को ड्रोन कूटनीति के माध्यम से अपने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार करने से रोके।

हिंद-प्रशांत क्षेत्र के कई देश भारत के साथ समान भौगोलिक क्षेत्र साझा करते हैं, और परिणामस्वरूप, समुद्री क्षेत्र जागरूकता और उच्च-ऊंचाई वाले सीमावर्ती क्षेत्रों में गश्त के लिए अनुकूलित प्रणालियों की तत्काल आवश्यकता है। यदि भारत अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप प्रणालियाँ विकसित करता है, तो वे उसके निकटवर्ती पड़ोसियों की रणनीतिक आवश्यकताओं के लिए भी उपयुक्त होंगी।

एक विवादित क्षेत्र: हिंद-प्रशांत क्षेत्र में ड्रोन बाज़ार में अमेरिका के आकार का शून्य, एक बेहद विवादित क्षेत्र बनता जा रहा है, जिसे भरने से भारत को फ़ायदा होगा। इससे न सिर्फ़ कई देशों के साथ व्यापार और प्रभाव बढ़ेगा, बल्कि देश की अपनी रणनीतिक ज़रूरतें भी पूरी होंगी।

नौकरशाही की लालफीताशाही और सार्वजनिक क्षेत्र के प्रभुत्व वाले रक्षा क्षेत्र से पिछड़ने के बावजूद, भारत के लिए इज़राइल के साथ अपने मौजूदा संबंधों का लाभ उठाना और संयुक्त उत्पादन उपक्रमों से मिली सीख का उपयोग अपने घरेलू यूएवी पारिस्थितिकी तंत्र को बेहतर बनाने में करना फायदेमंद होगा। केवल घरेलू स्तर पर ही उत्पादन करने के अलावा, हिंद-प्रशांत क्षेत्र में समान विचारधारा वाले देशों के साथ प्रौद्योगिकी-साझाकरण व्यवस्थाएँ आपसी हितों को बढ़ावा देंगी और इस क्षेत्र में विश्वास-आधारित संबंधों को बढ़ावा देंगी, जो तेज़ी से ध्रुवीकृत होता जा रहा है।

संपादक के नाम चिठी

आवारा कुत्तों पर नियंत्रण देश में आवारा कुत्तों की आबादी बढ़ रही है। अगर इस पर ठोस योजना बनाकर काम नहीं किया गया, तो कुत्तों की संख्या मानव आबादी से ज़्यादा हो सकती है क्योंकि अभी तक कोई विश्वसनीय संख्या नहीं है।

आवारा कुत्तों की बात तो दूर, पशु कल्याण कार्यकर्ताओं का यह तर्क कि आवारा कुत्तों की आबादी कम करने से चूहों की आबादी बढ़ जाएगी, अतार्किक है। बिल्लियाँ चूहों का सबसे बड़ा शिकारी होती हैं।

चूहे। चूंकि कुत्तों पर जन्म नियंत्रण विधियों का श्वान आबादी पर ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ा है, इसलिए मानव जीवन की रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है।

डॉ. वी. पुरुषोत्तमन, चेन्नई

मैं यह सवाल पशु अधिकार कार्यकर्ताओं और उन लोगों से पूछना चाहता हूँ जिनकी प्राथमिक चिंता आवारा कुत्तों का कल्याण है। क्या उन्होंने किसी रेबीज़ से पीड़ित व्यक्ति की मृत्यु देखी है? यह सबसे हृदयविदारक घटनाओं में से एक है।

जीवन के सबसे यादगार पल। किसी व्यक्ति को बहुत दर्द में देखना, बेचैनी महसूस करना, निगलने में बहुत कठिनाई होना, बहुत ज़्यादा लार आना और तरल पदार्थों से डरना, मतिभ्रम होना, आंशिक लकवाग्रस्त होना और फिर

मिट जाना दुखद है। मेरी उनसे अपील है कि वे वस्तुनिष्ठ रहें और अच्छा सोचें।

सुमित्रा गोपाल, हैदराबाद

letters@thehindu.co.in पर भेजे गए पत्रों में डाक पता अवश्य होना चाहिए।

राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली • बृहस्पतिवार • 14 अगस्त • 2025
www.rashtriyasahara.com

जब तक शरीर स्वस्थ है, इंद्रियों की शक्ति क्षीण नहीं हुई तथा बुढ़ापा नहीं आया है, तब तक समझदार को अपने हित साध लेने चाहिए।
-भर्तृहरि

करे कोई, भरे कोई

पुराने वाहन मालिकों के लिए सुप्रीम कोर्ट ने राहत भरा आदेश दिया है। दिल्ली-एनसीआर में दस साल पुराने डीजल व पंद्रह साल पुराने पेट्रोल वाहनों पर प्रतिबंध लगाने वाले आदेश पर रोक लगा दी है। आदेश है कि चार हफ्ते बाद होने वाली सुनवाई से पहले किसी भी वाहन मालिक के खिलाफ सिर्फ वाहन के पुराना होने के कारण दंडात्मक कार्रवाई नहीं की जाए। अक्टूबर, 2018 में एनजीटी यानी नैशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल के आदेशानुसार पुराने वाहनों को सड़कों पर चलने की अनुमति न देने व अनुपालन न करने की स्थिति में वाहनों की जब्ती पर रोक लगाने के फैसले को वापस लेने वाली याचिका पर सुनवाई हुई। नवम्बर, 2014 में ट्रिब्यूनल ने कहा था कि यह निर्देश बिना किसी अपवाद के सभी वाहनों,यानी दो पहिया, तीन/चार पहिया व हल्के-भारी वाहनों वाणिज्य व अन्य सभी पर लागू होगा। 2023-24 के एक सर्वे के अनुसार दिल्ली में तकरीबन अस्सी लाख गाड़ियां हैं जो न सिर्फ हानिकारक गैस उत्सर्जित करती हैं, बल्कि धूल भी बड़ी मात्रा में उड़ाती हैं। दिल्ली में 12% वायु प्रदूषण के लिए वाहनों को दोषी माना जा रहा है। इस प्रतिबंध को शीर्ष अदालत में चुनौती दी गई। बीती जुलाई में दिल्ली सरकार ने अचानक पुराने वाहनों को ईंधन न देने का निर्देश जारी कर दिया था जिसका न सिर्फ दिल्ली/एनसीआर, बल्कि देश भर में भारी विरोध हुआ। लोगों ने इसे वाहन निर्माता कंपनियों का दबाव तक कहा तथा इसे जनता के साथ अन्याय बताया। एक लाठी से सबको हांकने वाला यह प्रतिबंध विवेकपूर्ण नहीं कहा जा सकता। प्रति दस साल के दरम्यान गाड़ी बदलना, आम भारतीय नागरिक के लिए असंभव है। बेशक, प्रदूषण का मसला हर किसी के लिए महत्त्वपूर्ण है मगर वाहन प्रदूषण पर पाबंदी लगाने के तरीके वैज्ञानिक और तकनीकी होने चाहिए। प्रदूषक वाहनों की सटीक जांच, निर्धारित तंत्रों की उचित भूमिका व उत्सर्जन का पैमाना आदि को केंद्रीय मोटर वाहन अधिनियम के तहत सख्त बनाया जाए। प्रौद्योगिकीय स्तर पर बदलाव की संभावनाओं पर विचार हो, वाहन निर्माताओं को उत्सर्जन मानकों के प्रति अधिक जिम्मेदार बनाने संबंधी कदम उठाए जाएं ताकि वाहन मालिकों को प्रताड़ित करने की बजाय संतुलित नीति बना कर सामूहिक तौर पर जिम्मेदारी वहन की जा सके। लापरवाह सरकारों व सिस्टम को अपनी असफलताओं व कोताहियों का सारा दारोमदार नागरिकों पर लादने का खमियाजा भुगतने के लिए भी तैयार होना चाहिए।

नागरिकता के सबूत

बंबई हाई कोर्ट ने मंगलवार को एक मामले में सुनवाई करते हुए टिप्पणी की कि कोई व्यक्ति सिर्फ आधार कार्ड, पैन कार्ड या मतदाता पहचान पत्र जैसे दस्तावेज रखने भर से भारत का नागरिक नहीं हो जाता। अदालत ने यह टिप्पणी कथित तौर पर बांग्लादेश से अवैध रूप से भारत में प्रवेश करने वाले एक व्यक्ति को जमानत देने से इनकार करते हुए की। जमानत अर्जी दाखिल करने वाले व्यक्ति पर जाली और फर्जी दस्तावेज के आधार पर भारत में एक दशक से भी अधिक समय तक रहने का आरोप है। जस्टिस अमित बोरकर की पीठ ने कहा कि आधार कार्ड, पैन कार्ड और मतदाता पहचान पत्र जैसे दस्तावेज केवल पहचान या सेवाओं का लाभ उठाने के लिए हैं। जस्टिस बोरकर ने बांग्लादेशी नागरिक बाबू अब्दुल रऊफ सरदार को जमानत देने से इनकार कर दिया जो बिना वैध पासपोर्ट या यात्रा दस्तावेज के अवैध रूप से भारत में घुसा था। उसने कथित तौर पर फर्जीवाड़ा कर आधार, पैन कार्ड, वोटर कार्ड और पासपोर्ट बनवा लिए थे। दरअसल, भारतीय नागरिकता प्राप्त करने के लिए 1955 में संसद में नागरिकता अधिनियम के तहत एक स्थायी और पूर्ण प्रणाली है। जस्टिस बोरकर ने इस अधिनियम के प्रावधानों और व्यवस्था को ही भारत में राष्ट्रीयता से जुड़े सवालों पर निर्णय लेने संबंधी मुख्य और नियंत्रक कानून करार दिया। इसी कानून से तय होता है कि कौन नागरिक हो सकता है, नागरिकता कैसे प्राप्त की जा सकती है और किन परिस्थितियों में इसे खोया जा सकता है। आधार, पैन और वोटर कार्ड बेशक, महत्त्वपूर्ण दस्तावेज हैं, जिनके आधार पर व्यक्ति अपनी पहचान और सेवाओं का लाभ उठाने के लिए अर्हता हासिल कर लेता है, लेकिन इतने महत्त्वपूर्ण होने के बावजूद महज इन दस्तावेज के पास होने भर से नागरिकता अधिनियम में निर्धारित नागरिक संबंधी बुनियादी अनिवार्यताएं खारिज नहीं हो जातीं। नागरिकता के लिए जरूरी है कि अधिनियम में उल्लिखित आवश्यकताएं पूरी की जाएं। इन आवश्यकताओं में आधार, पैन और वोटर कार्ड के सत्यापन संबंधी आवश्यकता भी शामिल है। अलबत्ता, इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण दस्तावेज को इस तरह से नकार दिए जाने से प्रश्न स्वाभाविक है कि आखिर, आमजन के लिए नागरिकता को साबित करने का स्पष्ट तरीका क्या हो। यह जटिल प्रश्न अनुत्तरित नहीं रहना चाहिए। जरूरी है कि आम नागरिक भ्रम न पड़ने पाए।

कटाक्ष/ सहीराम

रहस्य दर रहस्य

अभी धनखड़ साहब के इस्तीफे का ही रहस्य नहीं सुलझा था कि उन्होंने क्यों इस्तीफा दिया, जिस दिन इस्तीफा दिया, उस दिन दोपहर बाद के चार घंटों में आखिर हुआ क्या था वगैरह-वगैरह कि अब एक और रहस्य लोगों को परेशान करने लगा कि धनखड़ साहब कहां गायब हो गए। वरना वे तो राज्य सभा में संकट के बादलों की तरह, खौफ की छाया की तरह, ज्ञान की धुंध की तरह हमेशा छाए ही रहते थे। पर अब तो वे गायब ही हो गए हैं। बिल्कुल वैसे ही जैसे विदाई फोटो खिंचवाने के बाद थ्री इडियट्स वाला रैंचो गायब हो गया था और उसके दोस्त-साथी तलाशते ही रह गए थे कि बहती हवा सा था वो, उसे ढूंढो।

धनखड़ साहब बहती हवा से तो बिल्कुल भी नहीं थे, वे तो मास्साब के डंडे की तरह से थे। बेशक, वे बहती हवा से नहीं थे, फिर भी लोग कह रहे हैं कि ढूंढो उन्हें। अब धनखड़ साहब कोई जेएनयू वाले नजीब तो हो नहीं सकते कि पता ही न चले कि बंदा कहां गायब हो गया। नजीब को सीबीआई तक नहीं ढूंढ पाई। पर धनखड़ साहब तो नजीब नहीं हैं न। बेशक, नजीब का झगड़ा भी भाजपाइयों से ही था और धनखड़ साहब भी आखिर में उनसे से ही टकराए। पर नजीब तो गरीब था, मुसलमान था। वे थोड़े ही हैं। लोग अब धनखड़ साहब को बिल्कुल जज लोया की तरह याद कर रहे हैं। जज लोया को याद करना एक खौफ को याद करना है। खौफ पहले ही बहुत है भाई, पहले ही पिंडलियां कांप रही हैं, उसे और क्यों बढ़ाने में लगे हो। उन्हें किसी और तरह भी याद कर लो। जैसे गायब होते रोजगारों की तरह याद कर लो। जैसे गायब होते आपसी प्यार-मोहब्बत की तरह याद कर लो, जैसे गायब होती गंगा-जमुनी संस्कृति की तरह से याद कर लो, जैसे झूठ के सैलाब में गायब हुए गांधी के सत्य की तरह याद कर लो। जैसे गायब होते मानवीय मूल्यों की तरह याद कर लो। जैसे राजनीति से गायब हुई नैतिकता की तरह याद कर लो, जैसे गायब होते लोकतंत्र की तरह भी याद कर लो। भाई इन वर्षों में बहुत सी चीजें गायब हो गईं। जज लोया की तरह से ही उन्हें क्यों याद करना है यार। वैसे गायब हुई इन सारी चीजों की तरह से धनखड़ साहब को याद करना उन्हें कुछ ज्यादा ही सम्मान देना होगा। उन्हें तो गायब होने वाले बैंक लुटेरों की तरह ही याद करना चाहिए। नहीं क्या?

मोदी को लेकर ऊहा पोह !

संघ परिवार
अनिल जैन

यह बहस का बिल्कुल बेमानी है कि क्या प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सुप्रीमो मोहन राव भागवत 75 वर्ष के हो जाने पर अपना पद छोड़ देंगे? दोनों ही नेता आगामी कुछ दिनों बाद अपने जीवन के 75 वर्ष पूरे करने वाले हैं। इस बहस का आधार यह रहा है कि 11 साल पहले भाजपा में मोदी और अमित शाह का युग शुरू होने के बाद भाजपा के कई दिग्गज नेताओं को इस आधार पर 'मार्गदर्शक' बना कर घर बैठा दिया गया था कि उनकी उम्र 75 साल से ज्यादा हो गई है। मोदी और शाह के इस फैसले को उस समय संघ नेतृत्व ने भी मौन समर्थन दिया था।

जिन नेताओं को 75 साल का होने पर 'मार्गदर्शक मंडल' नामक कूड़ेदान में डाला गया था, उनमें लालकृष्ण आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी, शांता कुमार, जसवंत सिंह, यशवंत सिन्हा आदि शामिल थे। इन नेताओं को किनारे करने के बाद भी मोदी और शाह ने अगले पांच साल तक यह अभियान जारी रखा और 2019 के लोक सभा चुनाव में कई नेताओं को 75 साल का होने पर घर बैठाया।

हालांकि 2019 से 2024 आते-आते 75 साल की उम्र में नेताओं को घर बैठाने का यह पैमाना खत्म हो गया हो गया। भाजपा ने 2024 के लोक सभा चुनाव में ऐसे कई नेताओं को उम्मीदवार बनाया जो 75 वर्ष के करीब थे या 75 पार कर चुके थे। बहरहाल, कहने का आशय है कि भाजपा के संविधान में 75 वर्ष की आयु सीमा वाला कोई प्रावधान नहीं है। अटल बिहारी वाजपेयी 1998 में दूसरी बार 74 वर्ष की उम्र में प्रधानमंत्री बने थे और 79 वर्ष की उम्र तक उस पद बने रहे थे। आडवाणी भी 2004 में 77 वर्ष की उम्र में लोक सभा में नेता विपक्ष बने थे और 2009 के लोक सभा चुनाव में भी वे एनडीए की ओर से प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार थे। जहां तक संघ की बात है, उसका तो कोई संविधान ही नहीं है और वहां सब कुछ परंपरा के आधार पर चलता है।

संघ के तीसरे सरसंघचालक मधुकर दत्तात्रेय देवरस ने 81 वर्ष की उम्र में बीमारी की वजह से पद छोड़ा था। उनके बाद सरसंघचालक बने प्रो. राजेंद्र सिंह उर्फ रज्जू भैया ने 78 वर्ष की उम्र में बीमारी की वजह से ही पद छोड़ा था। उनके बाद पांचवे सरसंघचालक केएस सुदर्शन से भी 81 वर्ष की उम्र में पद छुड़वाया गया था। इसलिए कोई कारण नहीं है कि मोहन भागवत 75 वर्ष पूरे करने पर पद छोड़ दें।

दरअसल, भागवत का 75 वर्ष पूरे होने पर रिटायर होने का सुझाव परोक्ष रूप से मोदी को निशाना बना कर ही दिया था, लेकिन इसका मतलब यह कतई नहीं है कि पूरा संघ अब मोदी से छुटकारा पाना चाहता है। यही वजह है कि

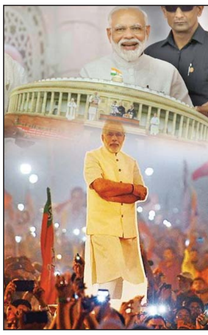

भागवत के बयान के तीसरे ही दिन उस पर संघ की ओर से सफाई दी गई कि भागवत के बयान का प्रधानमंत्री मोदी से कोई संबंध नहीं है। हालांकि इस सफाई में स्पष्ट नहीं हुआ कि यह सफाई आरएसएस के किस पदाधिकारी या प्रवक्ता ने दी है। जाहिर है कि यह बेनामी सफाई एक तरह से मीडिया में रोपी हुई खबर थी, जो बताती है कि संघ में भी सब कुछ ठीक नहीं चल रहा है और भाजपा के मौजूदा शीर्ष नेतृत्व पर भी संघ का अब वैसा काबू नहीं रह गया है, जैसा एक दशक पहले तक हुआ करता था।

दरअसल, मोदी कभी भी संघ की स्वाभाविक पसंद नहीं रहे। भाजपा की राजनीति में आडवाणी को किनारे कर दिए जाने के बाद संघ ने नितिन गडकरी को भविष्य के नेता के तौर पर आगे किया था। संघ चाहता था कि भाजपा 2014 का चुनाव गडकरी की अगुवाई में लड़े। इसलिए उन्हें पार्टी अध्यक्ष का दूसरा कार्यकाल देने का फैसला भी संघ कर चुका था परंतु आडवाणी खेमा यूपीए सरकार के वित्त मंत्री चिदंबरम की मदद से गडकरी के कारोबारी ठिकानों पर आयकर के छापे डलवा कर उन्हें विवादास्पद बनाते हुए अध्यक्ष पद की दौड़ से बाहर करने में कामयाब हो गया था। उधर, मोदी पहले से ही दिल्ली की राजनीति में कूदने के लिए तैयारी कर रहे थे। उन्होंने अपने कॉरपोरेट शुभचिंतकों और उनके द्वारा पोषित मीडिया के जरिए ऐसा माहौल बनवा दिया था कि अब मोदी ही भाजपा को सत्ता तक ले जा सकते हैं। चूंकि 2014 के चुनाव में ज्यादा समय नहीं बचा था लिहाजा, संघ को मजबूरी में मोदी के नाम पर सहमत होना पड़ा।

भाजपा ने 2014 का चुनाव मोदी के नेतृत्व में लड़ा और पूर्ण बहुमत के साथ वह सत्ता में आई। प्रधानमंत्री बनने के बाद मोदी और भागवत की जुगलबंदी लंबे समय तक चली। मगर इस बीच दूसरी ओर मोदी ने मीडिया की मदद से अपने कद को ऊंचा कर लिया कि संघ ही नहीं, बल्कि भाजपा सहित संघ के सभी आनुषंगिक संगठन उनके आगे बौने नजर आने लगे। जिस भाजपा में कुछ साल पहले तक संघ की मर्जी के बगैर पत्ता भी नहीं खड़कता था, वहां देखते ही देखते स्थिति यह बन गई कि मोदी और शाह ने जिसको चाहा उसे मुख्यमंत्री, मंत्री और राज्यपाल बनाया। इस सिलसिले में पिछले साल हुए लोक सभा चुनाव के पहले भाजपा अध्यक्ष जेपी नड्डा के उस बयान को भी देखा जा सकता है, जिसमें उन्होंने कहा था कि भाजपा अब आत्मनिर्भर हो चुकी है और उसे अब चुनाव जीतने के संघ की जरूरत नहीं रह गई है। हालांकि बाद में उन्होंने सफाई दी कि उनके कहने का वह आशय नहीं था। जब भागवत ने 75 साल की उम्र होने पर रिटायर होने वाला बयान दिया तो उसका जवाब भी सांसद निशिकांत दुबे और मध्य प्रदेश के वयोवृद्ध नेता रामकृष्ण कुसमरिया जैसे नेताओं के जरिए दिलवाया जा चुका है। दुबे ने कहा है कि अगल 10-15 साल तक तो मोदी के बगैर भाजपा की कल्पना भी किसी को नहीं करनी चाहिए।

दरअसल, संघ में इस समय दो खेमे हैं। एक खेमा महाराष्ट्र के संघ पदाधिकारियों और प्रचारकों का है, जो अब मोदी को घर बैठाना चाहता है, जबकि दूसरा खेमा महाराष्ट्र के बाहर के पदाधिकारियों और प्रचारकों का है जो मोदी का कट्टर समर्थक है। दूसरे खेमे के नेता दत्तात्रेय होसबोले हैं, जो संघ के सर कार्यवाह हैं। संघ में सर कार्यवाह ही मुख्य कार्यकारी होता है। संघ के कुनबे में मोदी अभी भी इतने ताकतवर हैं कि उन्हें हटाने का फैसला कोई नहीं कर सकता। हां, वे चाहें तो संघ नेतृत्व में जब चाहे तब बदलाव जरूर करवा सकते हैं।

(लेख में विचार निजी हैं)

दरअसल, संघ में इस समय दो खेमे हैं। एक खेमा महाराष्ट्र के संघ पदाधिकारियों और प्रचारकों का है, जो अब मोदी को घर बैठाना चाहता है, जबकि दूसरा खेमा महाराष्ट्र के बाहर के पदाधिकारियों और प्रचारकों का है जो मोदी का कट्टर समर्थक है। दूसरे खेमे के नेता दत्तात्रेय होसबोले हैं, जो संघ के सर कार्यवाह हैं। संघ में सर कार्यवाह ही मुख्य कार्यकारी होता है। संघ के कुनबे में मोदी अभी भी इतने ताकतवर हैं कि उन्हें हटाने का फैसला कोई नहीं कर सकता। हां, वे चाहें तो संघ नेतृत्व में जब चाहे तब बदलाव जरूर करवा सकते हैं।

त्वचा को चमकदार और गठिया जैसी बीमारियों को हराने में कारगर 'सुपर फ्रूट' अंजीर

- विटामिन और मिनरल्स से भरपूर अंजीर के रोजाना सेवन से गठिया, लकवे तथा पेशाब में जलन जैसी समस्याओं में राहत मिलती है। इसमें भरपूर पोटेशियम पाया जाता है, जो दिल को स्वस्थ और ब्लड प्रेशर को कंट्रोल करने में मदद करता है। आयुष मंत्रालय इसके रोजाना सेवन की सलाह देता है
- आयुष मंत्रालय के अनुसार, अंजीर एक सुपरफ्रूट है जो स्वाद ही नहीं, बल्कि सेहत की गारंटी भी देता है। अंजीर में विटामिन सी होता है, जो रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ाता है, और बीमारियों से लड़ने में मदद करता है

(मीडिया इनपुट्स)

याद कीजिए कैग विनोद राय को जिन्होंने करोड़ों के काल्पनिक घोटाले खोज निकाले, याद कीजिए टूजी, कोयला घोटाला, कॉमनवेल्थ घोटाला जिनके कारण बने माहौल में मोदी और उनके साथ सत्ता पर काबिज हो गए। मौजूदा चुनाव आयोग राय की वापसी ही है।

स्वाति चतुर्वेदी, पत्रकार
@bainjal

नफरत का अंत तो विनाश ही है

देश का बंटवारा | प्रो. आर.के. जैन

14 अगस्त 1947, एक तारीख जो स्वतंत्रता के उल्लास के साथ-साथ अकथनीय त्रासदी की गवाह भी बनी। यह दिन न केवल देश का, बल्कि दिलों, रिश्तों और इंसानियत का बंटवारा था। लाखों जिंदगियां एक पल में उजड़ गईं; हंसी-खुशी से भरे घर खामोश मलबे में तब्दील हो गए। बच्चों की किलकारियों वाली गलियां खून और चीखों से सनीं। यह विभाजन नक्शे की रेखाओं तक सीमित नहीं रहा; इसने दिलों में ऐसी दरारें डालीं जो आज भी दर्द की कहानियां बयां करती हैं।

इस त्रासदी ने करोड़ों लोगों को उनकी जड़ों से उखाड़ फेंका। करीब डेढ़ करोड़ लोग अपनी जन्मभूमि छोड़ अनजान रास्तों पर चल पड़े। पंजाब, सिंध, बंगाल हर ओर बेघर हुए लोग अपने घर, खेत और सपने पीछे छोड़ कर भागे। कोई अमृतसर से लाहौर तो कोई कराची से दिल्ली या मुंबई की ओर। रास्ते में न भोजन, न पानी, न ही सुरक्षा। ट्रेनें, जो कभी जीवन की रफ्तार थीं, लाशों का मंजर बन गईं। इतिहासकार बताते हैं कि 10 से 12 लाख लोग हिंसा, भूख और बीमारियों की भेंट चढ़े। रेल की पटरियां शवों से पटीं, गांव आग में झुलसे, और नदियां खून से लाल हो गईं। यह वह मंजर था, जिसने आजादी की खुशी को मातम में डुबो दिया। विभाजन की पीड़ा केवल आंकड़ों की कहानी नहीं थी; यह हर उस इंसान की व्यक्तिगत त्रासदी थी, जिसने अपने परिवार, घर, और पहचान को खोया। बुजुर्ग अपनी संतानों को बचाने के लिए जान जोखिम में डालते रहे। महिलाएं भय और असुरक्षा के साये में जीने को मजबूर थीं। बच्चे, जो अभी दुनिया को समझने की उम्र में थे, रातोंरात अनाथ हो गए। पड़ोसी, जो कल तक एक-दूसरे के सुख-दुख में साथी थे, एक-दूसरे के खून के प्यासे बन गए। हिंसा शरीर को ही नहीं, बल्कि आत्मा को भी लहूलुहान कर गई।

इस त्रासदी का सबसे हृदयविदारक सच यह है कि यह अचानक नहीं उभरी। वर्षों की सामाजिक, राजनीतिक और औपनिवेशिक नीतियों ने समाज में ऐसी खाई बनाई जो समय के साथ गहरी और जहरीली होती गई। ब्रिटिश शासकों की 'बांटो और राज करो' की नीति ने नफरत के बीज बोए जिनका परिणाम 1947 में सामने आया। 15 अगस्त को तिरंगे ने आजादी का गान गाया, लेकिन 14

अगस्त की रात ने लाखों जिंदगियों को अंधेरे में डुबो दिया। यह स्वतंत्रता की कीमत थी, जिसे कोई नहीं चुकाना चाहता था। इस अंधेरे में भी मानवता की किरणें चमकीं जिन्होंने सब कुछ खोया, उन्होंने हार नहीं मानी। दिल्ली, मुंबई, अमृतसर, कोलकाता के शरणार्थी शिविरों में बस कर, खाली हाथ आए लोगों ने हिम्मत और मेहनत से नई जिंदगी बुनी। दुकानें खोलीं, खेत जोते, बच्चों को पढ़ाया, और समाज में अपनी जगह बनाई। यह उनकी अटूट इच्छाशक्ति का सबूत है, जिसने न केवल उनका, बल्कि आने वाली पीढ़ियों का भविष्य संवारा। मगर उनके दिलों में सवाल ताउम्र गूंजता रहा-यह सब क्यों हुआ? इस पीड़ा का जिम्मेदार कौन? यही कारण है कि 14 अगस्त को 'विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस' के रूप में मनाना जरूरी है। यह दिन केवल अतीत के घावों को सहलाने का नहीं, बल्कि उनसे सबक लेने का है। यह हमें सिखाता है कि धर्म, जाति, या भाषा के नाम पर खड़ी दीवारें इंसानियत को कमजोर करती हैं। हमें याद दिलाता है कि स्वतंत्रता का असली अर्थ तभी साकार होता है, जब हम एक-दूसरे के साथ भाईचारे और सम्मान के साथ रहें।

आज 14 अगस्त को स्मरण करना केवल शोक की रस्म नहीं, बल्कि प्रबल प्रेरणा है-एक ऐसे भारत के निर्माण की, जहां मतभेद संवाद से सुलझें, और हर संस्कृति व विश्वास का सम्मान हो। यह दिन चेताता है कि स्वतंत्रता तभी सार्थक है, जब हम एकजुट रहें। विभाजन की त्रासदी को याद करने वाले कार्यक्रम प्रदर्शनियां, मौन जुलूस, साहित्यिक चर्चाएं महज औपचारिकता नहीं, बल्कि उन लाखों आत्माओं को सच्ची श्रद्धांजलि होने चाहिए जिन्होंने अपने घर, सपने और जीवन खोए। 14 अगस्त का दिन एक दर्पण है, जो हमारे अतीत की त्रासदी को उजागर करता है और भविष्य के लिए गहन सबक देता है। यह चेतावनी है कि यदि हम एकता और सद्भाव को नहीं थामते, तो इतिहास की विभीषिका फिर लौट सकती है। हमारी जिम्मेदारी है कि इस पीड़ा को केवल स्मृति तक सीमित न करें, बल्कि इसे अपने विचारों और कर्मों में ढालें ताकि भावी पीढ़ियां कभी ऐसी त्रासदी न देखें। 'विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस' केवल एक तारीख नहीं, बल्कि एक दृढ़ संकल्प है-एक ऐसे भारत के निर्माण का, जहां हर व्यक्ति बिना भेदभाव के सम्मान और स्वतंत्रता के साथ जी सके। यह दिन हमें सिखाता है कि आजादी का उत्सव तभी सार्थक है, जब हम एक-दूसरे के दर्द को समझें और उसे कम करने का प्रयास करें। नफरत की आग केवल राख छोड़ती है, पर प्रेम और एकता के बीज से ही एक समृद्ध, शक्तिशाली राष्ट्र उगता है। 14 अगस्त को केवल याद करने का नहीं, बल्कि एक बेहतर, एकजुट भारत के लिए कदम उठाने का अवसर बनाएं।

मेरा पथ | डॉ. ज्ञानानंददास स्वामी

मेरा पथ' कह कर गीता में भगवान कृष्ण उस श्रेष्ठ पथ को उजागर कर रहे हैं, जिसका अनुसरण कर साधारण मानव भी श्रेष्ठता को प्राप्त कर सकता है। यह पथ सदाचार का पथ है, शाश्वत मूल्यों का पथ है, भगवान का पथ है। श्रीकृष्ण यह उपदेश अर्जुन को देते हुए केवल अध्यात्म सत्य प्रकट नहीं कर रहे, बल्कि समग्र मानव समाज को ऐसी जीवन-दृष्टि दे रहे हैं, जो युगातीत और सर्वजीवहितावाह है। वे पहले भी कह चुके हैं कि श्रेष्ठ पुरुष जैसा आचरण करता है, अन्य लोग भी उसी का अनुसरण करते हैं। यहां 'श्रेष्ठ' शब्द केवल पद, प्रतिष्ठा या शक्ति से नहीं, बल्कि आचरण, मूल्य और दृष्टिकोण की ऊंचाई से जुड़ा है। जब कोई व्यक्ति अपने जीवन में नैतिकता, निष्ठा और सेवा को प्रमुखता देता है, तो केवल अपने लिए नहीं जी रहा होता, वह अनजाने में एक दिशा, आदर्श, मार्ग प्रस्तुत कर रहा होता है, जिसे देख कर अगली पीढ़ियां प्रेरणा लेती हैं। महात्मा गांधी ने सत्य और अहिंसा को जीवन का मूल बनाया तो लाखों-करोड़ों लोग उनके साथ चल पड़े। वे कोई राजा नहीं थे, न ही उनके पास सेना थी। पर उनके पथ की सच्चाई और नैतिकता ने जनमानस को ऐसा स्पर्श किया कि एक पूरी सभ्यता की दिशा बदल गई। उन्होंने चरखा चलाया, खादी पहनी, और पूरे देश ने उसका अनुसरण किया। भगवान श्रीराम ने वनवास स्वीकार किया क्योंकि धर्म का पालन करना चाहते थे। राजा होकर भी त्याग और मर्यादा के पथ पर चले और आज युगों बाद भी लोग उन्हें 'मर्यादा पुरुषोत्तम' मान कर उनके पथ पर चलना गौरव समझते हैं। संतों के जीवन में भी यह सत्य बारंबार प्रकट होता है।

इसलिए प्रत्येक मनुष्य को स्मरण रखना चाहिए कि 'क्या मेरा जीवन ऐसा है, जिसे देख कर कोई सीख सकता है?' महंत स्वामी महाराज इस बात का मर्म समझाते हैं कि- जब आप सत्य, धर्म और सेवा के पथ पर चलते हैं, तो अकेले नहीं चलते। आपके पद चिह्नों में समाज की आशाएं, बच्चों के भविष्य, और आने वाले युगों की दिशा जुड़ी होती है। इसलिए अपने जीवन को हमेशा उन्नत स्तर से जीने का प्रयत्न करना चाहिए।

रीडर्स मेल

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

भिक्षावृत्ति देश के माथे पर कलंक

भारत में एक तरफ अरबपतियों की लंबी कतार बनती जा रही है, तो दूसरी ओर देश में ही एक तबका भीख मांग कर पेट भरने को मजबूर है। भिक्षावृत्ति आधुनिक होते भारत के माथे पर कलंक की तरह है। मंदिरों, मस्जिदों या किसी भी धार्मिक स्थल पर भिखारियों का जमावड़ा लगा रहता है। दो जून की रोटी को तरसते देश के लाखों गरीब अस्पतालों, बस अड्डों, चौराहों और अन्य सार्वजनिक स्थलों पर भिक्षावृत्ति को मजबूर हैं। कानूनी प्रावधानों के जरिए भिक्षावृत्ति पर रोक की कोशिशें अब तक असफल ही साबित हुई हैं। भिक्षावृति को कानूनन अपराध घोषित करने के बावजूद भिखारियों की तादाद कम नहीं हुई। सामाजिक अधिकार कार्यकर्ता लंबे समय से एक ऐसे कानून की मांग करते आए हैं, जिसमें भिखारियों को अपराधी मानने की बजाय उनके पुनर्वास पर जोर हो। भिक्षावृत्ति की समस्या से निपटने के लिए अब तक दिल्ली सहित अधिकतर राज्यों ने भिक्षावृत्ति को रोकने से जुड़े बॉम्बे भिक्षावृत्ति अधिनियम, 1959 को अपनाया है, जिसके तहत पुलिस बिना वारंट के किसी भी भिखारी को गिरफ्तार कर सकती है।

संदीप कुमार, मधुपुर, झारखंड

चुनाव जीतने का मजबूत नैरेटिव

बिहार चुनाव में अभी चार महीने का समय शेष है। यद्यपि सियासत कभी भी सरल रेखा का अनुगमन नहीं करती है, तथापि यह भी याद रखा जाना चाहिए कि चुनाव जीतता वही है, जो सबसे मजबूत नैरेटिव खड़ा करता है। जैसे लोक सभा चुनाव के समय 'संविधान खतरे में है' का नैरेटिव मजबूत था और तब भाजपा को 240 पर सिमट जाना पड़ा। एक बार फिर एसआईआर के हौव्वे के बहाने वोट लूटने का नैरेटिव मजबूत बनाने का प्रयास किया जा रहा है। देखना है कि इस कशमकश में अबकी बार कौन सफल होता है। बाजी किसके हाथ लगती है।

मनोज श्रीवास्तव, अमेठी

पूर्व सीईसी को लेकर अफवाहें

सोशल मीडिया पर चल रहा है कि पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त (सीईसी) राजीव कुमार का कोई अता पता नहीं है। शिवसेना उद्धव गुट के सांसद ने पोस्ट करते हुए लिखा है कि उन्होंने देश छोड़ दिया है, उन्होंने यूरोप के छोटे से देश माल्टा की नागरिकता ले ली है। इसी प्रकार की नाना प्रकार की अफवाहों का बाजार गर्म है। हालांकि सोशल मीडिया पर आई खबरों का विश्वास नहीं किया जा सकता है, आंख मूंद विश्वास करना भी नहीं चाहिए क्योंकि इस पर झूठ का तड़का ज्यादा, सच्चाई का कम होता है। भारत सरकार को तथा स्वयं पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त राजीव कुमार को सामने आकर स्पष्ट करना होगा कि वास्तविकता में राजीव कुमार वर्तमान में कहा हैं? इस समय देश में मतदाता सूची, लोक सभा के चुनाव 2024 में वोटों की चोरी और हेराफेरी को लेकर बवाल मचा हुआ है। ऐसे में वे ही पूरी तरह से इस बवाल पर सच्चाई बयां करते हुए सही जवाब दे सकते हैं। जो भी हो भारत सरकार को गंभीरता के साथ राजीव कुमार को लेकर तमाम शंकाओं, कुशंकाओं की जो घनी धुंध छाई हुई है, उसे आगे बढ़कर छांटना चाहिए।

हेमा हरि उपाध्याय, 'अक्षत', उज्जैन

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा • राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण
वर्ष-34, अंक 357
सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3, 4 सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा 1209-1210, बारहवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित। । स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 011-23352369, 011-23352372, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750
आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्

भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

पंजाब केसरी संपादकीय

संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

आदित्य नारायण चोपड़ा

adityachopra@punjabkesari.com

मतदाता की नागरिकता

बिहार में चुनाव आयोग द्वारा किया जा रहा मतदाता सूची के गहन पुनरीक्षण का कार्य अभी पूरा नहीं हुआ है क्योंकि पूरे अगस्त महीने में मतदाताओं को अपने दावे पेश करने का अधिकार है। चुनाव आयोग 30 सितम्बर को अन्तिम मतदाता सूची का प्रकाशन करेगा परन्तु अभी जो उसने फौरी सूची जारी की है उसमें बिहार के कुल सात करोड़ 90 लाख मतदाताओं में से 65 लाख मतदाताओं के नाम काट दिये गये हैं। देश की विपक्षी पार्टियां उसके इस फैसले का कड़ा विरोध कर रही हैं और कह रही हैं कि चुनाव आयोग पुनरीक्षण के नाम पर मतदाताओं के नाम काटने का सघन अभियान चला रहा है। विपक्ष के नेता श्री राहुल गांधी कह रहे हैं कि यह एक नागरिक-एक वोट का सवाल है जिस पर भारत का पूरा लोकतन्त्र टिका हुआ है। विपक्ष का तर्क है कि चुनाव आयोग किसी भी व्यक्ति की नागरिकता की जांच नहीं कर सकता है। उसे इसका अधिकार संविधान नहीं देता है। संविधान उसे देश में निष्पक्ष व स्वतन्त्र चुनाव कराने का अधिकार देता है। इसमें कहीं दो राय नहीं हो सकती कि चुनाव आयोग को किसी भी व्यक्ति की नागरिकता की जांच करने का अधिकार नहीं है। किसी भी नये मतदाता को यह वचन देना पड़ता है कि वह भारत का नागरिक है और उसका वोट बन जाता है।

चुनाव आयोग ने इस सन्दर्भ में अपनी शर्तों में संशोधन किया है और वह नागरिकों से ऐसे प्रपत्र मांग रहा है जिसमें उनकी नागरिकता की पुष्टि होती हो। सर्वोच्च न्यायालय में गहन पुनरीक्षण को लेकर कई याचिकाएं दाखिल की गई हैं जिनकी सुनवाई चल रही है। इसी सुनवाई के दौरान अदालत में प्रभावित पक्ष की ओर से तर्क दिया गया कि नागरिकता तय करने का काम केन्द्रीय गृह मन्त्रालय का है। इस तर्क के पक्ष में न्यायालय में सुनवाई कर रही दो न्यायमूर्तियों की पीठ ने सहमति व्यक्त करते हुए कहा है कि नागरिकता कानून बनाने का काम भारत की संसद का है। संसद ही इस बारे में कानून बना सकती है। अत: निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि चुनाव आयोग किसी भी मतदाता की नागरिकता पर सवालिया निशान नहीं खड़ा कर सकता। ऐसा करने पर वह अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाता है। जबकि दूसरी तरफ भारत का संविधान कहता है कि प्रत्येक वयस्क वैध मतदाता को वोट देने का अधिकार है। इस हिसाब से बिहार की मतदाता सूची में लोगों के नाम बजाय घटने के बढ़ने चाहिए परन्तु चुनाव आयोग ने जिन 65 लाख मतदाताओं के नाम काटे हैं उनके सन्दर्भ में जो कारण दिये हैं वे जायज लगते हैं।

भारत में पुश्तों से रह रहे लोगों की नागरिकता को चुनौती केवल किसी प्रपत्र के न होने की वजह से नहीं दी जा सकती। पुरानी पीढ़ियों के लोगों के पास न अपना जन्म प्रमाणपत्र होता था और न कोई स्कूली सनद। अगर उससे आज आयोग ये प्रमाणपत्र मांगने लगे तो उसे जायज किस तरह कहा जा सकता है। जबकि बिहार के सन्दर्भ में चुनाव आयोग 1987 के बाद पैदा होने वाले लोगों से ऐसे प्रमाणपत्र मांग रहा है। मगर घूम फिर कर बात फिर वहीं पर आती है कि क्या चुनाव आयोग को किसी व्यक्ति की नागरिकता तय करने का अधिकार है।

आयोग का कहना है कि 2003 के बाद लाखों लोगों ने बिहार छोड़ कर अन्य स्थानों को पलायन किया है, लाखों लोग मर चुके हैं व लाखों की संख्या में ही लोगों के नाम दो स्थानों पर मतदाता सूची में शामिल हैं। न्यायालय ने उसके इन तर्कों को स्वीकार किया है जो कि पूरी तरह जायज लगता है। मगर इसके साथ यह भी तर्क है कि 2003 के बाद बिहार में कितने मतदाता बढ़े हैं। क्योंकि चुनाव आयोग ने 2003 वर्ष को आधार वर्ष माना है। इस वर्ष बिहार में मतदाता सूची का पुनरीक्षण किया गया था लेकिन इसके साथ यह सवाल जुड़ा हुआ है कि विगत वर्ष 2024 में जो लोकसभा चुनाव हुए थे वे पुरानी मतदाता सूची के आधार पर ही हुए थे। विपक्ष के नेता कह रहे हैं कि क्या ये चुनाव गलत सूची के आधार पर हुए थे ? इसका जवाब चुनाव आयोग नहीं दे रहा है। मगर वह कह रहा है कि आधार कार्ड या पुराने मतदाता पहचान पत्र के आधार पर किसी जायज मतदाता की पहचान नहीं हो सकती है। उसके इस तर्क को सर्वोच्च न्यायालय ने सही माना है और कहा है कि दोनों पहचान पत्र नागरिकता के प्रमाणपत्र नहीं हैं। यहां तक कि राशन कार्ड को भी न्यायालय नागरिकता का प्रमाणपत्र नहीं मान रहा है। निश्चित रूप से यह सही भी है कि क्योंकि आधार कार्ड पर ही यह लिखा होता है वह नागरिकता का सबूत नहीं है। राशन कार्ड भी भारत में फर्जी बना लिये जाते हैं और उनके बनवाने में आधार कार्ड का प्रयोग होता है। पुराने वोटर पहचान पत्र को लेकर भी यही दिक्कत है। अत: चुनाव आयोग के तर्कों में इन्हें लेकर वजन दिखाई देता है परन्तु यह सही सवाल का जवाब नहीं है क्योंकि संविधान कहता है कि नागरिकता की जांच करने का अधिकार चुनाव आयोग को है ही नहीं। उसके सामने किसी भी व्यक्ति का यह शपथपत्र ही काफी है कि वह भारत का नागरिक है। उसकी नागरिकता को यदि कोई चुनौती देता है तो यह चुनौती देने वाले का काम है कि वह ऐसा सिद्ध करे।

भारत में पुश्तों से रह रहे लोगों की नागरिकता को चुनौती केवल किसी प्रपत्र के न होने की वजह से नहीं दी जा सकती। पुरानी पीढ़ियों के लोगों के पास न अपना जन्म प्रमाणपत्र होता था और न कोई स्कूली सनद। अगर उससे आज आयोग ये प्रमाणपत्र मांगने लगे तो उसे जायज किस तरह कहा जा सकता है। जबकि बिहार के सन्दर्भ में चुनाव आयोग 1987 के बाद पैदा होने वाले लोगों से ऐसे प्रमाणपत्र मांग रहा है। मगर घूम फिर कर बात फिर वहीं पर आती है कि क्या चुनाव आयोग को किसी व्यक्ति की नागरिकता तय करने का अधिकार है। जहां तक भारत की चुनाव प्रणाली का सवाल है तो यह समावेशी है न कि छंटनीपरक। बेशक जिन लोगों की मृत्यु हो चुकी है उनके नाम मतदाता सूची से कटने चाहिए मगर 18 वर्ष से अधिक आयु होने पर नाम जुड़ने भी तो चाहिए। इससे भी ऊपर और सबसे बड़ा सवाल है कि क्या चुनाव आयोग को सघन पुनरीक्षण करने का अधिकार है क्योंकि चुनाव सम्बन्धी किसी भी कानून में सघन या गहन पुनरीक्षण का जिक्र नहीं है हां यह जरूर है कि समय-समय पर हर वर्ष चुनाव आयोग पुनरीक्षण या मतदाता सूची में संशोधन करता रहेगा। अत: मूल प्रश्न अदालत के सामने यह भी है।

संसद की गरिमा को भूल न जाओ

गीता पाढा

"लाख मतभेद रखो, पर मनभेद मत बनाओ,
राजनीति में आदर्शों को इतना तो निभाओ,
विपक्ष की भूमिका पर खरा उतरकर बखूबी दिखाओ,
भर-भर कर सत्ता पक्ष पर सवाल उठाओ,
पर संसद की गरिमा को भूल न जाओ,
संयमित होकर जनता के हर मुद्दे को प्रकाश में लाओ...।"

वोट की आजादी

मर्यादाएं

चन्द्रमोहन

संपादक : वीर प्रताप

chander_m@ hotmail.com
BLOG: chandermohan.net

आज़ाद भारत ने अपने लोगों को सबसे बेशकीमती चीज क्या दी है? किसी से भी पूछा जाए तो जवाब होगा, वोट। हम अधिकतर भारतीयों को आजादी के 78 साल बाद भी न काम का रोजगार दे सके, न मकान दे सके, न ही बच्चों के लिए सही शिक्षा ही दे सके। कइयों को तो रोटी, कपड़ा और मकान की भी समस्या रहती है। ले-देकर उनके पास उनका वोट है जो उन्हें हैसियत देता है, पहचान देता है, महत्व देता है और जो उन्हें पांच साल के बाद बदला लेने की ताकत देता है। इसी ताकत का इस्तेमाल करते हुए उन्होंने इंदिरा गांधी से एमरजैंसी का बदला लिया, पर जनता पार्टी की सरकार की नालायकी को देखते हुए इंदिरा गांधी को फिर सत्ता सौंप दी। यूपीए की सरकार के भ्रष्टाचार की सजा दी गई और पिछले लोकसभा के चुनावों में भाजपा को बहुमत से नीचे ला कर उन्हें भी बता दिया कि केवल आकर्षक नारों से ही पेट नहीं भरता। अगर लोगों से कट जाओगे तो क़ीमत चुकानी पड़ेगी।

अमीर लोग तो अधिकतर घरों से ही नहीं निकलते जबकि बस्तियों के पास भारी मतदान होता है। चाहे बड़ी संख्या में वह अशिक्षित हों, पर वोट की क़ीमत वह जानते हैं। उनके लिए यह सशक्तिकरण का उपकरण है। उत्तर दिल्ली के ओल्ड सीलमपुर मार्केट में काम कर रहे बिहार के अररिया ज़िले के मुकेश राज का कहना है कि वह घर केवल दो बार जाता है, छठ पूजा और चुनाव के लिए। वह कहता है कि वोट देना जरूरी है। उससे आप सिस्टम में रहते हैं। जो गरीब हैं, वंचित हैं, समाज की सबसे नीचे के पायदान पर खड़े हैं (और दुनिया की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था में ऐसा लोग भरे हुए हैं) वह समझते हैं कि शासक और उत्पीड़क वर्ग से जवाबदेही के लिए वोट ही उनके पास एकमात्र हथियार है। चुनाव के समय उसकी वोट के कारण नेताजी भी हाथ जोड़ कर उसके द्वार पर खड़े हो जाते हैं। अगर किसी तकनीकी आधार पर या किसी और बहाने उन्हें वोट से वंचित किया गया तो यह न केवल हताशा बल्कि आक्रोष को भी जन्म दे सकता है।

जैसे मुकेश राज ने कहा है 'सिस्टम' में रहना आम आदमी के लिए बहुत जरूरी है। इसी कारण चुनाव आयोग ने बिहार में विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) की प्रक्रिया जो शुरू की है और जिस तरह की है उससे बहुत बेचैनी फैल गई है। कई असुखद सवाल उठ रहे हैं। 24 जून को अचानक चुनाव आयोग ने घोषणा कर दी कि वह बिहार में सही मतदाताओं की जांच के लिए एसआईआर शुरू कर रहा है। बिहार में नवम्बर में चुनाव होने हैं। इतने कम समय में क्या चुनाव आयोग 8 करोड़ मतदाताओं की सही जांच कर सकेगा? विशेष तौर पर उस प्रांत में जहां से भारी संख्या में लोग बाहर काम करने जाते हैं? ऐसी प्रक्रिया को सफलतापूर्वक करने के लिए समय चाहिए, पर बिहार में प्रक्रिया उस समय शुरू की गई जब वहां बाढ़ ग्रस्त लोगों को ऊपर से पैक्ट गिराए जा रहे थे। वहां सत्तारूढ़ जद (यू) के सांसद गिरिधारी यादव ने भी शिकायत की है कि प्रदेश का इतिहास और भूगोल जाने बिना चुनाव आयोग ने जबरदस्ती यह प्रक्रिया हम पर थोप दी है।

आयोग ने मतदाता सूची में नाम दर्ज करवाने के लिए जो शर्तें रखीं वह भी अजीब हैं। मतदाता को अपनी पहचान बताने के लिए जिन 11 दस्तावेज़ों में से एक बताना है उनमें आधार कार्ड, वोटर पहचान पत्र या राशन कार्ड नहीं है। अजीबोगरीब स्थिति है कि जिस पासपोर्ट के लिए आधार कार्ड चाहिए उसे तो सूची में रखा गया है, पर आधार कार्ड नहीं है! गजब है कि चुनाव आयोग ने तो अपना पिछला वोट पहचान पत्र ही अस्वीकार कर दिया। जिन्होंने वोटर कार्ड के बल पर 2020 में वहां वोट डाला था या 2024 के लोकसभा चुनाव में वोट डाला था निश्चित नहीं कि उन्हें वोट का अधिकार मिलागा। 2011 की मतगणना के अनुसार बिहार में 50 प्रतिशत महिलाएं और 40 प्रतिशत पुरुष अशिक्षित हैं। तब से स्थिति बेहतर हुई है, पर अधिकतर के पास जो दस्तावेज आयोग मांग रहा है, वह नहीं हैं। न पासपोर्ट है, न जन्म या जाति या शिक्षा या जमीन या किसी सरकारी दफ्तर का कोई प्रमाण पत्र ही है। पूर्व राजनयिक पवन वर्मा जो बिहार से सांसद भी रहे हैं का लिखना है, "सच्चाई है कि वहां धरातल पर पूरी तरह से घबराहट और भ्रम की स्थिति है क्योंकि बेसहारा गरीब लोग अपना हक मांग रहे हैं"। इंडियन एक्सप्रेस ने अपनी रिपोर्ट में दिल्ली में रह रहे बेगूसराय के अंकित कुमार के बारे बताया है जिसका कहना है कि वह वोट डालने जाना चाहता था, पर नहीं जा रहा क्योंकि उसके पास 'केवल' आधार कार्ड और वोटर कार्ड है जो मान्य नहीं है। उसने 2024 के लोकसभा चुनाव में वोट डाला था।

यह कितनी ज़्यादती है? आम आदमी अपनी नागरिकता कैसे सिद्ध करेगा? अवैध प्रवासियों को सूची से निकालने के बहाने वैध मतदाता वंचित नहीं होने चाहिए। चुनाव आयोग का काम वोटर जोड़ना है उन्हें वंचित करना नहीं। आयोग ने सुप्रीम कोर्ट को बताया है कि ड्राफ्ट मतदाता सूची से बाहर किए गए वोटर की सूची देना या नाम न शामिल करने का कारण बताना, क़ानून में जरूरी नहीं है। यह सही है, पर अगर आयोग यह बता दें तो क्या आफत आ जाएगी? चुनाव आयोग के अपने ड्राफ्ट रोल के अनुसार विशाल 65 लाख नाम वोटर लिस्ट से काटे गए हैं। यह कुल का 9% बनता है जो बहुत बड़ा और परेशान करने वाला आंकड़ा है। 1977 के बाद बिहार के हर चुनाव में वोटर बढ़े हैं, पर इस साल बहुत गिरावट होगी। वहां वयस्कों की संख्या लगातार तेज़ी से बढ़ रही है, पर वोटर घट रहे हैं! 65 लाख तो वह हैं जो वोटर लिस्ट से काटे जाएंगे, पर वह कितने हैं जो शामिल ही नहीं किए गए? पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एस.वाई. कुरैशी का कहना है कि चुनाव आयोग को अंतिम वोटर तक पहुंचना चाहिए, पर यहां तो लाखों काटे जा रहे हैं और कोई कारण सार्वजनिक नहीं किया जा रहा।

इस विवाद के बीच राहुल गांधी ने चुनाव आयोग पर 2024 के चुनाव में भाजपा के साथ मिल कर 'वोट चोरी' का आरोप लगाया है। उनका आरोप है कि कर्नाटक की बैंगलोर सेंट्रल लोकसभा सीट के महादेवपुरा विधानसभा क्षेत्र में 100250वोट का फ्राड हुआ है। भाजपा और चुनाव आयोग के बीच कथित साज़िश का कोई प्रमाण राहुल गांधी ने नहीं दिया, पर वोटर लिस्ट में धांधली के कई प्रमाण उन्होंने दिए हैं। एक कमरे में 80 वोट हैं। कई फर्ज़ी पते हैं, कई डुप्लीकेट वोट हैं। उनके आरोप है कि इस धांधली के कारण ही भाजपा यह सीट जीतने में सफल रही। चुनाव आयोग का बिहार की एसआईआर और राहुल गांधी के महादेवपुरा विधानसभा चुनाव के बारे लगाए आरोपों के बारे जो असहयोग पूर्ण और अड़ियल रवैया है वह समझ से बाहर है। मैं राहुल गांधी के 'वोट चोरी' के आरोप से सहमत नहीं हूं, पर उनके गड़बड़ के आरोप को गम्भीरता से लेना चाहिए। आख़िर राहुल गांधी आम नागरिक नहीं है, वह विपक्ष के नेता हैं। उनके आरोप को रफादफा नहीं किया जा सकता। अगर आयोग समझता है कि यह आरोप सही नहीं है तो उन्हें इनका प्रमाण सहित जवाब देना चाहिए। बार-बार यह कह कर कि 'एफेडेविट दो', 'एफेडेविट दो', आयोग खुद संशय पैदा कर रहा है। राहुल गांधी सबूत पेश कर रहे हैं, आप कह रहे हैं कि एफेडेविट दो! पूर्व चुनाव आयुक्त ओ.पी. रावत का सही कहना है कि आयोग को राहुल गांधी के आरोपों पर बिना औपचारिक शिकायत का इंतज़ार किए जांच करवानी चाहिए। चुनाव चाहे बिहार का हो या कर्नाटक के महादेवपुरा चुनाव क्षेत्र के बारे शिकायत हो, बिना जांच किए सबूतों को रद्द नहीं किया जाना चाहिए।

हर मामले पर अवरोध खड़ा करने से तो चुनाव आयोग की अपनी विश्वसनीयता पर सवाल खड़े हो रहे हैं। ठीक है कानूनी तौर पर आप जिनके नाम काटे गए हैं बताने और उसकी वजह बताने को बाध्य नहीं हैं, पर अगर संदेह को खत्म करने के लिए आप सूची सार्वजनिक कर दो तो दिक्कत क्या है? राहुल गांधी ने मांग की है कि मतदाता सूची डिजिटल फार्म में दी जाए ताकि मशीन के द्वारा जांच हो सके। यह भी नहीं दी जा रही। पेपर का पुलिंदा पकड़ाया जा रहा है जिसकी छानबीन में वर्षों लग जाएंगे। एक साफ-सुथरी पारदर्शी वोटर लिस्ट जिसमें सबका विश्वास हो निष्पक्ष और विश्वसनीय चुनाव के लिए जरूरी है। चुनाव आयोग को आत्म मंथन करना चाहिए। लोकतांत्रिक संस्थाएं पारदर्शिता से मजबूत होती हैं। जो मांगा जा रहा है वह डेटा दे कर आयोग विवाद को समाप्त कर सकता हैं, नहीं तो परेशानी बढ़ती जाएगी। 300 विपक्षी सांसदों ने अपनी शिकायतों के साथ चुनाव आयोग की तरफ मार्च किया है। यह राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ा मामला तो है नहीं कि आयोग जानकारी देने से इंकार कर रहा है। वोट लोकतंत्र का आधार है। वोट की आज़ादी पर आंच नहीं आनी चाहिए। चुनाव प्रकिया में विश्वास का क्षरण लोकतंत्र के लिए घातक है। सुप्रीम कोर्ट ने भी एसआईआर के बारे कहा है कि 'भरोसे की कमी है'। यह भरोसा बहाल करना आयोग की प्राथमिकता होनी चाहिए। जो सवाल उठ रहे हैं इनका उचित जवाब मिलना चाहिए। जैसे कहा गया, न्याय होना ही नहीं चाहिए, न्याय होता दिखना भी चाहिए।

विभाजन विभीषिका का दंश

राजकुमार भाटिया

भाजपा विधायक

1947 स्वतंत्रता की वह सुबह जब पूरे देश की फिजाओं में आजादी की महक फैल रही थी, उसी वक्त एक अंधेरी त्रासदी भी हमारे दरवाजे पर दस्तक दे रही थी। भारत के इतिहास में 1947 का साल केवल एक नई शुरुआत का नहीं, बल्कि एक ऐसी विभीषिका का भी था जिसने करोड़ों परिवारों की खुशियां लील लीं और उन्हें ताउम्र के लिए जख्मी कर दिया। यह दर्द केवल राजनीतिक सीमाओं के बंटवारे का नहीं था, बल्कि मानवता के टूटने और सामाजिक रिश्तों के बिखरने का था। जब देश के नक्शे पर लकीरों की खींचाई हुई, तब हजारों निर्दोषों की ज़िंदगी में भूचाल आ गया। उस भूचाल ने न केवल घर-बार छीन लिए, बल्कि इंसानियत के उन धागों को भी तोड़ दिया जो सदियों से हमारे बीच एकता का आधार था।

मोहम्मद अली जिन्ना द्वारा दो राष्ट्र सिद्धांत की राजनीति ने देश को उस आग के गर्त में धकेल दिया जिसकी परछाइयां आज तक हमारे समाज से नहीं गईं। 16 अगस्त 1946 का डायरेक्ट एक्शन डे भारत के स्वतंत्रता आंदोलन का एक ऐसा काला अध्याय था, जब कोलकाता में न केवल हिंदू, बल्कि हर इंसान की मानवीयता को छलनी कर दिया गया। उस दिन से बंगाल, पंजाब तक हिंसा ने न केवल जमीन को लाल किया, बल्कि मनुष्यों के दिलों को भी पत्थर बना दिया। जब हम सोचते हैं कि उस वक्त करीब 1.5 करोड़ लोग अपनी धरती छोड़ने को मजबूर हुए और लगभग दस लाख जानें गईं, तो उस संख्या के पीछे छुपी गमगीन कहानियां हमारे सामने चित्रित होती हैं।

इन कहानियों में गुजरांवाला के लाला बलवंत खत्री का परिवार एक ऐसी दास्तान है जो पीड़ा की गहराई और मानवीय बलिदान का प्रतीक बन गया। एक ऐसे पिता का चित्र जो अपनी बेटियों को अपने ही हाथों से मौत की आग में डाल देता है ताकि वे नफरत की उस भीड़ के हवाले न हों जो उनकी इज्जत के साथ खिलवाड़ करना चाहती थी। प्रभावती और उनके आठ बच्चे, उनका पूरा परिवार, उस समय की भयावहता की ऐसी तस्वीर है जो आंखों के सामने घूमती रहती है। ऐसी हजारों कहानियां भारत भर में सुनाई देती है। उस काले दिन की गूंज आज भी दिल्ली के किंग्सवे कैंप की विस्थापित भारतीय कॉलोनियों में सुनाई देती है, जहां बुजुर्ग गम के आंसू पोंछते हैं और अपने खोए हुए घर-बार की बातें याद करते हैं। औरतों पर हुए अत्याचारों की गिनती बताना भी मुश्किल है। जब करीब 75,000 महिलाओं का अपहरण, बलात्कार और अमानवीय शोषण हुआ, तो कई परिवारों ने अपनी बेटियों को मौत दे दी ताकि उनका सम्मान बचा रहे। उस समय की पीड़ा केवल एक परिवार की नहीं थी, यह उस समाज का अपमान था जिसने महिलाओं को अपना आधार माना। उस समय की निर्दयता ने मानवीय संवेदनाओं को ध्वस्त कर दिया और उस जख्म को भुलाना आज भी संभव नहीं है। यह दर्द केवल घटनाओं तक सीमित नहीं रहा, बाद में साहित्य और सिनेमा में भी इसे गहराई से दर्शाया गया। भीष्म साहनी की 'तमस' ने विभाजन के भय और संप्रदायिकता की त्रासदी को जो चित्रित किया, वह आज भी पढ़ने वाले को झकझोर देता है। खुशवंत सिंह की 'ट्रेन टू पाकिस्तान' ने मानवीय रिश्तों की टूटन और विश्वासघात की कहानी को बड़े संवेदनशील तरीके से बयान किया। मंटो की कहानियां, खासकर 'टोबा टेक सिंह', पागलखाने के कैदियों के माध्यम से उस समय की विडंबना और कटु सत्य को बयां करती हैं। आधुनिक फिल्मों ने भी इस दौर की मानसिकता को नई पीढ़ी तक पहुंचाने का प्रयास किया है जिससे इतिहास की सच्चाई आज भी जीवित रहे।

हम उन परिवारों की कहानियों को नहीं भूल सकते जिनके बुजुर्ग इस विभाजन को अपने जख्मों के साथ बसर करते हैं। वे दिन जब बलवाइयों ने हिंदुओं और सिखों पर अत्याचार किए, जब बहनों और बेटियों की इज्जत छिनी गई और जब लाखों लोगों को पलायन करना पड़ा। एक समय था जब हम साथ पढ़ते, खेलते थे, मगर अचानक भरोसे और मोहब्बत की जगह नफरत और भय ने ले ली। यह विडंबना और पीड़ा हमें गहराई से सोचने पर मजबूर करती है कि आखिर हम कहां चूक गए।

75 वर्षों के लंबे सफर के बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में जब केंद्र सरकार ने 14 अगस्त को 'विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस' घोषित किया तो यह एक भावनात्मक न्याय था उन लाखों परिवारों के लिए जो दशकों से इस दर्द को चुपचाप सहते आए थे। यह निर्णय न केवल उस पीड़ा को मान्यता देने का था, बल्कि नई पीढ़ी को भी उस समय की वास्तविकता से अवगत कराने और समाज में फैलने वाली वैमनस्यपूर्ण शक्तियों से सचेत करने का था। विस्थापित भारतीय ने समाज-राजनीतिक चिंतकों ने इस पीड़ा को केवल याद नहीं रखा, बल्कि सेवा और समाज कल्याण के माध्यम से उसे एक जीवन दर्शन भी बनाया। यह सिद्ध करते हुए कि इंसानियत धर्म से ऊपर है। उनकी मेहनतकश आवाज हमें यह संदेश देती है कि विभाजन की स्मृति केवल इतिहास नहीं, बल्कि एक चेतावनी है कि हम कभी भी फिर से मानवता के उस पथ से न हटें।

विभाजन विभीषिका हमारे लिए सिर्फ़ एक इतिहास का पन्ना नहीं, बल्कि एक ज़िंदा दस्तावेज है जो हमें याद दिलाता है कि यदि हम इंसानियत को नजरअंदाज करेंगे तो इतिहास खुद को दोहराने को मजबूर होगा। इसलिए आइए, हम सब मिलकर उस कड़वी सीख को अपनाएं और एक ऐसा समाज बनाएं जहां नफरत के लिए कोई जगह न हो, बल्कि प्यार, भाईचारे और सहअस्तित्व की ही भाषा हो।

इतिहास की इस विभीषिका में छिपा हुआ दर्द आज भी हमारे दिलों में धड़कता है और हमें यह याद दिलाता है कि स्वतंत्रता की कीमत कितनी भारी थी और उसका सम्मान कैसे करना चाहिए। हमारे बुजुर्गों के आंसू, उनके बलिदान और उनकी कहानियां हमें यह सिखाती हैं कि एकता की राह पर चलना ही असली स्वतंत्रता है। यही सच्चा भारत है। और भविष्य में हम जिस अखंड भारत की सोच के साथ आगे बढ़ रहे हैं, उसका रास्ता भी इस विभीषिका की स्मृति की पगडंडियों से होकर निकलेगा। इसी संकल्प के साथ प्रधानमंत्री जी की परिकल्पना विभाजन विभिषिका स्मृति दिवस को जीवंत रखना होगा।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

खेल के मैदान से पोडियम तक

शहज़ाद पूनावाला,

राष्ट्रीय प्रवक्ता,
भारतीय जनता पार्टी

भारत खेल क्रांति के मुहाने पर खड़ा है। संसद द्वारा पारित राष्ट्रीय खेल शासन विधेयक 2025 सिर्फ एक कानून नहीं है - यह पिछले 50 वर्षों में सबसे परिवर्तनकारी सुधार है, जिसका उद्देश्य खेल प्रशासन में सुधार करना, पारदर्शिता की शुरुआत करना, एथलीटों की आवाज बनना और 2036 ओलंपिक खेलों की मेजबानी की हमारी संभावनाओं को बढ़ाना है।

दशकों तक, भारतीय खेल अपारदर्शी प्रशासन, निहित स्वार्थों, पारदर्शिता और जवाबदेही की कमी से पीड़ित रहा। खेल मंत्री मनसुख मंडाविया द्वारा तैयार और मोदी सरकार द्वारा परिकल्पित यह कानून, वैश्विक मानक, एथलीट-केंद्रित शासन लाकर भारत के खेल तंत्र को बदलने का वादा करता है। यह भारत को खेल महाशक्ति बनाने की दिशा में सबसे निर्णायक कदम है।

भारतीय खेल लंबे समय से कुशासन की चपेट में था। 2010 के राष्ट्रमंडल खेलों के घोटाले ने इस सड़ांध को उजागर कर दिया- व्यक्तिगत संपत्ति के रूप में काम करने वाले महासंघ, विवादों से घिरे चुनाव, धन का दुरुपयोग और एथलीटों को निर्णय लेने से दरकिनार कर दिया जाना। एक राष्ट्रीय और संहिताबद्ध कानूनी ढांचे की अनुपस्थिति ने सत्ता के भूखे, भ्रष्ट प्रशासकों को सत्ता से चिपके रहने की अनुमति दी, जबकि प्रतिभा और वास्तविक प्रगति का गला घोंट दिया।

खेल शासन कानून का विचार नया नहीं है, लेकिन राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी और उपेक्षा का मतलब है कि यूपीए कार्यकाल के दौरान इस प्रयास को कभी गंभीरता से आगे नहीं बढ़ाया गया। 2011 में, तत्कालीन खेल मंत्री अजय माकन ने उम्र और कार्यकाल की सीमा लगाने और पारदर्शिता को अनिवार्य करने के लिए एक राष्ट्रीय खेल विकास विधेयक का मसौदा तैयार किया, लेकिन यूपीए कैबिनेट ने इसे रोक दिया।

राष्ट्रीय खेल शासन विधेयक 2025 एक गेम-चेंजर है जो राष्ट्रीय खेल बोर्ड (NSB) का निर्माण करेगा – जिससे राष्ट्रीय और राज्य खेल संघों को पहचानने और उनकी देखरेख करने के लिए एक केंद्रीय नियामक, गैर-अनुपालन निकायों को मान्यता देने की शक्तियों के साथ सशक्त है, जिससे जवाबदेही सुनिश्चित होगी। एक राष्ट्रीय खेल न्यायाधिकरण (एनएसटी) होगा- एक समर्पित अर्ध न्यायिक निकाय, जो खेल के लिए अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता न्यायालय की तर्ज पर तैयार किया गया है, जो लंबी अदालती लड़ाई को दरकिनार करके विवादों को तेजी से हल करेगा। एक खेल चुनाव पैनल पारदर्शी और निष्पक्ष रिटर्निंग अधिकारियों के साथ पारदर्शी, निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करेगा और इससे चुनावी गड़बड़ियों को समाप्त किया जाएगा। आयु और कार्यकाल सीमा यह सुनिश्चित करेगी कि प्रशासकों द्वारा आजीवन नियंत्रण अतीत की बात बन जाए। प्रत्येक 15 सदस्यीय कार्यकारी समिति में कम से कम दो एथलीटों और चार महिलाओं के साथ एथलीट और महिलाओं का प्रतिनिधित्व अनिवार्य किया गया है, जिससे प्रत्येक समूह के लिए लगभग 30% प्रतिनिधित्व सुनिश्चित होता है। यह महिलाओं और नाबालिगों को उत्पीड़न या दुर्व्यवहार से बचाने के लिए एक सुरक्षित खेल नीति भी पेश करेगा, जहां नैतिकता/एंटी-डोपिंग समितियों की आवश्यकता है ताकि भारत अंतर्राष्ट्रीय अखंडता मानकों को पूरा कर सके।

नया खेल विधेयक एथलीटों, महिलाओं और युवाओं को शासन के केंद्र में रखकर एथलीटों, महिलाओं और युवाओं के पक्ष में है। एथलीट आयोगों को अनिवार्य करके और खिलाड़ियों के लिए नेतृत्व की भूमिका आरक्षित करके, यह सुनिश्चित करता है कि जो लोग मैदान पर प्रतिस्पर्धा करते हैं वे निर्णय भी ले सकते हैं। पहली बार भारत के एथलीटों के पास दशकों के प्रशासक-वर्चस्व वाले प्रबंधन को उलटने के लिए एक औपचारिक आवाज होगी। महिलाओं के लिए लगभग 30% नेतृत्व पदों के आरक्षित होने के साथ, ऐतिहासिक रूप से पुरुष-वर्चस्व वाले डोमेन में लैंगिक समानता होगी। हमारे 65% युवाओं के लिए, यह कानून राजनीतिक नियंत्रण से मुक्त एक मेरिटोक्रेटिक इकोसिस्टम बनाता है। खेलो इंडिया जैसी पीएम मोदी की सरकार की पहल के साथ, जिसने 1,000 से अधिक प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किए हैं और छात्रवृत्ति के साथ हजारों युवा एथलीटों का समर्थन करते हैं, कानून जमीनी स्तर से पोडियम तक खिलाड़ियों की एक पाइपलाइन सुनिश्चित करता है। मोदी युग में खेल कार्यक्रमों ने खेल को जन भागीदारी आंदोलन या जन अभियान और आंदोलन में बदल दिया है।

प्रधानमंत्री मोदी 2014 से खेलों को राष्ट्रीय मिशन मोड में ले जा रहे हैं। TOPS और खेलो इंडिया जैसी योजनाएं, सैकड़ों कुलीन और नवोदित एथलीटों का समर्थन करती हैं और विश्व स्तर के प्रशिक्षण और संसाधनों तक पहुंच का लोकतंत्रीकरण करती हैं। खेल बजट 2014-15 में 1,643 करोड़ रुपये से 130.9% बढ़कर 2025-26 में 3,794 करोड़ रुपये हो गया है।

पिछले दशक में भारत की पदक तालिका बढ़ी है: 2022 एशियाई खेलों में 107 पदक (28 स्वर्ण), 2022 राष्ट्रमंडल खेलों में 61 पदक (22 स्वर्ण) और 2024 पेरिस पैरालिंपिक में रिकॉर्ड 29 पदक। पेरिस ओलंपिक 2024 में, भारत ने नीरज चोपड़ा के ऐतिहासिक भाला रजत सहित छह पदक हासिल किए।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83

पंजाब केसरी

दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

प्रवाह

77 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा

हमें कभी भी डर के बारे में बात नहीं करनी चाहिए, लेकिन बातचीत से डरना भी नहीं चाहिए। -जॉन एफ कैनेडी

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के आंकड़ों के अनुसार उपभोक्ता मूल्य सूचकांक आधारित खुदरा मुद्रास्फीति दर का आठ साल के निम्नतम स्तर पर पहुंचना अर्थव्यवस्था के लिहाज से शुभ संकेत है, लेकिन वर्तमान वैश्विक आर्थिक अनिश्चितताओं के मद्देनजर इसे सतही राहत के बजाय व्यापक संदर्भ में देखे जाने की जरूरत है।

राहत और संकेत

ऐसे वक्त में जब अमेरिका की आर्थिक नीतियों में बदलाव की वजह से वैश्विक अर्थव्यवस्था पर अनिश्चितताएं छाई हुई हैं, तब राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय द्वारा जारी आंकड़ों का यह बताना कि उपभोक्ता मूल्य सूचकांक आधारित खुदरा मुद्रास्फीति दर आठ वर्षों के निम्नतम स्तर पर आ गई है, भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए यकीनन एक सकारात्मक संकेत है, लेकिन इसके साथ कुछ चिंताएं और नीतिगत सवाल भी उठते हैं। महंगाई में कमी आने का प्रमुख कारण खाद्य पदार्थों की कीमतों में आई कमी को बताया जा रहा है। इसके अलावा, मानसून की बेहतर स्थिति, जलाशयों में पर्याप्त जलस्तर और खरीफ की अच्छी बुआई को भी कीमतों में स्थिरता के लिहाज से अच्छा संकेत माना जा रहा है। महंगाई दर का 1.55 फीसदी पर पहुंचना उपभोक्ताओं के लिए राहत की बात है। इससे उनकी क्रयशक्ति बढ़ती है, क्योंकि वस्तुओं और सेवाओं की कीमतें स्थिर रहती हैं। खासकर, निम्न और मध्यम आय वर्ग के लिए यह उत्साहजनक संकेत है, जो अपनी आय का बड़ा हिस्सा आवश्यक वस्तुओं पर खर्च करते हैं। कुल मिलाकर यह पूरा परिदृश्य पहली नजर में बेहद सकारात्मक लगता है। लेकिन, हर आर्थिक सूचक की तरह, इसे भी सतही राहत के बजाय व्यापक संदर्भ में देखना चाहिए। सामान्य अर्थशास्त्रीय नियम है कि महंगाई कम होने से मांग बढ़ती है। लेकिन इतनी कम महंगाई का मतलब यह भी हो सकता है कि अर्थव्यवस्था में मांग की गति धीमी हो रही हो। अगर उपभोक्ता खर्च कम कर रहे हैं, तो उत्पादन पर असर पड़ता है, और यह रोजगार सृजन व औद्योगिक वृद्धि के लिए भी चेतावनी का संकेत हो सकता है। औद्योगिक उत्पादन और थोक महंगाई के आंकड़े इस दृष्टिकोण से अधिक स्पष्ट तस्वीर दे सकेंगे। दरअसल, केंद्रीय बैंक के लिए यह स्थिति एक दोधारी तलवार की तरह है। एक ओर, कम महंगाई उपभोक्ताओं के लिए फायदेमंद है, तो दूसरी तरफ, यह मौद्रिक नीति को जटिल बनाती है। पिछले हफ्ते

केंद्रीय बैंक ने नीतिगत रेपो दर को अपरिवर्तित रखने का फैसला किया था, लेकिन अभी इसमें घटाव की कुछ गुंजाइश है। हालांकि, यह टैरिफ युद्ध के भारत की अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पर निर्भर होगा। मुद्रास्फीति का दो फीसदी से नीचे आना, ब्याज दरों में कटौती की संभावना को बढ़ाता है, ताकि मांग को बढ़ावा दिया जा सके। हालांकि, यह कदम सावधानी से उठाना होगा, क्योंकि अत्यधिक ढीली मौद्रिक नीति भविष्य में मुद्रास्फीति को फिर से बढ़ा सकती है। खुदरा मुद्रास्फीति दर का रिकॉर्ड निचाई पर पहुंचना अर्थव्यवस्था के लिहाज से आश्वस्त करने वाला है। वैश्विक अनिश्चितताओं को देखते हुए यह जरूरी है कि सरकार व केंद्रीय बैंक इस अवसर का उपयोग कर ऐसे फैसले लें, जो आर्थिक स्थिरता और विकास को सुनिश्चित करने वाले हों।

ये मुलाकात एक बहाना है

खुद को दुनिया का सबसे महान वार्ताकार समझने वाले ट्रंप कल जब इतिहास के पन्नों पर अपनी छाप छोड़ने की मंशा से पुतिन से शिखर बैठक में मिलेंगे, तो उन पर पूरी दुनिया की नजर होगी। लेकिन, जो पुतिन को जानते हैं, वे समझ सकते हैं कि इस मुलाकात का सकारात्मक नतीजा निकलने की उम्मीद कम ही है।

खुद को दुनिया का सबसे महान वार्ताकार समझने वाले डोनाल्ड ट्रंप कल यानी शुक्रवार को अलास्का में व्लादिमीर पुतिन के साथ होने वाली शिखर बैठक से पहले शायद किसी सलाह की जरूरत न समझते हों, फिर भी उन्हें रॉबर्ट क्राफ्ट नाम के सज्जन को फोन कर लेना चाहिए। मशहूर उद्योगपति क्राफ्ट जानते हैं कि रूसी राष्ट्रपति द्वारा ठगे जाने का मतलब क्या होता है। दरअसल, 2005 में अमेरिकी व्यापारिक नेताओं के साथ रूस की यात्रा के दौरान क्राफ्ट ने सिटीग्रुप के तत्कालीन अध्यक्ष सैंडी वेइल के कहने पर पुतिन को अपनी 25 हजार डॉलर की अंगूठी दिखाई थी।

क्राफ्ट ने 2013 में यह वाकया बताया कि किस तरह से पुतिन ने उनकी अंगूठी को पहनते हुए कहा था, 'इस अंगूठी से मैं किसी की जान भी ले सकता हूं।' वह बताते हैं, 'मैंने अंगूठी वापस लेने के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाया, लेकिन उन्होंने उसे अपनी जेब में रख लिया, और केजीबी के तीन लोग उन्हें घेरते हुए बाहर निकल गए।' क्राफ्ट बताते हैं कि तत्कालीन बुश प्रशासन ने उनसे आग्रह किया था कि वह यह दिखावा करें कि अंगूठी एक उपहार थी, जबकि पुतिन ने बाद में इस मामले में क्राफ्ट का मजाक बनाते हुए कहा था कि अंगूठी तो बेहद सस्ती निकली। यह घटना दर्शाती है कि पुतिन आखिर चीज क्या हैं और क्यों उनके जैसे शातिर नेता को हल्के में नहीं लिया जा सकता।

ब्रेट स्टीफेंस
द न्यूयॉर्क टाइम्स

ट्रंप और पुतिन के रिश्ते भी कुछ अजीब ही रहे हैं। फिर भी, ट्रंप शायद 2018 के हेलसिंकी शिखर सम्मेलन जैसा प्रदर्शन नहीं दोहराना चाहेंगे, जहां उन्होंने पुतिन के इस आश्वासन को नकार दिया था कि 2016 के चुनाव में रूस की तरफ से कोई दखल अंदाजी नहीं हुई थी और तब रिपब्लिकन पार्टी को इस तरह शर्मिंदा किया था कि वह आज भी वैसी ही दिखती है।

ट्रंप को शायद यह एहसास भी होगा कि उनके कुछ पूर्ववर्तियों ने पिछले रूस शिखर सम्मेलनों में किस तरह से खुद को मूर्ख बनाया था। जॉर्ज डब्ल्यू बुश को कैसे भूला जा सकता है, जब उन्होंने कहा था, 'मैंने उस व्यक्ति की आंखों में देखा और मुझे वह बेहद सीधे व भरोसेमंद दिखे। मैं उनकी

आत्मा तक को देख पा रहा था।' या फिर, बराक ओबामा का यह कहना, 'चुनाव के बाद मेरे पास अधिक लचीलापन है', उन्होंने यह बात पुतिन के सहयोगी दिमित्री मेदवेदेव से कही थी।

पुतिन की गैंगस्टर वाली शैली शायद ट्रंप को रास नहीं आती है, लेकिन वह बिल्कुल नहीं चाहेंगे कि ताजा बैठक में पुतिन उन पर हावी रहें। दरअसल, ट्रंप और पुतिन की इस मुलाकात में काफी कुछ गड़बड़ होने की आशंका है, जिसमें रूस व यूक्रेन के बीच 'भूमि की अदला-बदली' की अस्पष्ट बातचीत भी शामिल है। इसके बावजूद कुछ तरीके हैं, जिनसे इस शिखर सम्मेलन को सार्थक बनाया जा सकता है। इस शिखर सम्मेलन के बारे में सबसे सकारात्मक बात यह है कि इसे एक अंतहीन युद्ध को रोकने के सम्मानजनक रास्ते के रूप में देखा जा सकता है। इसमें ट्रंप रूस पर लगे प्रतिबंध हटाने की पेशकश कर सकते हैं और वादा कर सकते हैं कि यूक्रेन नाटो में शामिल नहीं होगा, लेकिन रूस को इसकी भारी कीमत चुकानी होगी। पुतिन को यह स्वीकारना होगा कि फरवरी, 2022 की तर्ज पर रूस की यूक्रेन से समग्र वापसी होगी, कीव को पश्चिमी सहायता जारी रहेगी और यूरोपीय संघ में यूक्रेन की सदस्यता पर कोई रोक नहीं होगी। फिलहाल यह टेढ़ी खीर ही दिखता है।

पुतिन निश्चित तौर पर युद्ध रोकने के इन प्रयासों को खारिज करेंगे, भले ही इससे उनकी अर्थव्यवस्था को सहारा मिल रहा हो या 2014 में क्रीमिया और पूर्वी यूक्रेन के कुछ हिस्सों पर उनके अवैध, पर अपरिवर्तनीय कब्जे को मंजूरी मिल जाए। ट्रंप रूस की अस्वीकृति के नतीजों के बारे में पुतिन से स्पष्ट बातचीत करके अपनी ही मदद करेंगे। इसके अतिरिक्त भी ट्रंप को कुछ मोर्चों पर ध्यान देना होगा। उन्हें यूरोप के साथ मिलकर अनुमानित तीन सौ अरब डॉलर की जब्त रूसी सरकारी संपत्तियों को अपने कब्जे में लेने की कोशिश करनी चाहिए, ताकि यह यूक्रेन द्वारा पश्चिमी हथियारों की खरीद के लिए धन जुटाने का एक जरिया बन सके।

अमेरिकी राष्ट्रपति के पास 1977 के अंतरराष्ट्रीय आपातकालीन आर्थिक शक्ति अधिनियम के तहत ऐसा करने का कानूनी अधिकार है और जॉर्ज एच डब्ल्यू बुश ने सद्दाम हुसैन के कुवैत पर आक्रमण के बाद इराक की जब्त संपत्तियों पर कब्जा करके उसे एक मुआवजा कोष में स्थानांतरित करके एक मिसाल कायम की थी। ट्रंप को इस्राइल के साथ अमेरिकी संबंधों की तर्ज पर कीव के साथ भी एक रक्षा और तकनीकी सहयोग समझौते पर विचार करना चाहिए। वर्तमान समय में युद्ध के मैदान में ड्रोन के तेज विकास और तैनाती के बारे में अमेरिका को यूक्रेन से काफी कुछ सीखना है। उन्हें कीव को एफ-16 और अन्य हथियारों के अतिरिक्त उपकरणों की आपूर्ति सुनिश्चित करनी चाहिए, ताकि यूक्रेन के आकाश की रक्षा हो सके। अमेरिका द्वारा आपूर्ति किए गए हथियारों के यूक्रेन द्वारा उपयोग पर सभी तरह के प्रतिबंधों को हटाने पर भी ट्रंप को गौर करना चाहिए।

शिखर बैठक के जरिये ट्रंप रूसी जनता को यह संदेश देना चाहेंगे कि उनके राष्ट्रपति को सम्मानजनक शांति का प्रस्ताव दिया गया था, जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया। हालांकि, ऐसे शिखर सम्मेलन का कोई अर्थ नहीं, अगर इसमें वोलोदिमीर जेलेंस्की और यूक्रेनी जनता की भागीदारी न हो, जिनके साथ वैसा ही व्यवहार होने का खतरा है, जैसा 1938 में म्यूनिख में मिले सत्ताधारियों ने चेकोस्लोवाकिया की सरकार के साथ किया था। नेविल चैंबरलेन, जो 1937 से लेकर 1940 तक ब्रिटेन के प्रधानमंत्री रहे, एक और ऐसे नेता हैं, जिनसे ट्रंप अपनी तुलना नहीं देखना चाहेंगे। गौरतलब है कि चैंबरलेन ने दूसरे विश्वयुद्ध से ठीक पहले की अवधि में हिटलर के जर्मनी के प्रति तुष्टीकरण का रवैया अपनाया था। कल ट्रंप के पास यह दिखाने का मौका है कि पुतिन, पुतिन हैं, तो वह भी ट्रंप हैं। इस दौरान वह पुतिन से क्राफ्ट की अंगूठी लौटाने के लिए भी कह सकते हैं।

©The New York Times 2025

जीवन धारा

हेराक्लीटस

हम चाहे किसी भी बदलाव का अनुभव करें, हम उसे कैसे अपनाते हैं, यह हमेशा इस बात को प्रभावित करेगा कि हम बदलाव के साथ कैसे जी पाते हैं। हम जो चुनते हैं, जो सोचते हैं, जो करते हैं, वही हम बन जाते हैं।

जो बदलाव से डरते हैं, वे पीछे रह जाते हैं

जीवन में कुछ भी स्थिर नहीं है। सब कुछ बहता है, जैसे नदी का पानी। हम सभी सोचते हैं कि दुनिया वैसी ही रहेगी जैसी आज है, लेकिन नहीं। 'पंता रेई' यानी सब कुछ बहता है। कोई व्यक्ति एक ही नदी में दो बार पैर नहीं रख सकता। पहली बार जब हम पैर रखते हैं, पानी बह जाता है, नदी बदल जाती है, और हम खुद भी बदल जाते हैं। अनुभव, समय, सब कुछ हमें नया बनाता है। हम एक ही नदी में दो बार नहीं उतर सकते, क्योंकि वह वही नदी नहीं रहती और हम भी वही व्यक्ति नहीं रहते। यह जीवन का मूल सत्य है। परिवर्तन ही एकमात्र स्थिर चीज है। कल जो था, आज नहीं है। कल जो होगा, वह आज से अलग होगा। इस बदलाव को स्वीकार करें।

जो लोग बदलाव से डरते हैं, वे जीवन में पीछे रह जाते हैं। बदलाव से लड़ें नहीं, उसके साथ चलें। परिवर्तन एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, जो हमेशा होती रहती है। जीवन में संघर्ष आवश्यक है। बगैर चुनौतियों के, जीवन स्थिर हो जाता है। हमारा चरित्र महत्वपूर्ण है। चरित्र हमें चुनौतियों से लड़ने में सक्षम बनाता है। अच्छा चरित्र एक हफ्ते या एक महीने में नहीं बनता। यह धीरे-धीरे बनता है। अच्छा चरित्र विकसित करने के लिए निरंतर और धैर्यपूर्ण प्रयास की आवश्यकता होती है।

कुछ लोग अपने दैनिक जीवन में जो करते हैं, उसके प्रति उतने ही अनजान होते हैं, जितने कि वे सोते समय होते हैं। सोते हुए लोग अपनी ही दुनिया में रहते हैं, केवल जागने वालों की ही एक दुनिया होती है। वे बिना सोचे-समझे काम करते हैं और उनके कार्यों के परिणामों के बारे में ज्यादा नहीं सोचते हैं। हम सभी हर दिन बदलावों का सामना करते हैं, चाहे वह मौसम में एक साधारण बदलाव हो, हमारी दिनचर्या हो या ऋतुओं में अपेक्षित बदलाव हो। बदलाव हम सभी को प्रभावित करता है और हम सभी बदलाव से अलग तरह से निपटते हैं। जीवन में यही एकमात्र स्थिर तत्व है, जिसके बारे में हम निश्चित हो सकते हैं कि वह घटित होगा। हम चाहे किसी भी बदलाव का अनुभव करें, हम उस बदलाव को कैसे अपनाते हैं, यह हमेशा इस बात को प्रभावित करेगा कि हम बदलाव के साथ कैसे जी पाते हैं। हम जो चुनते हैं, जो सोचते हैं, जो करते हैं, वही हम बनते हैं।

दिन-प्रतिदिन की पसंद से हमारा व्यक्तित्व बनता है। अधिकांश लोगों को उन चीजों की कोई समझ नहीं होती, जिनका वे प्रतिदिन सामना करते हैं, और न ही, उन्हें निर्देश दिया जाता है। इससे उन्हें उन चीजों का सही ज्ञान नहीं हो पाता है, यद्यपि स्वयं उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि उनके पास ज्ञान है। वे समझ नहीं पाते, बहरों की तरह सुनते हैं। मौजूद रहते हुए भी अनुपस्थित रहते हैं। अच्छे विचार रखें, सिद्धांतों पर चलें। यही वह प्रकाश है, जो हमारा मार्गदर्शन करता है। हर पल सीखें, लेकिन मूल सिद्धांत रखें। जीवन बहता है, हम उसके साथ बहें, लेकिन दिशा स्वयं चुनें। संघर्ष से डरें नहीं, वह हमें मजबूत बनाएगा। बुद्धि की खोज करें, खुद को जानें। यही जीवन का सार है।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

बदलाव को स्वीकारें

सूत्र

हर पल कुछ नया हो रहा है, इसी का परिणाम है कि दुनिया हर बार अलग और अनोखे रूप में नजर आती है। आज हर पल हमारे सामने एक नई चुनौती और कुछ नया बदलाव है, जीवन में सफलता और कुछ नया बनने के लिए अपने विचारों को जरूर बदलें और हर बदलाव को स्वीकार करें।

दूसरा पहलू

सर्जरी के मरीजों को बेहोश करने के लिए इस्तेमाल होने वाली डेसफ्लुरेन दवा को स्कॉटलैंड में प्रतिबंधित कर दिया गया है।

दवाएं भी बढ़ा रहीं धरती का तापमान

स्कॉटलैंड मौजूदा समय में 'डेसफ्लुरेन' नामक एनेस्थेटिक के उपयोग और विक्रय पर प्रतिबंध लगाने वाला दुनिया का इकलौता देश है। मरीजों की सर्जरी के दौरान बेहोशी के लिए प्रयुक्त की जाने वाली यह दवा पर्यावरण के लिए बड़ा खतरा बन चुकी है। स्कॉटलैंड के इस साहसिक कदम से प्रेरित होकर 27 देशों के समूह यूरोपीय संघ ने एक जनवरी, 2026 से इसके उपयोग पर पाबंदी लगाने का निर्णय लिया है।

डेसफ्लुरेन का उपयोग 'सर्जिकल एनेस्थेसिया' के रूप में पिछली सदी के अंतिम दशक से किया जा रहा है। सर्जरी के दौरान सांस के माध्यम से दी जाने वाली यह गैस वायुमंडल में उत्सर्जित होने पर शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैस के रूप में व्यवहार करती है। इससे होने वाले पर्यावरणीय नुकसान का आकलन इस बात से किया जा सकता है कि एक बोतल (240 मिलीलीटर) डेसफ्लुरेन के इस्तेमाल से ग्लोबल वार्मिंग पर उतना ही असर पड़ता है, जितना 440 किलोग्राम कोयला जलाने से होता है। जाहिर है, यह दवा पर्यावरण को जीवाश्म ईंधनों के दहन के मुकाबले कहीं अधिक नुकसान पहुंचाती है।

सुधीर कुमार

एक बोतल (240 एमएल) डेसफ्लुरेन के इस्तेमाल से ग्लोबल वार्मिंग पर उतना ही असर पड़ता है, जितना 440 किलोग्राम कोयला जलाने से होता है।

स्कॉटलैंड से प्रेरित होकर 27 देशों के समूह यूरोपीय संघ ने एक जनवरी, 2026 से डेसफ्लुरेन के उपयोग पर पाबंदी लगाने का निर्णय लिया है, ताकि पर्यावरण व ऊर्जा संरक्षण में उल्लेखनीय योगदान दिया जा सके।

ब्रिटेन की राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अनुसार, डेसफ्लुरेन की ग्लोबल वार्मिंग क्षमता (ऊष्मा को रोकने के गुण) कार्बन डाइऑक्साइड से 2,590 गुना अधिक है। दूसरी तरफ, वातावरण में पहुंचने के बाद यह गैस लगभग डेढ़ दशक तक वहां विद्यमान रहती है, जो सेवोफ्लुरेन (1.4 वर्ष) और आइसोफ्लुरेन (3.5 वर्ष) जैसी एनेस्थेटिक गैसों के मुकाबले कई गुना अधिक है। व्यापक 'कार्बन फुटप्रिंट' होने के कारण ही इसके उपयोग को प्रतिबंधित करने और वैकल्पिक उपायों को अपनाने की मांग उठने लगी है। स्कॉटलैंड में डेसफ्लुरेन पर लगाए गए प्रतिबंध के नतीजे आशाजनक रहे हैं। वहां की राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा की ओर से कहा गया है कि इस प्रतिबंध से प्रतिवर्ष लगभग 6.17 किलोटन कार्बन उत्सर्जन में कमी आई है, जो प्रतिवर्ष 1,700 घरों को बिजली देने के बराबर है। इस तरह डेसफ्लुरेन से दूरी न सिर्फ ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाती है, बल्कि ऊर्जा संरक्षण के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान देती है।

डेसफ्लुरेन पर प्रतिबंध स्वास्थ्य क्षेत्र में पर्यावरणीय जवाबदेही और सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। कम कार्बन उत्सर्जक सर्जिकल एनेस्थेटिक उपायों को अपनाना वैश्विक खुशहाली के लिए जरूरी है। यह पहल चिकित्सा क्षेत्र को पर्यावरण अनुकूल बनाने में मील का पत्थर साबित हो सकती है।

आंकड़े

व्यस्ततम बंदरगाह

समुद्री मार्ग से देश के कई बंदरगाहों से माल ढुलाई का काम होता है। जून 2025 में ओडिशा का पारादीप देश का सबसे व्यस्ततम बंदरगाह था।

बंदरगाह	आंकड़े
पारादीप	131.4
दीनदयाल	120.3
जवाहरलाल नेहरू	75.6
विशाखापत्तनम	73.3
श्यामा प्रसाद मुखर्जी	59.3

आंकड़े बंदरगाहों पर संभाले गए भार के लाख मीट्रिक टन में | स्रोत : MoPSW

भगवान शंकर ने योगी वनराज महाराज की भक्ति से प्रसन्न होकर कहा, 'तात! जिस प्रकार तुम मुझे प्रसन्न करते हो, वैसे ही भगवान श्रीकृष्ण को प्रसन्न करो।'

कृष्णरूप भज कृष्णरूप हो

योगी वनराज महाराज का जन्म विक्रम संवत 1922 को पौष कृष्ण अष्टमी के दिन जोधपुर में हुआ था। परिवार से मिले संस्कार और पूर्व जन्म की भक्ति से उनका मन शुरू से ही भगवान की भक्ति में रमता था।

वनराज महाराज के संबंध में बताते हैं कि उन्होंने वेद और शास्त्रों का अध्ययन किया था। पहले वह भगवान शिव की भक्ति करते थे और पूजन में आठ घंटे लगा देते थे। उन्होंने *संगीतपंचरत्न* नामक पुस्तक की रचना भी की। उनके राग और भक्ति से भगवान शंकर ने प्रसन्न होकर उन्हें स्वप्न में दर्शन दिए और कहा, 'तात! जिस प्रकार तुम मुझे प्रसन्न करते हो, वैसे ही भगवान श्रीकृष्ण को प्रसन्न करो।' भवानीपति के उपदेश से ठीक उसी दिन से वनराज महाराज अपनी पारिवारिक और सांसारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन रहने लगे। उन्होंने गीता में दिए भगवान श्रीकृष्ण के उपदेशों को अपने जीवन में आत्मसात किया। बताते हैं कि वनराज महाराज की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें चतुर्भुज रूप में दर्शन दिए। भक्ति की महिमा का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा, *'जिन्ह कृष्ण चरण रति कीति, जिन्हें नहीं जगत सुहावे हो। नट चढ़ वनतरु बांस गही पुन, मन न डुलावे हो। जिमि हरिचरण प्रीति अतिशय सो, भक्त कहावे हो।। कह वनराज भक्ति कर ऐसी, जन्म न आवे हो। कृष्णरूप भज कृष्णरूप हो, निज पद पावे हो।।'* यह कृष्णभक्ति की महिमा थी कि राधाष्टमी के दिन उन्होंने भौतिक चोला त्यागा।

अंतर्यात्रा
संकलित

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 14 अगस्त, 1950

पटेल की घोषणा, हिंसक कार्यों को सख्ती से कुचलेंगे

सरदार पटेल की स्पष्ट घोषणा
हिंसात्मक कार्यों को सख्ती से कुचला जायगा

उपप्रधानमंत्री सरदार पटेल ने संसद में घोषणा की कि सरकार कम्युनिस्टों के प्रति अपनी नीति में कोई बदलाव नहीं करेगी। उन्होंने कहा कि हिंसक और विद्रोही कार्यों को सख्ती से कुचला जाएगा।

ट्रंप, टैरिफ और एमएसएमई

ट्रंप के टैरिफ से सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यमों को अधिक नुकसान होने का अनुमान है। कुल निर्यात में 45 प्रतिशत से ज्यादा योगदान इसी क्षेत्र का है।

सतीश सिंह | आर्थिकी

टैरिफ, ट्रंप की आर्थिक योजना का हिस्सा है। अमेरिका इसके जरिये राजस्व, अर्थव्यवस्था का आकार, विनिर्माण, रोजगार सृजन आदि में तेजी लाना चाहता है। वर्ष 2024 में अमेरिका में आयात का 40 फीसदी से अधिक हिस्सा चीन, मेक्सिको और कनाडा से आए उत्पादों का रहा था। वर्ष 2023 में अमेरिका को चीन से 30.2 प्रतिशत, मेक्सिको से 19 प्रतिशत और कनाडा से 14.5 प्रतिशत व्यापार घाटा हुआ था। कुल मिलाकर ये तीनों देश 2023 में अमेरिका के करीब 40 लाख करोड़ रुपये के व्यापार घाटे के लिए जिम्मेदार थे। टैरिफ के जरिये ट्रंप इसी घाटे को कम करना चाहते हैं। इस क्रम में उन्होंने 27 अगस्त से भारत पर 50 फीसदी टैरिफ लगाने का फैसला किया है।

वैश्विक रेटिंग एजेंसी मूडीज के अनुसार, ट्रंप के इस फैसले से वित्त वर्ष 2026 में भारत की जीडीपी वृद्धि दर में 30 आधार अंकों की कमी आ सकती है, जिससे यह छह फीसदी के आसपास रह सकती है। एजेंसी का यह भी मानना है कि स्थानीय मांग और भारत के सेवा क्षेत्र की

मजबूती की बदौलत भारत टैरिफ का दबाव झेल सकता है। भारत अमेरिका से शीर्ष पांच उत्पाद जैसे, क्रूड पेट्रोलियम, पेट्रोलियम उत्पाद, सोना, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण और कोयला व कोक खरीदता है, जबकि पेट्रोलियम, दवा, मोती, महंगे पत्थर और इलेक्ट्रॉनिक मशीनरी व उपकरण आदि निर्यात करता है।

अमेरिका से व्यापार भारत के लिए फायदेमंद रहा है। वित्त वर्ष 2023-24 में भारत ने अमेरिका को 6.75 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया था, जबकि आयात किया 3.67 लाख करोड़ रुपये का। कुल कारोबार में भारत के लिए 3.07 लाख करोड़ रुपये का सरप्लस ट्रेड बैलेंस रहा। भारत ने वित्त वर्ष 2022-23 के दौरान अमेरिका को 6.84 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया, जबकि आयात 4.43 लाख करोड़ रुपये का किया।

वित्त वर्ष 2024-25 के दौरान भारत ने सबसे अधिक चीन से 7.36 लाख करोड़ रुपये का आयात किया, जबकि रूस से 4.32 लाख करोड़ रुपये, यूएई से 3.98 लाख करोड़ रुपये, अमेरिका से 2.98 लाख करोड़ रुपये और सऊदी अरब से 1.96 लाख करोड़ रुपये का आयात किया। वहीं, अमेरिका को सबसे अधिक 5.22 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया, जबकि यूएई को 2.34 लाख करोड़ रुपये, नीदरलैंड को 1.58 लाख करोड़ रुपये, ब्रिटेन को 0.94 लाख करोड़ रुपये और चीन को महज 0.91 लाख करोड़ रुपये का निर्यात किया।

टैरिफ से सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) को अधिक नुकसान होने का अनुमान है। देश के कुल निर्यात में 45 प्रतिशत से अधिक का योगदान एमएसएमई क्षेत्र का है। 50 फीसदी टैरिफ लगने से कारोबार को 30 अरब डॉलर से ज्यादा का नुकसान होने का अंदेशा है। एक अनुमान के अनुसार, अमेरिकी टैरिफ से भारतीय निर्यातकों की लागत दूसरे देशों के निर्यातकों की तुलना में 30 से 35 प्रतिशत तक बढ़ जाएगी। हालांकि, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) आदि देशों के साथ कारोबारी समझौता करने से भी कारोबार में इजाफा हो सकता है, पर इसे तत्काल मूर्त रूप देना आसान नहीं।

एमएसएमई मौजूदा चुनौतियों का सुचारु रूप से सामना कर सके, इसके लिए उसे डिजिटल व्यापार प्लेटफॉर्म उपलब्ध कराने, समयबद्ध आर्थिक सहायता मुहैया कराने तथा आवश्यक जानकारी तत्काल मुहैया कराने के साथ-साथ सरकार को इस क्षेत्र को नीतिगत व आर्थिक मदद भी देनी होगी और दुनिया के सभी प्रमुख शहरों में ट्रेड डेस्क, गोदाम और निर्यात वितरण केंद्र बनाने या बनवाने की दिशा में कार्य करना होगा।

भारत से 27 फीसदी वाहन पुर्जे व 17 फीसदी टायर अमेरिका जाते हैं। टैरिफ से भारी वाहन मशीनरी और रिप्लेसमेंट टायर की श्रेणी में वियतनाम व इंडोनेशिया जैसे एशियाई देशों से साथ कीमत की होड़ में भारत पिछड़ सकता है, क्योंकि इन दोनों देशों पर कम टैरिफ लगाया गया है। भारत के दवा निर्यात में अमेरिका की हिस्सेदारी 35 प्रतिशत है और दवा को अभी टैरिफ की जद से बाहर रखा गया है, क्योंकि अमेरिका निर्यात की जाने वाली जेनेरिक दवाओं की कीमत बहुत कम होती है। इसमें पुराने रोगों, कैंसर और संक्रामक रोगों की दवाएं शामिल हैं। चीन को जेनेरिक दवाओं में दिलचस्पी नहीं है। इसलिए अमेरिका के पास भारत के अलावा कोई दूसरा विकल्प फिलहाल नहीं है। इसलिए, इस क्षेत्र में कार्यरत एमएसएमई कंपनियों को हाल-फिलहाल में राहत रहेगी।

मौजूदा अमेरिकी नीति से निर्यात घटने और आयात बढ़ने से विदेशी मुद्रा भंडार में भी कमी आ रही है। एक अगस्त को समाप्त सप्ताह में यह 9.3 अरब डॉलर घटकर 688 अरब डॉलर रह गया। आंकड़ों से साफ है, भारत सबसे अधिक निर्यात अमेरिका को करता है और अमेरिका की वर्तमान नीति से भारत का अमेरिका के साथ-साथ समग्र व्यापार घाटे में वृद्धि, विदेशी मुद्रा भंडार में कमी, रोजगार सृजन दर में गिरावट, रुपये के मूल्य में कमी, राजस्व में कमी, जीडीपी में कमी, अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव आदि दृष्टिगोचर हो रहा है।

edit@amarujala.com

कुत्तों की कितनी चिंता

आवारा कुत्तों के पुनर्वास पर तेज हुई बहस जहां सबका ध्यान खींच रही है, वहीं, सबसे संवेदना की भी उम्मीद करती है। सोमवार को सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में आवारा कुत्तों का आठ सप्ताह के अंदर पुनर्वास करने का सख्त निर्देश दिया था, पर तमाम विरोध के बाद न्यायालय ने अब पुनर्विचार के संकेत दिए हैं। आवारा कुत्तों के पुनर्वास से संबंधित एक याचिका भारत के प्रधान न्यायाधीश बीआर गवई की पीठ के सामने पेश की गई है और न्यायमूर्ति ने कहा कि मैं इस पर गौर करूंगा। क्या आवारा कुत्तों की समस्या को हल करने की कोशिशें फिर थम जाएंगी? क्या आवारा कुत्तों के पक्षधर फिर एक बार अपनी कथित संवेदना के साथ आक्रामक अंदाज में सामने आएंगे और अपने पक्ष में फैसला पाते ही फिर शांत बैठ जाएंगे। आवारा कुत्तों के बचाव में उतरे लोग तब कहां गायब हो जाते हैं, जब ये कुत्ते किसी बच्चे या बुजुर्ग को काटते हैं और जब रेबीज से किसी की मौत हो जाती है? क्या यह साधारण बात है कि भारत में प्रतिदिन औसतन दस हजार लोगों को कुत्ते काटते हैं और फिर खुद उनका जीवन खतरे में पड़ जाता है?

दरअसल, सर्वोच्च न्यायालय को यह ध्यान दिलाया गया है कि उसने साल 2023 में कुत्तों के यथोचित संरक्षण के पक्ष में एक फैसला सुनाया था और न्यायालय का ताजा फैसला बिल्कुल अलग आया है। याचिका में यह भी दावा किया गया है कि कुत्तों की हत्या या उनके पुनर्वास के विरुद्ध भी व्यवस्था दी गई थी। ताजा आदेश में आवारा कुत्तों की हत्या करने की बात नहीं है, लेकिन उनका पुनर्वास सुनिश्चित करने के लिए कहा गया है। ज्यादातर लोग इसी पक्ष में हैं कि आवारा कुत्तों का पुनर्वास होना चाहिए। केवल राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि दूसरे राज्यों में भी आवारा पशुओं के खिलाफ सरगर्मी तेज हो गई है। राजस्थान उच्च न्यायालय ने सोमवार को शहर की सड़कों व राजमार्गों पर आवारा पशुओं के बढ़ते हमलों और मौतों का हवाला देते हुए उनसे निपटने के लिए व्यापक अंतरिम निर्देश जारी किए हैं। मतलब, राजस्थान में सड़कों से कुत्तों को ही नहीं, अन्य पशुओं को भी हटाया जाएगा। यहां भी आवारा पशुओं से हो रही समस्या का स्वतः संज्ञान लेते हुए न्यायालय ने विशेष अभियान चलाने के निर्देश दिए हैं। मद्रास उच्च न्यायालय के न्यायमूर्तियों ने भी ठीक इसी तरह के निर्देश पारित करने के संकेत दिए हैं। कर्नाटक और उत्तर प्रदेश में भी आवारा पशुओं से निजात पाने की चर्चा तेज हुई है। आज नहीं तो कल, देश के तमाम राज्यों को आवारा पशुओं पर लगाम लगाने के इंतजाम करने ही पड़ेंगे।

आवारा पशुओं का पुनर्वास जरूरी है। पालने वाले अपने घर में पशुओं को रख सकते हैं, पर अपने पशु प्रेम के प्रदर्शन के लिए सड़कों का सहारा लेना अमानवीय है।

सभ्य, सुखी और व्यवस्थित मानव बस्तियों में आवारा पशुओं को रखने की जरूरत नहीं है। पालने वाले अपने घर में पशुओं को प्रेम से रख सकते हैं, पर अपने पशु-प्रेम के प्रदर्शन के लिए सड़कों का सहारा लेना अमानवीय है। खासकर शहरों में सड़कें पशुपालन के लिए नहीं हैं। बीत गए दिन, जब सड़कों पर जगह होती थी, जहां चंद आवारा कुत्ते रह लेते थे। अब कुत्तों की संख्या बढ़ी है, तो उनमें से बड़ी संख्या में कुत्ते या उनके ज्यादातर नवजात बेदर्दी से वाहनों के शिकार होते हैं। ऐसा नहीं है कि कुत्तों को सड़कें पसंद हैं, समस्या यह है कि अनेक लोग हैं, जो कुत्तों को सड़कों पर रखना चाहते हैं। आज जो लोग चाहते हैं कि कुत्ते सड़कों पर जिंदगी गुजारें, उन्हें वास्तव में कुत्तों की सुरक्षा की कोई परवाह नहीं है। रही बात पुनर्वास की, तो हर स्तर पर यह अवश्य सुनिश्चित करना चाहिए कि किसी भी मासूम बेजुबान के साथ ज्यादती न हो।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 14 अगस्त, 1950

भारतीय बही-खाता पद्धति

अजमेर के श्री कस्तूरमल जी बांठिया ने एक मौलिक प्रश्न उठाया है और वह यह कि जब हम हिन्दी को राष्ट्रभाषा और देवनागरी को राष्ट्रलिपि मान चुके और पन्द्रह वर्ष की अवधि में हमको राष्ट्रभाषा हिन्दी को पूर्णतया राजकाज में अंग्रेजी का स्थान दे देना है, तो राष्ट्र एवं व्यापार के बही-खाते किस पद्धति पर रखे जायें? क्या हम अंग्रेजी पद्धति को अपनाएं अथवा भारतीय पद्धति को, जो समय के उलट-फेर के बावजूद सहस्त्रों वर्षों से अपना अस्तित्व कायम रखे हुए है और देश के व्यापारी वर्ग द्वारा व्यापक रूप में काम में लाई जा रही है। श्री बांठिया ने अंग्रेजी और भारतीय दोनों पद्धतियों का बारीकी से अध्ययन किया है और वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हमारे लिए अपनी भारतीय पद्धति को ही स्वीकार करना श्रेयस्कर और सुविधाजनक होगा। उन्होंने 'स्वतंत्र भारत की बही-खाता पद्धति पर विचार' नामक अपनी पुस्तिका में जो दलीलें दी हैं, वे काफी वजनदार हैं और सरकार तथा देश के उद्योगपतियों और बड़े व्यापारियों के लिए विचारणीय हैं। यह सही है कि अंग्रेजी पद्धति का पिछले वर्षों में काफी विकास हुआ है। इसका मुख्य कारण यह रहा कि व्यापार की बढ़ती जाने वाली आवश्यकताओं को प्रकट करने के लिए उसी को माध्यम बनाया गया। यदि भारतीय पद्धति को भी वैसा ही अवसर दिया जाता, तो उसका भी ठीक वैसा ही विकास संभव हो सकता था। किन्तु विदेशी शासन काल में जो कुछ भारतीय था, उस सब की उपेक्षा की गई। सरकारी काम के लिए अंग्रेजी पद्धति को अपनाया गया और बैंकों, कंपनियों आदि ने भी इस बारे में सरकार का ही अनुसरण किया। अब स्वराज्य में बही-खाते की भारतीय पद्धति को अपने विकास का मौका दिया जाना चाहिए।

भारतीय और अंग्रेजी पद्धतियों में एक मौलिक अन्तर है। वह यह कि भारतीय पद्धति में जमा की रकम बायीं ओर तथा उधार की रकम दायीं ओर लिखी जाती हैं, जब कि अंग्रेजी पद्धति में इसके विपरीत जमा की रकम दायीं ओर तथा उधार की बायीं ओर लिखी जाती है। ऐसे लोगों की संख्या अब भी बहुत है, जो केवल भारतीय पद्धति से ही परिचित हैं और उसकी सहायता से अपनी व्यापारिक जरूरतों को पूरा कर लेते हैं। भारतीय और अंग्रेजी पद्धतियों के उपरोक्त अन्तर के कारण वे लोग भ्रम में पड़ जाते हैं।

स्वस्थ आदिवासी समाज का सपना

जब सरकार, स्वास्थ्यकर्मी और लक्षित समुदाय समान हित के लिए एकजुट होते हैं, तो लक्ष्य पाना आसान हो जाता है, सिकल सेल एनीमिया उन्मूलन मुहिम इसका उदाहरण है।

जगत प्रकाश नड्डा, केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री (यहां स्कैन करें)

भारत के आदिवासी समुदाय हमारी सांस्कृतिक विरासत के मूल तत्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। देश की कुल जनसंख्या के ये 8.6 प्रतिशत हैं। इन समुदायों के कई व्यक्ति जानकारी के अभाव में 'सिकल सेल' नामक आनुवंशिक बीमारी से जूझ रहे हैं। इस बीमारी ने उनके स्वास्थ्य के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक विकास पर भी गहरा असर डाला है। भौगोलिक अलगाव एवं स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुंच के कारण यह रोग और जटिल हो गया है।

इस गंभीर आवश्यकता को पहचानते हुए भारत सरकार ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में जुलाई 2023 में 'राष्ट्रीय सिकल सेल एनीमिया उन्मूलन मिशन' की शुरुआत की थी। इस मौलिक पहल का उद्देश्य न केवल इसके आनुवंशिक संचरण का उन्मूलन करना है, बल्कि इस रोग से प्रभावित लाखों लोगों के सम्मान और स्वास्थ्य को भी बहाल करना है। सिकल सेल रोग में लाल रक्त कोशिकाओं का आकार बदल जाता है, जिससे ऑक्सीजन वहन करने की उनकी क्षमता कम हो जाती है और धीरे-धीरे स्वास्थ्य संबंधी गंभीर जटिलताएं उत्पन्न होने लगती हैं। आदिवासी समाज के बीच इसका प्रभाव विशेष रूप से गहरा है। 'ग्लोबल बर्डन ऑफ डिजीज एस्टिमेट्स (2021)' रिपोर्ट के अनुसार, भारत में प्रतिवर्ष लगभग 82,500 बच्चों का जन्म सिकल सेल रोग के साथ होता है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-2017 ने इस संकट से निपटने के लिए आधार तैयार किया और साल 2023 के केंद्रीय बजट में 'राष्ट्रीय सिकल सेल एनीमिया उन्मूलन मिशन' की घोषणा की गई, जिसमें वित्त वर्ष 2025-2026 के अंत तक 40 वर्ष से कम आयु के सात करोड़ लोगों की मिशन मोड में जांच करने का लक्ष्य रखा गया। यह कार्य स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के तहत क्रियान्वित किया गया, जिससे यह दुनिया के सबसे बड़े आनुवंशिक जांच कार्यक्रमों में से एक बन गया है। इस मिशन का उद्देश्य 2047 तक सिकल सेल रोग के आनुवंशिक संचरण को समाप्त करना और इससे पीड़ित लोगों की व्यापक देखभाल सुनिश्चित करना भी है।

केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय और राज्यों के संयुक्त प्रयासों से पहले दो वर्ष में ही इस मिशन को उल्लेखनीय परिणाम प्राप्त हुए हैं। 31 जुलाई, 2025 तक इस रोग से सर्वाधिक प्रभावित राज्यों के 300 से भी अधिक जिलों में 6.07 करोड़ से अधिक व्यक्तियों की जांच की जा चुकी है। इनमें से करीब 2.16 लाख लोग रोगग्रस्त पाए गए, जबकि 16.92 लाख को वाहक के रूप में पहचाना गया। इसके करीब 95 प्रतिशत मामले केवल पांच राज्यों- ओडिशा, मध्य प्रदेश, गुजरात, छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र में मिले हैं।

छत्तीसगढ़ के अंबिकापुर के नवापारा की एक युवा आदिवासी मीना की कहानी इस मिशन के सकारात्मक प्रभाव का प्रतीक है। मीना को निकट के एक उप-स्वास्थ्य केंद्र में नामांकित किया गया। प्रशिक्षित सामुदायिक स्वास्थ्य अधिकारी (सीएचओ), एएनएम और आशा कार्यकर्ता ने यह सुनिश्चित किया कि उसे निःशुल्क 'हाइड्रोक्सीयूरिया' औषधि समय पर मिलती रहे। इससे सिकल सेल रोग के लक्षणों में उल्लेखनीय कमी आई। आज, मीना पहले से अधिक स्वस्थ है और अपने समुदाय में आनुवंशिक रोगों के परामर्श में भी सक्रिय भूमिका निभा रही है।

इस मिशन का क्रियान्वयन केवल स्क्रीनिंग पर केंद्रित नहीं है; बल्कि यह पीड़ित व्यक्तियों की समग्र देखभाल को प्राथमिकता देता है। सिकल सेल रोग के प्रबंधन के लिए एक प्रमुख दवा है 'हाइड्रॉक्सीयूरिया'। इसे राष्ट्रीय आवश्यक औषधि सूची (ईडीएल) में शामिल किया गया है और अब यह आयुष्मान आरोग्य मंदिर उप-स्वास्थ्य केंद्रों में भी उपलब्ध है। अब तक 2.62 करोड़ से अधिक आनुवंशिक स्टेटस कार्ड वितरित किए जा चुके हैं, जिससे लोगों को उपयोगी स्वास्थ्य जानकारियां मिली हैं। यह कार्ड परामर्श और उचित निर्णय लेने का एक प्रभावी माध्यम बन गया है। यह परिवारों को ऐसे विकल्प चुनने में मदद करता है, जिनसे आनुवंशिक संचरण का जोखिम कम रहे।

राष्ट्रीय सिकल सेल एनीमिया उन्मूलन मिशन की सफलता संपूर्ण सरकारी दृष्टिकोण पर आधारित है। इसके तहत स्वास्थ्य मंत्रालय, जनजातीय कार्य मंत्रालय, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, शिक्षा मंत्रालय और महिला एवं बाल विकास मंत्रालय को भी शामिल किया गया है। यह अंतर-मंत्रालयी समन्वय जनजातीय स्वास्थ्य के सामाजिक-सांस्कृतिक व भौगोलिक पहलुओं का ध्यान रखते हुए समग्र क्रियान्वयन सुनिश्चित करता है। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत स्वास्थ्य अनुसंधान विभाग द्वारा समर्थित अनुसंधान-आधारित गतिविधियों ने इस मिशन की लागत और प्रभावशीलता में उल्लेखनीय सुधार किया है।

इस मिशन की अब तक की उपलब्धियां सराहनीय रही हैं। स्वास्थ्य मंत्रालय अब इस मिशन की दीर्घकालिक प्राथमिकताओं को आगे बढ़ाने जा रहा है। तात्कालिक ध्यान आनुवंशिक परामर्श, जन-जागरूकता अभियानों और आनुवंशिक स्टेटस कार्डों के वितरण पर केंद्रित रहेगा। इसमें सामुदायिक स्तर के मंचों का उपयोग यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण होगा कि प्रत्येक रोगी व वाहक व्यक्ति को आवश्यक उपचार और सहायता प्राप्त हो। इस दिशा में उन्नत अनुसंधान मिशन की कार्यप्रणाली को और अधिक प्रभावी बनाने में सहायक सिद्ध होंगे।

राष्ट्रीय सिकल सेल एनीमिया उन्मूलन मिशन की असली भावना इसके आदर्श 'पीड़ितों का साथ, आश्रितों को संबल और योद्धाओं को समर्थन' देने में निहित है। राजनीतिक इच्छाशक्ति, वैज्ञानिक नवाचार और जमीनी स्तर पर क्रियान्वयन के संयोजन से भारत सिकल सेल एनीमिया को समाप्त करने और लाखों लोगों के जीवन में बदलाव लाने के लिए तत्पर है।

भारत वर्ष 2047 तक सिकल सेल रोग उन्मूलन के अपने लक्ष्य की ओर पूरे आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ रहा है, और यह मिशन इसमें आशा की किरण बनकर उभरा है। यह इस बात का द्योतक है कि जब सरकार, स्वास्थ्य सेवाओं से जुड़े पेशेवर और समुदाय समान हित के लिए एकजुट होते हैं, तो क्या कुछ प्राप्त नहीं किया जा सकता है। हम सब मिलकर यह सुनिश्चित करेंगे कि किसी भी व्यक्ति को इस रोग के कारण होने वाली पीड़ा न सहनी पड़े।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

घरेलू मांग बढ़ाने में मनरेगा सबसे ज्यादा मददगार

हिमांशु | एसोशिएट प्रोफेसर, जेएनयू (यहां स्कैन करें)

इस महीने महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) के दो दशक पूरे हो रहे हैं। ग्रामीण परिवारों तक पहुंचने के मामले में यह राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के बाद दूसरी सबसे बड़ी जन-हितकारी योजना है। संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) की पहली सरकार के दौरान लागू इन दोनों ही कानूनों ने सामाजिक सुरक्षा का ढांचा अधिकार-आधारित बनाया। पिछले दो दशक में मनरेगा के क्रियान्वयन में कई बदलाव हुए हैं, मगर सामाजिक सुरक्षा के लिहाज से यह ग्रामीण भारत में आज भी सबसे अहम योजना बनी हुई है।

लाखों गरीबों को रोजगार दिलाने की केंद्र सरकार की पुरानी योजनाओं से मनरेगा तीन मायनों में अलग थी। पहला, चूंकि इसे संसद ने कानून के रूप में पारित किया था, इसलिए यह कानूनी रूप से अधिकार-संपन्न है और सरकारों की मनमानी से मुक्त। दूसरा, इस योजना में देश भर के ग्रामीण इलाकों में मांग के आधार रोजगार मिलता है, इसलिए इसमें लक्ष्य संबंधी गड़बड़ियां नहीं रहीं, जो सरकारी कार्यक्रमों में नत्थी होती हैं। तीसरा, इसने गरीबी उन्मूलन और रोजगार सृजन जैसे प्रत्यक्ष लाभों से कहीं अधिक परोक्ष लाभ दिए हैं। हालांकि, इसका प्राथमिक उद्देश्य ग्रामीण श्रमिकों को अकुशल रोजगार प्रदान करना रहा है, पर इसने ग्रामीण श्रम बाजार में महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं। मनरेगा के अंतर्गत मजदूरी करने वालों में आधे से अधिक महिलाएं हैं। इनमें दलित व आदिवासी श्रमिकों की भागीदारी लगभग एक-चौथाई रही है, जो काफी अधिक है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मौजूदा स्थिति को देखते हुए मनरेगा को उसके मूल उद्देश्यों के अनुरूप आगे बढ़ाना हमारी बड़ी आवश्यकता है।

इस योजना के कारण परोक्ष रूप से बुनियादी ढांचे का निर्माण हुआ, जिससे ग्रामीण उत्पादकता बढ़ी। ग्राम स्तरीय सिंचाई परियोजनाओं, ग्रामीण सड़कों के निर्माण से बाजार तक पहुंच, मृदा संरक्षण आदि के माध्यम से कृषि में परोक्षतः अनगिनत फायदे हुए हैं, जिससे कृषि उत्पादकता को बढ़ाने में मदद मिली। कई जगह इस तरह के काम वंचित समुदायों से जुड़ी जमीनों पर किए गए, जिससे सबसे गरीब किसानों की कृषि उत्पादकता बढ़ी है। दूसरा, मनरेगा ने सामान्य मजदूरी बढ़ाने और ग्रामीण गरीबी कम करने में मदद की है। कई अध्ययनों में यह निष्कर्ष निकला है कि इस योजना के कारण 2008-2013 के बीच सामान्य मजदूरी में छह प्रतिशत से ज्यादा की वृद्धि हुई। इसने न केवल सबसे गरीब लोगों की आय बढ़ाई, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में मांग भी बढ़ी।

दुर्भाग्यवश, यूपीए-2 से ही यह कार्यक्रम कमजोर होता गया। 2011-12 के बाद मनरेगा मजदूरी को बाजार भाव से कम कर दिया गया। तब से स्थिति और खराब हो गई है और 2023 में 20 राज्यों में मनरेगा मजदूरी बाजार दर से कम आंकी गई। 2014 के बाद से कई अन्य बदलाव भी हुए हैं, जो मजदूरी भुगतान, बायोमेट्रिक प्रामाणीकरण और राज्यों में प्रशासनिक शर्तों से जुड़े हैं। इन सबसे यह योजना लगभग ठहर-सी गई है। पश्चिम बंगाल में तो केंद्र के साथ खींचतान के चलते इसे दो साल के लिए निलंबित ही कर दिया गया। हालांकि, सामान्य मजदूरी से कम होने के बावजूद भारत के लगभग एक-तिहाई ग्रामीण परिवार मनरेगा के तहत काम कर रहे हैं। इस कार्यक्रम की सफलता का प्रमाण कोविड महामारी के दौरान स्पष्ट रूप से दिखा, जब लाखों बेरोजगार हाथों को मांग के अनुरूप इस योजना के तहत काम मिला। फिर भी, यह प्रशासनिक उदासीनता (केंद्र और राज्यों दोनों की ओर से) से ग्रस्त है, जिस कारण ग्रामीण संकट और भी बदतर हो गया है।

वर्तमान में ग्रामीण मजदूरों और किसानों की आमदनी में स्थिरता के कारण, ग्रामीण अर्थव्यवस्था कमजोर हो चुकी है। मनरेगा इसे पुनर्जीवित कर सकती है। इस योजना के तहत होने वाले कामों से ग्रामीण मजदूरी व उत्पादकता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा और इससे खपत संबंधी मांग बढ़ाने में मदद मिलेगी। दूसरे शब्दों में कहें, तो इस योजना ने 2008 के वैश्विक मंदी और कोरोना महामारी के दौरान अपनी उपयोगिता व महत्ता साबित की है। यह फिर से ऐसा कर सकती है, यदि राज्य और केंद्र मिलकर काम करें। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की दुर्दशा को देखते हुए मनरेगा को उसके मूल उद्देश्यों के अनुरूप आगे बढ़ाना न केवल हमारी राजनीतिक आवश्यकता है, बल्कि आर्थिक अनिवार्यता भी है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

अपनी नियति आप लिखो

इस धरती के सारे जीव खुद को उस हालात में ढाल लेते हैं, जिसमें वे रहते हैं, लेकिन इंसान परिस्थितियों को अपनी जरूरत के अनुसार बदल सकते हैं। आजकल दुनिया में अधिकतर लोग परिस्थितियों द्वारा ढाल दिए जाते हैं, क्योंकि वे उनके प्रति प्रतिक्रिया के रूप में जीते हैं। जाहिर है, उनके सवाल होंगे कि मैं ऐसी परिस्थिति में क्यों था? क्या मेरी किस्मत खराब है? क्या मेरा भाग्य ऐसा है?

जब चीजें उस तरह नहीं होतीं, जिस तरह आप चाहते हैं, तो उसे अपने 'भाग्य' का नाम दे देते हैं। आप खुद को दिलासा देने की कोशिश करते हैं, मौजूदा हालात से समझौता कर लेते हैं। असफलता, बीमारी या दुर्भाग्य का सामना करने का यह एक तरीका होता है या अपनी काबिलियत से ज्यादा सफलता मिल जाने पर भी ऐसा होता है। हर उस चीज को, जिसे हम तर्क से समझ नहीं पाते, आसानी से भाग्य कह देते हैं।

लोग मुझसे अक्सर पूछा करते हैं, 'मैं अपने भाग्य पर किस हद तक काबू पा सकता हूं?' आपका भाग्य आपकी खुद की रचना है। इस समय भी आप उसका निर्माण कर रहे हैं, अचेतन तौर पर ही सही। हर विचार, हर भावना, हर आवेग और हर प्रतिक्रिया, जो आप अपने अंदर पैदा करते हैं, वे आपके भाग्य की दिशा तय कर रहे हैं। आपके भीतर जीवन किसी भी चीज को अनदेखा नहीं करता। यह आपके हर काम को गंभीरता से लेता है।

जीवन चीजों को चुन-चुनकर रिकॉर्ड नहीं करता है। यह सोते-जागते सब कुछ रिकॉर्ड कर रहा है। चूंकि सब कुछ रिकॉर्ड होता है, तो किसी खास दिशा या जागरूकता के अभाव में, आपके अंदर सूचना का यह विशाल भंडार तमाम तरह के भ्रम पैदा कर रहा है। इसी वजह से जीवन के तमाम अबूझ हालात और नतीजों को लोग भाग्य कह देते हैं। ऐसे में, अगर सवाल यह है कि मेरा क्या होगा? तो मेरा जवाब है कि आप जो कुछ भी रचेंगे, वही आपके साथ होगा। लेकिन अपने साथ उसके होने का इंतजार मत कीजिए। आप इसे वैसे करें, जैसा आप चाहते हैं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

ऐसी तमाम चीजें, जिन्हें सौ साल पहले लोग भाग्य माना करते थे, आज आपके हाथों में आ चुकी हैं। हमने बीमारियों, संक्रमण, महामारी और अकाल की उन भयानक नियतियों से निपटना सीखा है, जिन्हें बस एक सदी पहले तक लोग झेला करते थे। जो लोग इनकी चपेट में आते थे, वे निश्चय ही इसे अपनी किस्मत मानते थे। लेकिन क्या हमने इनमें से कई आपदाओं पर अब काबू नहीं पा लिया है? आज हम जिसे 'टेक्नोलॉजी' कहते हैं, वह यही तो है: प्रकृति के नियमों के तहत, हम हर उस बाहरी चीज पर काबू पा चुके हैं, पा रहे हैं, जिन पर काबू पाया जा सकता है।

आज हम जिसे 'टेक्नोलॉजी' कहते हैं, वह यही तो है, प्रकृति के नियमों के तहत हम हर उस बाहरी चीज पर काबू पा चुके हैं या पा रहे हैं, जिन पर काबू पाया जा सकता है।

सद्गुरु जग्गी वासुदेव

पोप लियो XIV | ईसाई धर्मगुरु

हम युद्धों की समाप्ति की प्रार्थना करें। नीति-निर्माता हमेशा ध्यान रखें कि उनके निर्णयों से निकले नतीजों के लिए वही जिम्मेदार हैं। वे अंतिम आदमी की जरूरतों और शांति की सार्वभौमिक इच्छा को नजरअंदाज न करें।

अनुलोम-विलोम

आवारा कुत्तों पर आदेश

इंसानी जान की रक्षा करना सबसे जरूरी

सुप्रीम कोर्ट ने लावारिस कुत्तों को पकड़ने और उनको आश्रयगृहों में सुरक्षित रखने का आदेश दिया है। इसके बाद पशुप्रेमियों ने आंदोलन शुरू कर दिया है। इससे तो यही मालूम होता है कि इन लोगों को इंसानों से ज्यादा कुत्तों से प्यार है। उनके लिए इंसानों की जान की कोई कीमत नहीं। जिस घर में कुत्ते की वजह से मौत हुई है या जहां लोग भयानक रूप से चोटिल हुए हैं, यहां तक कि छोटे बच्चे भी लावारिस कुत्तों के हमले का शिकार हुए हैं, उनके दर्द को समझने के बजाय ये लोग इस आदेश के खिलाफ अपना मत जाहिर कर रहे हैं और विरोध-प्रदर्शन का झंडा बुलंद कर रहे हैं। शायद उनके किसी अपने को यह दर्द मिलता, तब उन्हें समझ में आता कि लावारिस कुत्ते कितनी बड़ी समस्या बन चुके हैं। इनको समझना चाहिए कि जिंदगी एक बार मिलती है और वह भी महज इसलिए चली जाती है कि कुछ लोग इंसानी जान से ज्यादा कुत्तों को महत्व देते हैं। माता-पिता को घर में आश्रय मिले न मिले, परंतु कुत्ते को वे जरूर घर में रखेंगे। पशु-प्रेम गलत नहीं है, लेकिन जब इंसानों की जान पर बन आए, तो कुछ कठोर निर्णय लेने ही चाहिए।

शैलबाला कुमारी, गृहिणी

दिल्ली-एनसीआर के लावारिस कुत्तों को लेकर सुप्रीम कोर्ट का आदेश निस्संदेह जनहित के नजरिये से एक अहम कदम है। मेरा तो यह भी मानना है कि यह कार्रवाई महज दिल्ली-एनसीआर तक सीमित न रहे, क्योंकि कुत्तों के काटने या रेबीज से होने वाली मौतें देश के तमाम हिस्सों में समान रूप से चिंता का विषय हैं। ऐसे में, यह आवश्यक है कि लावारिस कुत्तों को हटाने के नियम पूरे देश में लागू किए जाएं, ताकि इस समस्या का स्थायी समाधान निकल सके। हालांकि, केवल आवारा कुत्तों को पकड़ना ही पर्याप्त नहीं होगा। उन कुत्तों को लेकर भी नियम बनाने होंगे, जिनको मालिक जान-बूझकर सड़कों पर छोड़ देते हैं। संभव हो, तो प्रत्येक पालतू कुत्ते का पंजीकरण अनिवार्य किया जाए, उनमें माइक्रोचिप लगाई जाए और मालिक की जिम्मेदारी तय की जाए। इसके साथ ही, डॉग शेल्टर की क्षमता, उनका प्रबंधन और कुत्तों की देखभाल भी महत्वपूर्ण है, ताकि पकड़े गए कुत्तों को अमानवीय परिस्थितियों में न रखा जाए। कुत्तों की नसबंदी और टीकाकरण जैसे दीर्घकालिक उपायों को भी राष्ट्रीय स्तर पर लागू करना होगा। सुप्रीम कोर्ट का यह आदेश तभी सफल होगा, जब इसे एक राष्ट्रीय नीति के रूप में अपनाया जाए। तभी इंसानों की जान भी बचेगी और पशुओं के अधिकार भी सुरक्षित रहेंगे।

विभूति बुपक्या, टिप्पणीकार

लावारिस कुत्तों का यह सही समाधान नहीं

लावारिस कुत्तों को लेकर सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद इसके निहितार्थ को लेकर गंभीर बहस शुरू हो गई है। वास्तव में, बहुत सारे तरीके हैं कुत्तो को काटने से रोकने या उससे बचने के, इसलिए इस तरह पूरे दिल्ली-एनसीआर को कुत्ताविहीन कर देना ठीक नहीं। कुत्ता एक ऐसा जानवर है, जो सदियों से इंसानों के साथ रह रहा है। वह हमारे दुख-सुख का साथी है। वह भावनाओं को समझता है, रोता-खेलता है और अपनी वफादारी दिखाता है। इसलिए, लावारिस कुत्तों को लेकर सुप्रीम कोर्ट ने जो फैसला सुनाया है, वह दर्दनाक है। पशु-प्रेमी इसीलिए अदालत से अपने आदेश की समीक्षा करने का अनुरोध कर रहे हैं।

देखा जाए, तो प्रशासन ने अपनी नाकामी और भ्रष्टाचार का ठीकरा इन मासूम बेजुबानों पर फोड़ दिया है। सरकार इनके लिए फंड देती है। वैक्सीन और नसबंदी जैसे तरीके अपनाकर इनको बेहतर तरीके से समाज के बीच ही संभाला जा सकता है, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। और अब आगे जो होगा, वह बेहद क्रूर हो सकता है। माना जाता है कि दिल्ली-एनसीआर में लावारिस कुत्तों की संख्या 10 लाख के आसपास है। सवाल है कि आखिर वे रहेंगे कहां? दिल्ली में इनका कोई शेल्टर नहीं है, यहां 20 पशु-नियंत्रण केंद्र जरूर हैं, जहां कुत्तों की नसबंदी और देखभाल का काम होता है, लेकिन दस लाख कुत्तों को संभालने के लिए जितनी बड़ी संख्या में शेल्टर की जरूरत होगी, उसे देखते हुए इन केंद्रों को शेल्टर बना देना भी पर्याप्त नहीं होगा। माना जा रहा है कि इन लावारिस कुत्तों के लिए 5,000 शेल्टर की जरूरत पड़ सकती है। फिर, इनमें कर्मियों की भी जरूरत पड़ेगी। कुत्तों का खाना-पीना सब चाहिए। नगर निगम में जिस तरह का भ्रष्टाचार है, उसे देखते हुए लगता नहीं कि यहां कुत्तों की उचित देखभाल हो सकेगी। इतना ही नहीं, दो हफ्तों में यह काम शायद ही हो सकेगा। ऐसे में, अंदेशा यही है कि लावारिस कुत्तों को अघोषित रूप से मारने का अभियान चलेगा। यह अन्याय है और दर्दनाक भी। अगर लावारिस कुत्ते समस्या हैं, तो इसका यह मतलब नहीं कि उसे समाज से दूर कर दिया जाए या उनकी पूरी नस्ल ही खत्म कर दी जाए।

हिंदू धर्म में एक आख्यान है कि जब युधिष्ठिर स्वर्ग की ओर निकले, तो सबसे अंत तक कुत्ता ही उनके साथ रहा। इसका मतलब यह हुआ कि कुत्तों और इंसानों का साथ काफी पुराना है। इसलिए, गुजारिश यही है कि सुप्रीम कोर्ट अपने आदेश की समीक्षा करे। कुत्ते ही नहीं, हमें हर जानवर से प्यार करना चाहिए। उनके बिना दुनिया की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

विजय अक्षित, टिप्पणीकार

संपादकीय जागरण

(12) गुरुवार, 14 अगस्त, 2025 : भाद्रपद कृष्ण - 6 वि. 2082

अनुकरणीय आचरण से ही प्रतिष्ठा प्राप्त होती है

मतदाता हितैषी प्रक्रिया

यह संतोषजनक है कि सुप्रीम कोर्ट ने बिहार में मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआइआर मामले की सुनवाई करते हुए यह तो कहा कि यह मतदाता हितैषी प्रक्रिया है, लेकिन आखिर वह कब तक इस मामले को सुनेगा? इस मामले का पटाक्षेप किया जाना चाहिए ताकि कुछ विपक्षी दल इस पर सस्ती राजनीति करने से बाज आएं। वे मतदाता सूची के सत्यापन की प्रक्रिया को लेकर आसमान सिर पर उठाए हैं और यह जताने में लगे हुए हैं कि इसके जरिये चुनाव आयोग बिहार में कुछ खास मतदाताओं को जानबूझकर मतदान से वंचित करने की साजिश कर रहा है, ताकि भाजपा को चुनावी लाभ मिल सके। इस आरोप पर जोर देने के लिए कांग्रेस नेता राहुल गांधी यह भी कहने में लगे हुए हैं कि लोकसभा के पिछले चुनाव में वोट की चोरी हुई थी। यदि ऐसा है तो कांग्रेस को 99 सीटें कैसे मिलीं और भाजपा 240 पर क्यों सिमटी? क्या कोई राहुल गांधी को यह बताएगा कि आप नेता विपक्ष 99 सीटों के कारण ही बन सके? इसकी भी अनदेखी न की जाए कि बिहार में मतदाता सूची के सत्यापन की प्रक्रिया का विरोध तो जोर-शोर से किया जा रहा है, लेकिन चुनाव आयोग के एक सही और आवश्यक काम में विपक्षी दल किसी तरह का सहयोग करने और यहां तक कि अपनी उचित आपत्तियां दर्ज कराने से साफ इन्कार कर रहे हैं। क्या यह उनका दायित्व नहीं बनता कि मतदाता सूची के सत्यापन की प्रक्रिया को यथासंभव दुरुस्त करने में अपने हिस्से की जिम्मेदारी निभाएं? यह हैरानी की बात है कि बिहार की मतदाता सूची का पहला प्रारूप जारी किए जाने के 13 दिन बाद भी किसी भी राजनीतिक दल ने चुनाव आयोग के सामने अपनी लिखित आपत्ति दर्ज नहीं कराई है। इसके बजाय वे अपने आरोपों को तूल देने के लिए चुनाव आयोग की छोटी-छोटी गलतियों पर हायतौबा मचाने में लगे हुए हैं। इसे ही तिल का ताड़ बनाना कहते हैं। क्या देश में कोई ऐसी प्रक्रिया रही है, जिसमें किसी तरह की विसंगति या गड़बड़ी न होती हो। क्या जब कांग्रेस ने अपने कार्यकाल में आधार लागू किया था तो सब कुछ सही तरीके से हुआ था? क्या फोटो मतदाता पहचान पत्र शुरू करते समय चुनाव आयोग से कहीं कोई गलतियां नहीं हुई थीं? क्या यह इकलौता और अनोखा मामला है कि बिहार की एक महिला के मतदाता पहचान पत्र में उसकी आयु 35 के स्थान पर 124 वर्ष लिखी मिली? क्या वायनाड में जितने भी मतदाता हैं, सबके पहचान पत्र एकदम सही हैं? यह सही है कि मतदाता पहचान पत्र बनाने और उनका सत्यापन करते समय किसी तरह की गलती-गड़बड़ी नहीं होनी चाहिए, लेकिन क्या कोई और खासकर कांग्रेस यह दावा कर सकती है कि उसके समय चुनाव आयोग का हर काम बिना किसी गलती-गड़बड़ी के होता था?

जांच व सजा में तेजी

राज्य में साइबर अपराध से निपटने के लिए पटना व राजगीर में एफएसएल (विधि विज्ञान प्रयोगशाला) की स्थापना का लिया गया निर्णय बहुत ही अच्छा और समय की मांग है। तकनीक के इस युग में साइबर अपराधी पूरी दक्षता के साथ अपराध को अंजाम दे रहे। उन्हें पकड़ना और साक्ष्यों के साथ सजा दिलाना बड़ी चुनौती है। साइबर फारेंसिक लैब की स्थापना होने से निश्चित ही इसमें मदद मिलेगी। इससे जांच के साथ साइबर अपराधियों के ट्रायल में तेजी आएगी। उन्हें जल्द सजा मिलेगी तो इस तरह के अपराधों पर भी रोक लगाने में मदद मिलेगी। अभी साइबर अपराध के बाद मामला तो दर्ज हो जाता है, लेकिन तेजी से जांच नहीं हो पाती। इससे पहले से आहत पीड़ित और परेशान होता है। वैसे राज्य सरकार इसे लेकर पहले से ही सजग है। साइबर अपराध में कमी के उद्देश्य से ही दो वर्ष पहले सभी जिलों में साइबर थानों की शुरुआत की गई थी। इससे मदद तो मिल रही, लेकिन यहां कई तरह की कमी है। सबसे बड़ी बात तकनीकी रूप से दक्ष कर्मी नहीं हैं। वे डिजिटल डेटा, जब्त मोबाइल, कंप्यूटर, इंटरनेट मीडिया पोस्ट सहित अन्य की गहनता से जांच नहीं कर पाते। जांच के दौरान जो सैंपल लिए जाते, उनकी भी समय पर जांच नहीं हो पाती। दो लैब खुलने से इसमें बड़ी मदद मिलेगी। आम लोगों को भी जागरूक होने की जरूरत है।

> राज्य में दो जगहों पर एफएसएल की स्थापना से निश्चित रूप से साइबर अपराध की जांच और सजा में तेजी आएगी

कह के रहेंगे माधव जोशी

जागरण जनमत कल का परिणाम

क्या लोकसभा अध्यक्ष की ओर से महाभियोग प्रस्ताव स्वीकार करने के बाद जस्टिस यशवंत वर्मा को इस्तीफा दे देना चाहिए?

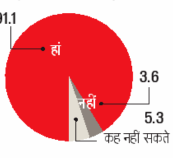

आज का सवाल

क्या मतदाता सूची के सत्यापन पर उच्चतम न्यायालय का दृष्टिकोण विपक्षी दलों के लिए झटका है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आत्मघाती राह पर अमेरिका

अजय कुमार

ट्रंप के ऊंचे टैरिफ से भारत को कुछ कठिनाइयां जरूर झेलनी पड़ सकती हैं, पर अमेरिका को भी इसकी बड़ी आर्थिक कीमत चुकानी पड़ेगी

टैरिफ नीति के पीछे राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की चाहे जो मंशा हो, लेकिन इससे किसी का कोई भला नहीं होने वाला। इसके जरिये देशों को निशाना बनाया जा रहा है और प्रतिस्पर्धा को कुंद किया जा रहा है। इसके चलते खुद अमेरिका के लिए मूल्य वृद्धि, आपूर्ति श्रृंखला में गतिरोध और जवाबी कदम जैसे जोखिम बढ़ गए हैं। भारत में ट्रंप टैरिफ की बहुत चर्चा है। अमेरिका ने जिस तरह साफ्टवेयर एवं सेवाओं, मोबाइल फोन और दवाओं को इन प्रतिबंधों के व्यापक दायरे से दूर रखा है, वह यही दर्शाता है कि कहीं न कहीं उसे भी अपनी आर्थिकी पर इसके गंभीर असर की आशंका महसूस हो रही है। उसके निशाने पर मुख्य रूप से कपड़े, परिधान, फर्नीचर, बिस्तर, कालीन, मशीनरी, धातु, आभूषण, वाहन कलपुर्जे, पेट्रोलियम, झींगे और रसायन जैसे उत्पाद हैं। अमेरिका को लगता है कि इसके जरिये दबाव बढ़ाकर वह भारत को व्यापार समझौते के लिए विवश कर देगा। हालांकि वास्तविकता देखें तो हालात अमेरिका के उतने अनुकूल भी नहीं हैं। ऊंचे टैरिफ से भारत को कुछ कठिनाइयां जरूर झेलनी पड़ सकती हैं, पर अमेरिका को इसकी कहीं बड़ी आर्थिक कीमत चुकानी होगी। कपड़ों एवं परिधान के उदाहरण से इसे बखूबी समझा जा सकता है। इसे अक्सर भारत के सबसे नाजुक कारोबारी क्षेत्रों में गिना जाता है। भारत ने 2024-25 में 35 अरब डालर का कपड़ा एवं परिधान निर्यात किया। इसमें 8.4 अरब डालर निर्यात अमेरिका को किया गया। भारत के अन्य प्रमुख कपड़ा एवं परिधान बाजार यूरोपीय संघ, ब्रिटेन, जापान, आस्ट्रेलिया और पश्चिम एशिया हैं।

यूरोपीय संघ भी विशालकाय बाजार है। जहां अमेरिका 107 अरब डालर का आयात करता है, वहीं यूरोपीय संघ 400 अरब डालर सालाना से अधिक। इस बाजार में भारत के लिए व्यापक अवसरों के द्वार खुलने की संभावना है। ब्रिटेन ही 27 अरब डालर का आयात करता है। हाल में उसके साथ हुए मुक्त व्यापार समझौते (एफटीए) के बाद भारतीय निर्यातकों को इस बाजार में चीनी आपूर्तिकर्ताओं के मुकाबले 8 से 12 प्रतिशत का लागत लाभ हासिल होने की संभावना है। आस्ट्रेलिया के साथ व्यापार समझौते के चलते वहां भी यही स्थिति है। जापान और दक्षिण कोरिया भी चीन से खरीदारी से इतर विकल्प तलाशने में लगे हैं तो भारत शून्य या घटी हुई ड्यूटी के जरिये इस अवसर का लाभ उठा सकता है। अन्य उभरते हुए बाजारों में भी व्यापक अवसर हैं।

भारत अपने निर्यात को न्यूनतम दीर्घकालिक नुकसान के साथ नए सिरे से संयोजित कर सकता है। सरकारी सहायता भी इस संक्रमण के दौर को सुगम बनाने में सहायक होगी। भारत का कुल निर्यात 825 अरब डालर के स्तर को पार करते हुए 6 प्रतिशत की दर से आगे बढ़ रहा है। इसलिए यदि अमेरिका को होने वाले निर्यात से कुछ असर भी पड़े तो भारत उसे झेल सकता है। हालांकि अमेरिकी उपभोक्ताओं को इसका खामियाजा भुगतना पड़ेगा। उनके लिए कीमतें खासी बढ़ जाएंगी, विशेष रूप से उन विशिष्ट भारतीय उत्पादों की, जिनके विकल्प भी बहुत सीमित हैं। पश्मीना शाल की ही बात करें तो भारत अमेरिका को सबसे अधिक मात्रा में इसका निर्यात करता है। टैरिफ के चलते इसकी कीमतों में 50 प्रतिशत तक की बढ़ोतरी हो सकती है। यही बात बनारसी, कांजीवरम साड़ी और पटोला पर भी लागू होती है। अपेक्षाकृत कम विशिष्ट उत्पादों के मामले में स्थिति अधिक लचीली और विकल्पों से भरी होती है। अभी चीन, वियतनाम, बांग्लादेश और भारत कुल अमेरिकी आयात का 60 प्रतिशत आपूर्ति करते हैं। नई टैरिफ दरों के चलते वियतनाम, बांग्लादेश जैसे किसी और देश की हिस्सेदारी इसमें बढ़ सकती है। इसके बावजूद आम अमेरिकियों को कपड़ा एवं परिधान पर 18 प्रतिशत तक अधिक खर्च करना पड़ सकता है। चूंकि घरेलू उपभोग में परिधान पर व्यय की एक बड़ी हिस्सेदारी होती है, इसलिए उनकी कीमतों में निरंतर बढ़ोतरी का असर मौद्रिक नीति में सख्ती के रूप में निकलेगा, जो अंततः अमेरिकी अर्थव्यवस्था की रफ्तार को सुस्त करेगी।

ऊंचे टैरिफ से अमेरिका के राजस्व में बढ़ोतरी का अनुमान भी धरा का धरा रह सकता है। कीमतें बढ़ने से मांग घट सकती है तो राजस्व भी घटेगा। टैरिफ से घरेलू उत्पादन के कायाकल्प की बातें भी बेमानी लगती हैं, क्योंकि वस्त्र उद्योग में एकाएक उत्पादन बढ़ाने की व्यापक क्षमताएं मौजूद ही नहीं। टैरिफ से तात्कालिक मुनाफा घटेगा, जिससे स्टोर बंद करने की नौबत आ सकती है और डिजाइन, वितरण, लाजिस्टिक्स और खुदरा क्षेत्र में नौकरियों पर संकट मंडरा सकता है। सामाजिक तानेबाने पर भी इसका बुरा असर पड़ सकता है। प्रमुख अमेरिकी व्यापारिक केंद्रों पर मुख्य रूप से भारतीय मूल के उद्यमी न केवल भारत से आयात, अपितु डिपार्टमेंटल स्टोर, फैशन ब्रांड और ई-कामर्स इकाइयों को आपूर्ति भी नियंत्रित करते हैं। ऊंचे टैरिफ न केवल भारतवंशियों के इस तबके, बल्कि व्यापक अमेरिकी अर्थव्यवस्था का भी अहित करेंगे।

ट्रंप की टैरिफ नीति ने भारत-अमेरिका साझेदारी पर भी ग्रहण लगाने का जोखिम बढ़ा दिया है। भारत की स्वतंत्रता के बाद अधिकांश समय दोनों देशों के रिश्तों में एक दूरी बनी रही और इस सदी की शुरुआत से ही उसमें गर्मजोशी का भाव बढ़ा। रिश्तों में कायापलट के इस दौर में इलेक्ट्रानिक्स, आइटी और रक्षा मंत्रालय में सेवा के दौरान मुझे भी इन क्षेत्रों में बढ़ते रिश्तों में योगदान देने का अवसर मिला। ये क्षेत्र हमारी आर्थिक एवं रणनीतिक साझेदारी के स्तंभ के रूप में उभरे। ऐसे में यह बहुत सालने वाली बात है कि द्विपक्षीय रिश्तों में दो दशकों की मेहनत पर संकीर्ण स्वार्थ से प्रेरित तात्कालिक फायदे वाले एक कदम से पानी फेरा जा रहा है। तकनीकी सहयोग और रक्षा साझेदारी जैसे मामलों में जहां विश्वास ही मायने रखता है, वहां खटास भरा माहौल बहुत प्रतिकूल होता है। जब चीन के उभार को संतुलित करने के लिए अमेरिका को भारत से सहयोग बढ़ाना चाहिए, तब नई दिल्ली को वैकल्पिक साझेदारियों की ओर धकेला जा रहा है। इससे अमेरिका व्यापार में नुकसान उठाने के साथ ही अपना जियो-पालिटिकल लाभ भी गंवाएगा।

(लेखक संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं पूर्व रक्षा सचिव हैं। लेख में व्यक्त विचार किसी संस्था के नहीं)

response@jagran.com

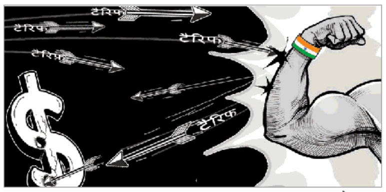

अवधेश राजपूत

आंसू छलकाने वाली विभाजन की त्रासदी

डा. केएल जुनेजा

मैंने पाकिस्तान से आए किसी व्यक्ति को भीख मांगते तो नहीं देखा, लेकिन उनकी दुखभरी कहानियों का कोई अंत नहीं

आज देश विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस मना रहा है। 2021 से हर साल 14 अगस्त को विभाजन की त्रासदी को याद करने का उद्देश्य आज की पीढ़ी को उस विभीषिका के शिकार लोगों के दुख-दर्द से परिचित कराना और भारत के बंटवारे के सबक सीखना है, ताकि फिर कभी मानवता को ऐसी त्रासदी का सामना न करना पड़े। भारत का बंटवारा मानव इतिहास की सबसे दुखद घटना है। इसमें लाखों परिवार स्वार्थ और नफरत की भेंट चढ़ गए। विभाजन की त्रासदी भयानक और दर्दनाक है। भविष्य के शासक सत्ता से समझौते के लिए कुछ भी करने को तैयार दिख रहे थे। उन्हें लगता था कि कहीं देर न हो जाए और उन्होंने जनता को इसका मूल्य चुकाने को विवश किया। तब अचानक लाखों लोगों को अपना सब कुछ छोड़कर अनजान इलाकों में भूखे-प्यासे भटकने पर मजबूर होना पड़ा।

विभाजन के समय मेरी उम्र करीब साढ़े चार-पांच साल थी। उस समय की तमाम बातें मेरी यादों में हैं। ये यादें डराती हैं। हम झंग जिले के बाघ कुकारा गांव में रहते थे। एक सुबह अचानक शोर हुआ। मेरी 12 साल की बहन मुझे और मेरे दो साल के भाई को एक किले की ओर ले गई। वहां मेरे घर के अन्य सदस्य भी थे। मेरे पिता ने नम आंखों से हमारी गाय और उसके बछड़े को खूंटे से खोल दिया। उनके आंसू अकारण नहीं थे। उन्होंने गाय को बच्चे की तरह पाला था। एक और धुंधली सी याद है कि हम जैसे-तैसे भाग कर गांव के पास रेलवे स्टेशन पर पहुंचे, जहां एक मालगाड़ी खड़ी थी। वह भारत जा रही थी। उसके एक डिब्बे का दरवाजा टूटा था। अभी पिताजी-चाचाजी सोच-विचार कर ही रहे थे कि क्या करें कि तभी अफवाह फैली कि हमला होने वाला है। जान बचाने के लिए सब उस डिब्बे में बैठ गए। गाड़ी चल दी, कुछ दूर जाने पर गाड़ी धीमी हुई। तभी कुछ लोग हमें मारने के लिए दौड़ लगाते दिखे। एक आदमी भाले के साथ मालगाड़ी के पीछे दौड़ा। उसने दरवाजे के पास बैठ मेरे पिता को निशाना बनाना चाहा। पिता कांसे का भारी लोटा लिए थे। उन्होंने उसे ही उस पर फेंका, जो उसे लगा और वह गिर गया। जब हम भारत की सीमा में आ गए और मालगाड़ी से उतरने के बाद भटक रहे थे तो पास के ईंट भट्ठे के मजदूर खाना बनाते दिखे। हमारे परिवार में उस समय लगभग 30 लोग थे। सभी भूख से व्याकुल थे। उन्होंने मजदूरों से पूछा कि क्या कहीं से आटा मिल जाएगा और क्या आप अपने बर्तन और चूल्हे का इस्तेमाल हमें करने देंगे? वे तैयार हो गए। पिता-चाचा आटा खरीदकर लाए और रोटियां बनाईं। अचानक वहां मिर्च का अचार बेचने वाला आ गया। उससे मिर्ची खरीदी गई और बड़ों को चार रोटी-चार मिर्ची और छोटों को दो रोटी-दो मिर्ची दी गई।

मानव इतिहास की भयावह घटना भारत विभाजन ● फाइल

भारत आने के बाद समस्या यह थी कि जाया कहां जाए, बसा कहां जाए, काम क्या किया जाए। हमारे परिवार ने जगह-जगह धक्के खाए। वे श्रीगंगानगर, भरतपुर और रोहतक गए। मेरा बड़ा भाई पढ़ने में अच्छा था, लेकिन नियति ने ऐसा खेल खेला कि वह बिस्कुट बेचने लगा। उसके जैसे लाखों बच्चों ने सुनहरे भविष्य की कुर्बानी दी। पिता बताया करते थे कि कैसे उन्होंने एक भैंस खरीदी और उसका दूध बेचकर गुजारा करने लगे। समय बीतने के साथ उन्हें पाकिस्तान में उनकी जमीन के बदले रोहतक के कलानौर गांव में कुछ जमीन मिली, पर वह कंकरीली थी। उसे खेती लायक बनाया गया। हमारा परिवार रोटी-कपड़े का मोहताज नहीं रहा। मैंने पाकिस्तान से आए किसी भी व्यक्ति को भीख मांगते नहीं देखा, पर उनकी दुखभरी कहानियों का कोई अंत नहीं। जो यह कहते हैं कि आजादी की लड़ाई में सिर्फ कांग्रेस ने बलिदान दिया, उन्हें उन लाखों परिवारों की ओर देखना चाहिए, जिन्होंने विभाजन की पीड़ा झेली। आज के अधिकांश नेताओं को क्या पता कि कांग्रेस ने क्या कुर्बानी दी और आम लोगों ने क्या झेला?

जब मैं स्कूल जाने लगा तो मुझे भगोड़ा, रिफ्यूजी और न जाने क्या-क्या सुनना पड़ा। स्कूल जाने का सौभाग्य मेरे बड़े भाई-बहन को नहीं मिला। किसी तरह मैंने मैट्रिक पास किया। घर की हालत सुधरी नहीं थी। पिता ने मुझे एक संबंधी के यहां काम के लिए भेजना तय किया। मैं उनके यहां पांच साल काम करता, बदले में वे पिता को दस हजार रुपये देते। मैं पढ़ने की जिद कर रहा था। आखिर मेरा रोना रंग लाया। मुझे भेजने की योजना टाल दी गई। मैंने एमए और पीएचडी की और प्रोफेसर बना। हमारा सौभाग्य रहा कि विभाजन के दौरान हमारे परिवार के किसी व्यक्ति की जान नहीं गई। इसकी एक वजह यह भी रही कि हम जहां रहते थे, वहां समर्थ लोगों में गिने जाते थे। बाद में जैसे-जैसे स्थिति बिगड़ी, तो हम असहाय होते गए और अंततः वहां से जो कुछ हाथ में आया समेटकर भागने को विवश हुए। सबका भाग्य ऐसा नहीं था। मेरी नानी के गांव में हिंदुओं के 30-40 घर थे। वहां लोगों ने उनसे कहा कि अपनी लड़कियों का निकाह हमारे लड़कों से कर दो और कलमा पढ़कर मुसलमान बन जाओ। नानी के गांव के लोगों ने तय किया कि मर जाएंगे, पर न तो बहन-बेटियों का किसी से निकाह करेंगे और न मुसलमान बनेंगे। कोई उपाय न रहा तो उन्होंने दिल पर पत्थर रखकर अपनी बहन-बेटियों को मार कर जला दिया। चूंकि ऐसी रोंगटे खड़े करने वाली कहानियां न जाने कितनी हैं, इसलिए विभाजन की भयावहता को भूला नहीं जाना चाहिए।

(अविभाजित भारत में जन्मे लेखक पूर्व प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

स्वाधीनता का महत्व

स्वाधीनता के रंगों से सराबोर होने के बीच हमें उसका महत्व भी समझना होगा। स्वाधीनता केवल एक शब्द नहीं, अपितु एक वृहद विचार है। यह शक्ति का पुंज है और सामर्थ्य का स्रोत भी है। जब हम स्वाधीनता का अनुभव करते हैं तो हमारे मस्तक पर चमक उत्पन्न हो जाती है। सीना गर्व से फूल जाता है। हम स्वयं पर स्वयं का नियंत्रण महसूस करते हैं। स्वाधीनता सदैव संघर्ष से प्राप्त होती है। किसी अन्य देश के अधीन राष्ट्र अपना स्वाभिमान खो देता है। उस राष्ट्र के नागरिक भी अपनी अस्मिता की रक्षा नहीं कर पाते। उन्नति के सारे द्वार बंद हो जाते हैं। चहुंओर विचार शून्यता व्याप्त हो जाती है। व्यक्ति को स्वयं की सामर्थ्य पर संदेह होने लगता है। राष्ट्र अवनति के मार्ग पर धंसता चला जाता है।

https://t.me/AllNewsPapersPaid

स्वाधीनता के साथ जीवन चतुर्दिक विकास के मार्गों को प्रशस्त करता है। जबकि पराधीन व्यक्ति अंधकार में डूबा रहता है। ठीक इसी प्रकार नशे के अधीन हुआ व्यक्ति कभी अपना जीवन स्तर नहीं उठा सकता। वह भी एक तरह से पराधीन ही है। इसी तरह विलासिता के संसाधनों के अधीन हुआ व्यक्ति भी जीवन भर सिर्फ संसाधन जुटाने में लगा रहता है, लेकिन उनके उपभोग के लिए प्रायः समय भी नहीं निकाल पाता।

बाह्य स्वाधीनता के साथ-साथ आत्मिक स्वाधीनता भी अत्यंत आवश्यक है। हम आत्मिक रूप से ईर्ष्या, द्वेष और घृणा आदि के अधीन रहकर अंधकार की देहरी पर पड़े रहते हैं। यह दुर्गुण हमें स्वाधीन होने ही नहीं देते। इसीलिए आत्मिक स्वाधीनता के लिए सारे दुर्गुणों का त्याग करना होगा। एक पक्षी की सर्वोन्नति उसके उन्मुक्त गगन में उड़ान भरने से ही संभव है। वह सुविधाओं से संपन्न पिंजरे में बंद रहकर जीवन का आनंद नहीं उठा सकता। स्वाधीनता जीवन के वास्तविक आनंद को अर्थ देती है। हमें आजीवन स्वाधीनता के महत्व को समझकर इसकी सार्थकता के लिए प्रयास करने चाहिए।

ललित शौर्य

पाठकनामा

pathaknama@pat .jagran.com

सवालों के घेरे में न्यायिक तंत्र

'महाभियोग की लंबी प्रक्रिया' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय में स्पष्ट किया गया कि किस प्रकार जस्टिस यशवंत वर्मा के सरकारी आवास में अधजले नोट मिलने जैसे गंभीर भ्रष्टाचार के आरोपों के बावजूद उनका इस्तीफा न देना और महाभियोग प्रक्रिया का लंबा खिंचना न्यायपालिका की गरिमा पर आघात करता है। ऐसे मामलों में तो त्वरित एवं प्रभावी कार्रवाई की सख्त जरूरत है। लोकतंत्र में आदर्श स्तंभ कही जाने वाली न्यायपालिका तभी अपनी आभा कायम रख सकती है, जब उसके भीतर बैठे लोग निष्पक्ष, पारदर्शी और बेदाग हों। परंतु यदि किसी न्यायाधीश पर गंभीर भ्रष्टाचार के आरोप हों, फिर भी वह पद और सुविधाओं से चिपके रहें तो यह केवल संस्था की गरिमा को ठेस नहीं पहुंचाता, बल्कि जनता के भरोसे को भी डगमगा देता है। सवाल यह है कि क्या न्यायपालिका के लिए जवाबदेही केवल शब्दों का खेल रह गई है? वर्तमान प्रक्रिया में महाभियोग एक लंबी और लगभग असंभव राह है। यही वजह है कि दोष सिद्ध होने तक वर्षों निकल जाते हैं और आरोपित जज तब तक सुविधा भोगते रहते हैं। समाधान स्पष्ट है एक स्वतंत्र निकाय का गठन किया जाए, जिसमें सेवानिवृत्त न्यायाधीश, संवैधानिक विशेषज्ञ और जनप्रतिनिधि शामिल हों। यह आयोग समयबद्ध जांच करे और आरोप सिद्ध होने पर तत्काल निलंबन एवं पदच्युत करने का अधिकार रखे। साथ ही, जजों के लिए संपत्ति का वार्षिक राजफाश और पारदर्शी आचार संहिता लागू हो। न्याय केवल किया ही नहीं जाना चाहिए, बल्कि होते हुए दिखना भी चाहिए। अन्यथा न्यायपालिका पर से जनता का विश्वास टूटने में देर नहीं लगेगी।

अमन सिंह गौर, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

देसी कुत्ते पालें

संपादकीय आलेख आवारा कुत्तों पर आदेश (13 अगस्त) पढ़ा। देसी कुत्तों को आवारा की संज्ञा देना अनुचित है। कुत्ता मानव का प्रथम मित्र है। सभी जानवरों में कुत्ते को सबसे वफादार माना गया है। प्रारंभ से ही कुत्ता मानव के बीच रहता आया है और उनके द्वारा दिए गए भोजन पर आश्रित रहता है। देश में बढ़ते शहरीकरण के दौर में गगनचुंबी इमारतों का निर्माण हो रहा है, लेकिन इन इमारतों में देसी कुत्तों का प्रवेश वर्जित है। अनजान व्यक्तियों का पीछा करना कुत्तों का स्वभाव है, लेकिन आजकल कुत्तों में हिंसक प्रवृत्ति आ चुकी है। आए दिन कुत्ते लोगों को काटकर जख्मी कर रहे हैं। बढ़ते प्रदूषण एवं शोर-शराबे की वजह से कुत्तों के स्वभाव में बदलाव आ चुका है। सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में आवारा कुत्तों को पकड़ कर आश्रय स्थल भेजने एवं उनकी नसबंदी करने का आदेश दिया है। सर्वोच्च न्यायालय का आदेश व्यावहारिक रूप से सही प्रतीत होता है, लेकिन आम लोगों को अपनी मानसिकता में बदलाव लाने की आवश्यकता है। विदेशी नस्ल के स्थान पर हमें देसी नस्ल के कुत्तों को पालकर उन्हें आश्रय प्रदान करना चाहिए।

ई हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी

भड़काऊ राजनीति

'कश्मीर को लेकर सतर्क रहें' शीर्षक आलेख में ध्रुव सी. कटोच ने सही लिखा है कि जम्मू-कश्मीर में सत्तारूढ़ पार्टी भड़काऊ राजनीति में लिप्त है अलगाववादी भावना को पुनर्जीवित करने की कोशिश कर रही है। जबकि अनुच्छेद 370 की समाप्ति के बाद कश्मीर खुशहाली की राह पर है। आजादी के पूर्व की एक घटना को लेकर 13 जुलाई को शहीदी दिवस के रूप में अलगाववादी ताकतें रोष प्रकट करती हैं। इस दिन पूरे राज्य में छुट्टी घोषित हुआ करती थी, अब यह बीते दिनों की बात हो गई है। इस बार 13 जुलाई को सतारूढ़ पार्टी तथा अन्य भड़काऊ पार्टियों ने शहीदी दिवस समारोह आयोजित करने के लिए प्रशासन से अनुमति मांगी, मगर प्रशासन ने इसे खारिज कर पूरे घाटी में सुरक्षा कड़ी कर दी। 13 जुलाई 1931 को कश्मीर में महाराजा हरि सिंह की डोगरा सेना की ओर से की गई फायरिंग में 22 प्रदर्शनकारी मारे गए थे। यह घटना उस वक्त हुई थी, जब भारी संख्या में कश्मीरी मुसलमान एक गिरफ्तारी के खिलाफ जेल के बाहर जमा हुए थे। इस घटना को तब शेख अब्दुल्ला ने जलियावाला बाग हत्याकांड जैसा करार दिया था और आज उमर अब्दुल्ला ने भी वही शब्द दोहराए हैं। भारत विरोधी ताकतें आज भी घाटी को अस्तव्यस्त करने की फिराक में हैं। केंद्र सरकार को थोड़ी सी भी ढिलाई नहीं बरतनी चाहिए।

युगल किशोर राही, छपरा, बिहार

X पोस्ट

जिस देश में कुत्तों के हक की खातिर लोग सड़कों पर उतर जाएं और वोट के मामले में मौन हो जाएं, उस देश में लोकतंत्र का भगवान ही मालिक है।

प्रभाकर मिश्रा@PMishra_Journo

सुप्रीम कोर्ट का यह दृष्टिकोण बेहद महत्वपूर्ण है कि आधार कार्ड और राशन कार्ड नागरिकता के निर्णायक प्रमाण नहीं हो सकते। भविष्य में भी मतदाता सूचियों के शुद्धीकरण में यह मत महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

अमिताभ अग्निहोत्री@Aamitabh2

जेएनयू छात्र संघ के चुनाव परिणाम को पूरे देश का जनादेश मानने का मुगालता पालने वाले कांस्टिट्यूशन क्लब चुनाव के परिणाम को भाजपा में बड़ी अंदरूनी फूट के रूप में देख रहे हैं। राहुल पंडिता@rahulpandita

पाकिस्तानी नेता खासतौर से सेना के मुखिया अक्सर शेखी बघारते रहते हैं। ऐसी बातों का माकूल जवाब यही होगा कि हम अपनी चौकसी बढ़ाएं। जब जरूरी हो, जमीन पर करारा जवाब दें और निरंतर अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए प्रयासरत रहें। ऐसे बयानवीरों की रोज-रोज की बातों का जवाब देने का कोई तुक नहीं। वेद प्रकाश मलिक@Vedmalik1

जनपथ

खतरे में हैं आजकल बंगलादेशी-श्वान,
इन्हें बचाने के लिए चलता है अभियान।
चलता है अभियान खूब हो रहे प्रदर्शन,
घर में इन्हें बसाय कीजिए जी भर दर्शन!
हर नुक्कड़ पर घूम रहे आवारा कुतरे,
क्यों हर बाल-बुजुर्ग उठाए इनसे खतरे!!

- ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त
जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प. बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 124

****

{ संपादकीय }

नई दिल्ली, गुरूवार 14 अगस्त 2025
संस्थापक-सम्पादक : स्व. मायाराम सुरजन

ऑपरेशन सिंदूर मनोरंजन के मंच पर

कौन बनेगा करोड़पति यानी केबीसी के 17 वें सीजन का आगाज़ हो चुका है। 15 अगस्त को आने वाले केबीसी के एपिसोड में भारतीय सेना की कर्नल सोफिया कुरैशी, विंग कमांडर व्योमिका सिंह और ले. कमांडर प्रेरणा देवस्थली को बतौर खास मेहमान बुलाया गया है। थल सेना, वायु सेना और नौसेना की तीनों अधिकारियों को हाल ही में सामने आए एक प्रोमो में शो के मेज़बान अमिताभ बच्चन के साथ देखा गया, जहां वे ऑपरेशन सिंदूर जैसे अहम सैन्य मिशन के अनुभव साझा कर रही हैं। अपनी सत्ता बचाने के लिए भारत की कोई निर्वाचित सरकार कितने निम्न स्तर पर भी गिर सकती है, यह उसकी ताजा मिसाल है। मोदी सरकार में पहली बार ऐसा नहीं हुआ है। पहले भी राजनैतिक शिष्टाचार, कूटनीति, सौहार्द्र आदि को धता बताकर श्रीमान मोदी ने कई ऐसे फैसले लिए या कार्य किए जिन पर विवाद उठे हैं। संसद में किसी महिला सांसद के लिए शूर्पणखा का संबोधन, पूर्व प्रधानमंत्री के लिए रेनकोट पहनकर नहाने जैसी मिसालें, विदेश जाकर यह कहना कि न जाने कौन से जन्म का पाप है कि भारत में पैदा होना पड़ा, विदेशी राष्ट्राध्यक्षों से जबरदस्ती गले मिलना, पीठ थपथपाना, हाथ पकड़ना, बराक ओबामा को श्री ओबामा न कहकर सीधे बराक कहना, डोनाल्ड ट्रंप के लिए अमेरिका जाकर प्रचार कर लेना, अंतरराष्ट्रीय मंचों पर बैठकर जबरन की भावुकता दिखाना या अपनी गरीबी का रोना रोना, ऐसे न जाने कितने कारनामे 11 सालों में देश ने देखे हैं। ऐसी हर (दु:)घटना के बाद लगता कि अब इससे नीचे तो सरकार नहीं गिरेगी, लेकिन नरेन्द्र मोदी हैरान करने का कोई अवसर नहीं छोड़ते हैं।

22 अप्रैल को हुआ पहलगाम हमला इस देश को मिला ऐसा जख्म है जिसके घाव भरने की जगह बार-बार उसे कुरेद कर नमक छिड़का जा रहा है। 26 नवंबर को मुंबई या 13 दिसंबर को संसद पर किए गए आतंकी हमलों समेत कई आतंकवादी घटनाएं देश में हुई हैं। जिन पर सरकारों को घेरा गया और सवाल भी उठे। कई हमलों में दोषियों को मारा गया, फांसी की सजा मिली या उन पर शिकंजा कसा गया। लेकिन कभी इस तरह पीड़ितों को मोहरा बनाकर राजनीति का शतरंज नहीं खेला गया। 6 और 7 मई की आधी रात को जब ऑपरेशन सिंदूर शुरु हुआ, और चंद घंटों में पाकिस्तान के 9 आतंकी ठिकानों को ध्वस्त करने की खबर आई तो इस पर पूरे देश को संतोष हुआ कि एक बड़ी जवाबी कार्रवाई की गई है। लेकिन फिर इसमें न जाने कहां से डोनाल्ड ट्रंप आ गए, जिन्होंने दावा किया कि अब भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध विराम हो गया है, क्योंकि मैंने दोनों देशों के नेताओं से कहा है कि हमें व्यापार करना है, इसलिए युद्ध बंद करो। अब तक शायद 35-36 बार ट्रंप यही दावा दोहरा चुके हैं और मई से लेकर अगस्त आधा निकलने तक नरेन्द्र मोदी ने ट्रंप का नाम लेकर एक बार भी यह नहीं कहा कि यह दावा बेबुनियाद है और ट्रंप झूठ बोल रहे हैं। विपक्ष ने नरेन्द्र मोदी से संसद में भी यही मांग की कि आप एक बार ऐसा कह दीजिए, लेकिन मोदीजी मुंह पर ऊंगली रखकर बैठे हुए हैं। उन्हें ऑपरेशन सिंदूर पर जब भी बात करनी होती है, वे वीर रस की धाराएं बरसाने लगते हैं। मेरी रगों में गर्म सिंदूर है, लहू नहीं है। धरती के आखिरी कोने तक जाकर आतंकियों को पकड़ेंगे। दुनिया ने नए भारत का चेहरा देखा है। और न जाने कितने किस्म के घटिया फिल्मी संवाद जैसी बातें प्रधानमंत्री के भाषणों का हिस्सा बनीं। मगर वे चारों आतंकी कहां हैं, ऑपरेशन महादेव में वही मारे गए हैं या कोई और, आतंकी पहलगाम तक पहुंचे कैसे, पर्यटकों की सुरक्षा के लिए वहां सुरक्षा बल क्यों नहीं था, ऐसे कई सवाल अब तक अनसुलझे हैं।

इस बीच ऑपरेशन सिंदूर की जानकारी प्रेस को देने के लिए जिन कर्नल सोफिया कुरैशी को जिम्मेदारी सौंपी गई थी, उनके बारे में मध्यप्रदेश के मंत्री विजय शाह ने कथित तौर पर बेहूदा टिप्पणी की थी कि, जिन आतंकवादियों ने हमारी माता-बहनों को सिंदूर देख कर मारा, उनके कपड़े उतारने मोदी जी ने उन्हीं की बहन को भेज दिया। इस बयान पर पूरे देश में खूब बवाल हुआ था। अदालत ने स्वत: संज्ञान लेकर श्री शाह पर कार्रवाई के आदेश दिए थे। मामला सुप्रीम कोर्ट तक पहुंचा। अभी 18 अगस्त को इस मामले पर अगली सुनवाई होगी। इससे पहले सुप्रीम कोर्ट ने विजय शाह के सार्वजनिक रूप से माफी न मांगने पर कड़ी टिप्पणी की थी। अब अदालत से श्री शाह के लिए क्या फैसला आता है, यह तो बाद में ही पता चलेगा। लेकिन इस बीच नरेन्द्र मोदी, अमित शाह या जे पी नड्डा चाहते तो कर्नल सोफिया कुरैशी के सम्मान की खातिर ही विजय शाह पर कोई सख्त फैसला ले सकते थे। लेकिन यहां भी नरेन्द्र मोदी ने पहले सत्ता का फायदा देखा।

चुनावी सभाओं से लेकर संसद तक और सड़कों पर लगे बड़े-बड़े होर्डिंग्स में ऑपरेशन सिंदूर के नाम पर अपना नाम चमकाने की भरपूर कोशिश नरेन्द्र मोदी ने की। शायद इससे भी भाजपा को अपेक्षित लाभ नहीं मिला है तो अब कर्नल सोफिया कुरैशी, विंग कमांडर व्योमिका सिंह और ले. कमांडर प्रेरणा देवस्थली को कौन बनेगा करोड़पति का हिस्सा बनाया गया है। जबकि यह पूर्णत: एक व्यावसायिक और लाभकारी उपक्रम है। सरकार का दावा है कि ऑपरेशन सिंदूर अभी खत्म नहीं हुआ है, फिर किस तरह इससे जुड़े लोगों को किसी मनोरंजक कार्यक्रम का हिस्सा बनाया गया है। देश के इतिहास में अब तक किसी सैन्य मिशन के जारी रहते हुए इस तरह उसका व्यावसायीकरण नहीं किया गया था। लेकिन मोदी सरकार अपने प्रचार के लिए ऑपरेशन सिंदूर को मनोरंजन के लिए इस्तेमाल कर रही है। इसका पुरजोर विरोध होना चाहिए।

इंसानियत बचाने के लिए एक पत्रकार की दारुण पुकार

दुनियादारी

■ **सर्वमित्रा सुरजन**

रक्तपिपासु बेंजामिन नेतन्याहू के शासन में इजरायल ने गज़ा को पूरी तरह लील लिया है। फिर भी उसकी प्यास नहीं बुझ रही है। सैकड़ों मासूम बच्चों के कत्ल और हजारों-लाखों जिंदगियों को तबाह करने का ऐसा गुनाह नेतन्याहू के सिर पर है, जिसके लिए कोई भी सज़ा कम पड़ेगी। यह बड़ी विडंबना ही है कि दुनिया हिटलर की नृशंसता को याद करती है, अमेरिका ने हिरोशिमा और नागासाकी पर जो बम गिराए, उसकी विभीषिका से सबक लेने की बात करती है, अमेरिका में 11 सितंबर के बड़े आतंकी हमले पर त्राहिमाम करती है। लेकिन मौजूदा वक्त में जिस तरह का आतंकवाद इजरायल ने कायम किया है और पूरी सीनाजोरी के साथ गज़ा को खत्म करने और पूरे फिलीस्तीन पर कब्जा करने की बात नेतन्याहू कर रहे हैं, उस पर रोक लगाने की कोशिशें जुबानी जमाखर्च से आगे ही नहीं बढ़ पा रही हैं। यह तो समझ आ गया कि संयुक्त राष्ट्र संघ सिरे से अनुपयोगी हो चुका है। विश्वशांति के जिस मकसद से इसकी स्थापना दूसरे विश्वयुद्ध के बाद की गई थी, उसे प्राप्त करने में संरा संघ नाकाम रहा है। लेकिन केवल इस संस्था पर ठीकरा फोड़ने से कुछ नहीं होगा, क्योंकि आखिर में यह उन तमाम देशों की साझा नाकामी है, जिनसे इस संस्था का गठन हुआ है। इस समय शक्तिशाली देशों की सरकारें व्यापार के हितों से संचालित हो रही हैं, लिहाजा उनसे इंसानियत की उम्मीद बेकार है। छोटे देशों में अधिकतर इस पाले या उस पाले बैठे हुए हैं। नेहरू-गांधी जैसे नेता इस समय वैश्विक परिदृश्य में नहीं हैं, जो दुनिया को नया विचार, नयी दिशा दे सकें। इंसानियत मानो आखिरी सांसें ले रही है और इस कठिन समय में अनस अल-शरीफ जैसे पत्रकारों उम्मीद लेकर आते हैं कि जान की बाजी लगाकर भी गलत को गलत और सही को सही कहने का जज़्बा दिखाया जाएगा। लेकिन इजरायल ने अनस अल शरीफ की भी जान ले ली।

11 अगस्त को गजा सिटी में पत्रकारों के शिविर पर किए गए एक लक्षित इजरायली हमले में अल-जजीरा के पत्रकार अनस अल-शरीफ और उनके चार सहकर्मियों की मौत हो गई। युद्धों में सारी क्रूरता के बावजूद पत्रकारों, चिकित्सकों, सहायता पहुंचाने वाले कर्मियों आदि पर हमले नहीं किए जाते थे, लेकिन इजरायल इतनी नैतिकता और साहस भी नहीं दिखा सका। पांच पत्रकारों की इस हत्या पर दुनिया भर के मीडिया में पुरजोर निंदा की जा रही है। हालांकि भारत का मीडिया इस मामले में भी काफी पिछड़ चुका है। बहरहाल, मौत से पहले अनस का आखिरी संदेश सार्वजनिक किया गया है, जिसे उनकी मौत के बाद सोशल मीडिया पर पोस्ट किया गया है। 6 अप्रैल 2025 को अनस ने यह संदेश लिख कर रखा था। उन्हें पता था कि कर्तव्य पथ पर उनके साथ क्या हो सकता है, फिर भी वे पीछे नहीं हटे।

इस आखिरी पैगाम में अनस ने कहा है कि.... ये मेरी इच्छा और मेरा अंतिम संदेश है। अगर मेरे ये शब्द आप तक पहुंच गए हैं तो आप समझ जाएं कि इजरायल ने मुझे मार डाला है और मेरी आवाज को खामोश करने में कामयाब रहे हैं। अल्लाह जानता है कि मैंने हरसंभव कोशिश की कि मैं अपने लोगों की ताकत और उनकी आवाज बन सकूं। जब से मैंने जबालिया रिफ्यूजी कैंप की गलियों में आंखें खोली हैं। मेरी उम्मीद रही है कि अल्लाह मुझे लंबी उम्र दे ताकि मैं अपने परिवार के पास अपने शहर असकलान (अल-मज्दल) लौट सकूं। लेकिन अल्लाह की मर्जी पहले होती है और उनका फैसला अंतिम होता

11 अगस्त को गजा सिटी में पत्रकारों के शिविर पर किए गए एक लक्षित इजरायली हमले में अल-जजीरा के पत्रकार अनस अल-शरीफ और उनके चार सहकर्मियों की मौत हो गई। युद्धों में सारी क्रूरता के बावजूद पत्रकारों, चिकित्सकों, सहायता पहुंचाने वाले कर्मियों आदि पर हमले नहीं किए जाते थे, लेकिन इजरायल इतनी नैतिकता और साहस भी नहीं दिखा सका। पांच पत्रकारों की इस हत्या पर दुनिया भर के मीडिया में पुरजोर निंदा की जा रही है।

है। मैंने कई बार दर्द को हर रूप में जिया है, कई बार पीड़ा सही है। लेकिन फिर भी मैंने एक बार भी सच्चाई को बिना तोड़-मरोड़ या झूठ के सामने लाने में संकोच नहीं किया ताकि उन लोगों को अल्लाह के सामने खड़ा किया जा सके, जिन्होंने चुप्पी साधे रखी, जिन्होंने निर्दोषों की हत्याओं को मुंह सिल कर स्वीकार कर लिया और जिनके दिल हमारे बच्चों और महिलाओं के बिखरे हुए अवशेषों को देखकर भी नहीं पसीजे, और जिन्होंने डेढ़ साल से अधिक समय से मारे जा रहे हमारे लोगों के नरसंहार को रोकने के लिए कुछ नहीं किया।

मैं आपको फिलीस्तीन सौंपता हूं, जो मुस्लिम दुनिया का अनमोल रत्न है और इस दुनिया के हर आजाद शख्स के दिल की धड़कन है। मैं आपको यहां के लोगों, मासूम बच्चों की जिम्मेदारी सौंपता हूं, जिन्हें कभी सपने देखने या सुरक्षा और शांति के साथ जीने का मौका नहीं मिला। उन पर हजारों टन इजरायली बम और मिसाइलें गिराई गईं, जिनसे उनके चिथड़े हो गए।

मैं आपसे आग्रह करता हूं कि इन बेड़ियों को अपनी आवाज को खामोश न करने दो, न ही सरहदों को तुम्हें रोकने दो। तुम उस जमीं और उसके लोगों की आजादी के लिए पुल बनो, जब तक हमारी चोरी की गई मातृभूमि पर की आजादी का सूरज न उग आए। मैं तुम्हें अपने परिवार की जिम्मेदारी सौंपता हूं। मैं तुम्हें अपनी प्यारी बेटी शम को सौंपता हूं, जो मेरी आंखों का तारा है जिसे मैं बड़ा होते हुए कभी देख ही नहीं सका। मैं तुम्हें अपने प्यारे बेटे सलाह को सौंपता हूं, जिसे मैं जीवन भर सहारा देना और उसके साथ रहना चाहता था, जब तक वह इतना मजबूत न हो जाए कि मेरा बोझ उठा सके और इस मिशन को आगे बढ़ा सके।

मैं तुम्हें अपनी प्यारी मां को सौंपता हूं, जिनकी दुआओं ने मुझे यहां तक पहुंचाया है, जहां मैं हूं। जिनकी दुआएं मेरी ढाल बनीं और जिनके नूर ने मेरा रास्ता रोशन किया। मैं दुआ करता हूं कि अल्लाह उन्हें ताकत दे और मेरी ओर से उन्हें सबसे बेहतरीन इनाम अता करे। मैं तुम्हें अपनी जीवनसंगिनी, अपनी प्यारी पत्नी उम्म सलाह (बयान) को भी सौंपता हूं, जिससे युद्ध ने मुझे महीनों तक जुदा रखा। फिर भी वह हमारे रिश्ते के प्रति वफादार रहीं, जैतून के पेड़ के तने की तरह अडिग रही, सब्र करने वाली, अल्लाह पर भरोसा रखने वाली और मेरी गैरमौजूदगी में पूरे हौसले और ईमान के साथ जिम्मेदारी निभाने वाली।

मैं तुमसे आग्रह करता हूं कि तुम उनके साथ खड़े रहो, अल्लाह ताला के बाद उनका सहारा बनो। अगर मैं मरता हूं, तो अपने उसूलों पर अडिग रहकर मरूंगा। मैं अल्लाह को गवाह बनाकर कहता हूं कि मैं उसके फैसले से राजी हूं, उससे मिलने के यकीन के साथ और इस भरोसे के साथ कि जो अल्लाह के पास है, वह बेहतर और हमेशा रहने वाला है।

ऐ अल्लाह! मुझे शहीदों में शामिल कर, मेरे पिछले और आने वाले गुनाह माफ कर और मेरे खून को मेरी कौम और मेरे परिवार के लिए आजादी का रास्ता रोशन करने वाली एक रोशनी बना दे। अगर मुझसे कोई कमी रह गई हो तो मुझे माफ कर और मेरे लिए रहमत की दुआ करना क्योंकि मैंने अपना वादा निभाया और उसे कभी बदला या तोड़ा नहीं। गजा को मत भूलना... और मुझे अपनी दुआओं में मत भूलना।

अनस अल शरीफ का यह आखिरी पैगाम सत्ता के नशे में डूबे तमाम स्वार्थी नेताओं के मुंह पर बड़ा तमाचा है। और उन लोगों पर लानत है जो नेतन्याहू का साथ देने वाले ट्रंप के लिए नोबेल शांति पुरस्कार की बात करते हैं या ट्रंप से दोस्ती के लिए देश की प्रतिष्ठा को दांव पर लगाते हैं। अनस अल शरीफ वास्तविक अर्थों में उस सैनिक की तरह शहीद हुए हैं, जो जान की बाज़ी लगाकर मोर्चे पर जाता है। अनस ने अपनी जिंदगी के आखिरी वक्त तक दुनिया को बताया कि गज़ा में क्या चल रहा है। उनका 11 तारीख की ही एक पोस्ट है, जिसमें उन्होंने कहा था कि लगातार बमबारी हो रही है। दो घंटे से गाजा शहर पर इज़रायली हमला तेज हो गया है।

इसी तारीख की एक और पोस्ट है, जिसमें अनस ने चेतावनी वाले निशान के साथ लिखा है, सर्वसंबंधितों के लिए,

आक्रांता अब खुले तौर पर गज़ा पर पूर्ण आक्रमण की धमकी दे रहा है। 22 महीनों से, शहर ज़मीन, समुद्र और हवा से लगातार बमबारी से क्षत-विक्षत है। हज़ारों लोग मारे गए हैं और लाखों घायल हुए हैं। अगर यह पागलपन नहीं रुका, तो गज़ा खंडहर में तब्दील हो जाएगा, उसके लोगों की आवाज़ें दबा दी जाएंगी, उनके चेहरे मिटा दिए जाएंगे - और इतिहास आपको उस नरसंहार के मूक गवाह के रूप में याद रखेगा जिसे आपने रोकने का फ़ैसला नहीं किया।

कृपया इस संदेश को शेयर करें और उन सभी को टैग करें जिनके पास इस नरसंहार को रोकने की ताकत है। चुप्पी का मतलब सहभागिता है।

इज़रायल की क्रूरता को अनस अल शरीफ ने दुनिया के सामने खोल कर रख दिया है। उनकी तरह और भी बहुत से लोग इस समय गज़ा की सच्चाई दिखाने और पीड़ितों की मदद करने में लगे हैं। ऐसे लोगों का साथ देना, उन्हें हिम्मत बंधाना भी इस समय बड़ी बात है। लेकिन जिन लोगों के पास सत्ता की ताकत है, वे इतनी हिम्मत भी नहीं दिखा पा रहे हैं।

कांग्रेस सांसद प्रियंका गांधी ने इस पर आवाज़ उठाई, तो इजरायल के राजदूत ने उन पर पलटवार करते हुए नैतिकता का वास्ता दे दिया। देश की विदेश नीति इतनी कमजोर कभी नहीं रही और कोई भी सरकार इतनी लाचार नहीं रही कि किसी देश का राजदूत सांसद पर अवांछित टिप्पणी कर सके। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी या विदेश मंत्री एस जयशंकर चाहते तो फौरन इजरायली राजदूत की निंदा करते, लेकिन उनकी चुप्पी बता रही है कि देश किस तरफ जा रहा है।

ट्रंप का टैरिफ़ हमला : बच्चे के हाथों में असली बंदूक

■ **के रवींद्रन**

डोनाल्ड ट्रंप द्वारा भारत पर 50 प्रतिशत टैरिफ़ लगाने की घोषणा, उनकी उन आर्थिक घोषणाओं की श्रृंखला में नवीनतम है जिनका असर अप्रत्याशित रूप से सीमाओं के पार भी पड़ता है। व्हाइट हाउस इसे 'अमेरिकी हितों की रक्षा' के कदम के रूप में पेश कर सकता है, लेकिन वास्तविकता यह है कि यह निर्णय अमेरिकी उपभोक्ताओं को तत्काल कष्ट पहुंचाता है, महत्वपूर्ण उद्योगों को अस्थिर करता है, और आर्थिक प्रतिक्रियाओं की एक ऐसी श्रृंखला को गति प्रदान करता है जो भारत के साथ द्विपक्षीय व्यापार से कहीं आगे तक फैली हुई है।

अमेरिकी परिवार पहले से ही इस दबाव को महसूस कर रहे हैं। भारत, केवल उपभोक्ता वस्तुओं का एक और स्रोत नहीं है - यह कई क्षेत्रों, विशेष रूप से दवा उद्योग, में एक महत्वपूर्ण आधार है। भारत में निर्मित दवाइयां लंबे समय से अमेरिकी जेनेरिक दवा बाजार पर हावी रही हैं, जिससे लाखों अमेरिकियों के लिए स्वास्थ्य सेवा लागत नियंत्रण में रही है। दशकों से, जीवन रक्षक हृदय की दवाओं से लेकर बुनियादी एंटीबायोटिक दवाओं तक, हर चीज़ की सामर्थ्य भारतीय जेनेरिक दवाओं के निरंतर प्रवाह पर निर्भर रही है। इन आयातों को महंगा बनाकर, ट्रम्प का टैरिफ मरीजों, बीमा प्रदाताओं और अस्पतालों के लिए उच्च कीमतों की गारंटी कर देता है।

इतिहास को आधार मानें, तो ट्रम्प के राजनीतिक गणित में अगले बदलाव के बाद 50 प्रतिशत टैरिफ शायद टिक न पाए। भारत से कुछ प्रतीकात्मक रियायत के बदले इसे वापस लिया जा सकता है या किसी अन्य लक्ष्य पर केंद्रित एक नए सुर्खियां बटोरने वाले कदम से प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

ट्रम्प इन व्यावहारिक परिणामों से बेपरवाह दिखते हैं। उनकी राजनीतिक शैली तात्कालिक शक्ति के आभास पर फलती-फूलती है। यही कारण है कि भारत पर 50 प्रतिशत टैरिफ, हालांकि अल्पावधि में संभावित रूप से नुकसानदेह है, उनके अगले कदम तक ही चल सकता है। फिर भी, जब तक यह लागू रहेगा, नुकसान वास्तविक होगा। छोटे और मध्यम आकार के अमेरिकी व्यवसाय जो भारतीय आयातों पर निर्भर हैं- कपड़ों से लेकर मशीनरी के पुर्जों तक- को ज़्यादा लागत का सामना करना पड़ेगा, जिससे उन्हें या तो नुकसान सहना होगा या उसे ग्राहकों पर डालना होगा। खुदरा विक्रेता उत्पादों की कीमतें बढ़ाएंगे। व्यापक वैश्विक अर्थव्यवस्था, जो अभी भी महामारी के बाद की आपूर्ति श्रृंखला की कमज़ोरी से जूझ रही है, को अनिश्चितता के एक और स्रोत के साथ तालमेल बिठाना होगा।

दवाओं की कीमतें अमेरिकी राजनीति में लगातार एक मुद्दा रही हैं। ट्रम्प खुद अतीत में दवाओं की 'बेहद ऊंची' कीमतों के खिलाफ मुखर रहे हैं और खुद को आम अमेरिकियों के लिए किफायती स्वास्थ्य सेवा के हिमायती के रूप में पेश करते रहे हैं। फिर भी, यह टैरिफ, देश की सस्ती दवाओं के सबसे महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक को और महंगा बनाकर, उस लक्ष्य के बिल्कुल विपरीत कार्य करता है। यह समझने के लिए कि ऐसे विरोधाभास क्यों बने रहते हैं, ट्रम्प की शासन शैली पर गौर करना होगा। वह एक पारंपरिक नीति निर्माता की तरह कम और एक दिखावटी व्यक्ति की तरह ज़्यादा काम करते हैं, जो हमेशा अपने प्रदर्शन के प्रति सचेत रहता है। कार्यकारी आदेशों पर हस्ताक्षर के उनके समारोह, जहां वह अक्सर अपनी कलम को मंच के सहारे की तरह इस्तेमाल करते हैं। किसी बच्चे के खिलौने वाली बंदूक से खेलने जैसा। ये फैसले वास्तविक हैं, जिनके परिणाम लाखों लोगों के जीवन को प्रभावित करते हैं। इस ताज़ा मामले में, भारत के साथ टकराव का नाटक मतदाताओं के उस वर्ग के साथ राजनीतिक लाभ प्राप्त कर सकता है जो व्यापार असंतुलन को अमेरिकी कमज़ोरी का सुबूत मानता है। लेकिन वैश्विक व्यापार की वास्तविक कार्यप्रणाली राजनीतिक नाटक के आगे इतनी आसानी से झुकने वाली नहीं है। टैरिफ शायद ही कभी सर्जिकल टूल के रूप में काम करते हैं; वे कुंद हथियार हैं। एक बार लागू होने के बाद, वे अप्रत्याशित रूप से प्रतिध्वनित होते हैं, और ऐसे तरीके से विजेता और हारने वाले बनाते हैं जिसका अनुमान उनके निर्माता भी अक्सर नहीं लगा पाते।

यह अप्रत्याशितता ट्रम्प के अचानक फैसले बदलने की प्रवृत्ति से और बढ़ जाती है। व्यापारिक साझेदारों, विदेशी निवेशकों और यहां तक कि घरेलू उद्योगों ने भी उनकी घोषणाओं को सावधानी से लेना सीख लिया है, यह जानते हुए कि आज का 'दृढ़ रुख' कल का 'मेज पर सौदा' हो सकता है। वैश्विक आयाम को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। भारत न केवल अमेरिका का एक प्रमुख आपूर्तिकर्ता है, बल्कि यूरोप, अफ्रीका और एशिया को आपूर्ति करने वाली आपूर्ति श्रृंखलाओं में एक महत्वपूर्ण नोड भी है। अमेरिका-भारत व्यापार में व्यवधान अन्य बाज़ारों में भी लहर जैसा प्रभाव डाल सकता है।

ट्रम्प के इस कदम का राजनीतिक समय भी उतना ही महत्वपूर्ण है। वह तीसरे राष्ट्रपति कार्यकाल का विचार प्रस्तुत कर रहे हैं। इस दृष्टि से, भारत पर टैरिफ लगाने को घरेलू और अंतरराष्ट्रीय, दोनों ही स्तरों पर खुद को ध्यान के केंद्र में बनाए रखने की उनकी व्यापक रणनीति के हिस्से के रूप में देखा जा सकता है। यह राजनीतिक रूप से कारगर है या नहीं, यह एक खुला प्रश्न है, लेकिन आर्थिक नीति के रूप में, यह अल्पकालिक तमाशे और दीर्घकालिक जटिलताओं का एक और उदाहरण बनने का जोखिम उठा रही है।

यदि इतिहास को आधार मानें, तो ट्रम्प के राजनीतिक गणित में अगले बदलाव के बाद 50 प्रतिशत टैरिफ शायद टिक न पाए। भारत से कुछ प्रतीकात्मक रियायत के बदले इसे वापस लिया जा सकता है या किसी अन्य लक्ष्य पर केंद्रित एक नए सुर्खियां बटोरने वाले कदम से प्रतिस्थापित किया जा सकता है। लेकिन जब तक यह लागू रहेगा, उपभोक्ताओं, उद्योगों और वैश्विक अर्थव्यवस्था पर इसके वास्तविक, ठोस प्रभाव पड़ेंगे।

ललित सुरजन की कलम से

वियतनाम : विश्व शांति के लिए एक पहल

अभी इसी मई माह में अमेरिका ने भी दादागिरी दिखाते हुए जेरुसलम में अपना दूतावास खोल लिया है। इसके लिए दुनिया के तमाम देशों को निमंत्रण भेजे गए थे। अधिकतम ने निमंत्रण ठुकरा दिया। भारत की मोदी सरकार ने भी फिलिस्तीन के साथ अपने पुराने संबंधों को याद रखा और अमेरिकी दूतावास के उद्घाटन में भाग नहीं लिया। क्वांग त्री की हमारी कार्यशाला में इस बारे में लंबी बात हुई। हम सब एक राय थे कि स्वतंत्र सार्वभौम फिलिस्तीन देश की स्थापना होना चाहिए जिसकी राजधानी पूर्वी जेरुसलम में हो। हम सबकी सोच थी कि इजराइल के उद्दंड आचरण से विश्व शांति को लगातार खतरा पहुंच रहा है। सैन्य ताकत और अमेरिका की शह पर इजराइल जो कुछ कर रहा है वह मानवता के लिए कलंक है और उसके दुष्परिणाम तो सामने आ रहे हैं, दूरगामी प्रभाव भी घातक ही होंगे।

(देशबन्धु में 21 जून 2018 को प्रकाशित)

https://lalitsurjan.blogspot.com/2018/06/blog-post_20.html

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

पावन प्रसंग

चंद्रशेखर ऐसे बने आजाद

बचपन से ही चंद्रशेखर में भारतमाता को स्वतंत्र कराने की भावना कूट-कूटकर भरी हुई थी। इसी कारण उन्होंने स्वयं अपना नाम आजाद रख लिया था। उनके जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना ने उन्हें सदा के लिए क्रांति के पथ पर अग्रसर कर दिया। 13 अप्रैल 1919 को जलियांवाला बाग अमृतसर में जनरल डायर ने जो नरसंहार किया, उसके विरोध में तथा रौलट एक्ट के विरुद्ध जो जन आंदोलन प्रारंभ हुआ था, वह दिन-प्रतिदिन और जोर पकड़ता वा रहा था।

इसी आंदोलन के दौरान प्रिंस ऑफ वेल्स मुंबई आए और वे जहां-जहां गए, वहां-वहां भारतीयों ने उनका बहिष्कार किया। जब राजकुमार बनारस पहुंचने वाले थे, उस समया वहां भी उनके बहिष्कार का जुलूस निकला। बनारस के दशाश्वमेध घाट वाले जुलूस में युवा चंद्रशेखर अपने साथियों के साथ शामिल थे। पुलिस वाले जुलूस को तितर-बितर करने के लिए लाठी घुमाते हुए आ रहे थे। यह देख चंद्रशेखर के मित्रगण लाठी के प्रहार से बचने के लिए इधर-उधर फैल गए। केवल चंद्रशेखर ही अपने स्थान पर निडर खड़े रहे।

इसी बीच कुछ आंदोलनकर्ता, जो एक विदेशी कपड़े की दुकान पर धरना दे रहे थे उन पर पुलिस का एक दारोगा डंडे बरसाने लगा। यह अत्याचार चंद्रशेखर से देखा नहीं गया और उन्होंने पास पड़ा एक पत्थर उठाकर उस दारोगा के माथे पर दे मारा। निशाना अचूक था। दारोगा घायल होकर वहीं जमीन पर गिर गया, लेकिन चंद्रशेखर को ऐसा करते हुए एक सिपाही ने देख लिया और उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया, लेकिन इस गिरफ्तारी से चंद्रशेखर जरा भी भयभीत या विचलित नहीं हुए। उनको गिरफ्तारी के बाद पुलिसवालों ने उनके कमरे की तलाशी ली तो उनके कमरे में लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय, महात्मा गांधी समेत अनेक राष्ट्रीय नेताओं के चित्र मिले, जिसके आधार पर पुलिस वालों ने उन पर राष्ट्रद्रोह का आरोप लगा दिया।

इसके बाद उन्हें थाने में ले जाकर हवालात में बंद कर दिया गया। दिसंबर की कड़ाके वाली ठंढ की रात थी और ऐसे में चंद्रशेखर को ओढ़ने-बिछाने के लिए कोई बिस्तर नहीं दिया गया; क्योंकि पुलिसवालों का ऐसा सोचना था कि यह लड़का ठंढ से घबरा जाएगा और माफी मांग लेगा, किंतु ऐसा नहीं हुआ। यह देखने के लिए लड़का क्या कर रहा है? और शायद वह ठंड से ठिठुर रहा होगा; आधी रात को इन्स्पेक्टर ने चंद्रशेखर की कोठरी का ताला खोला तो वह यह देखकर आश्चर्यचकित हो गया कि चंद्रशेखर दंड-बैठक लगा रहे थे और उस कड़कड़ाती ठंड में भी पसीने से नहा रहे थे।

दूसरे दिन चंद्रशेखर को न्यायालय में मजिस्ट्रेट के सामने ले जाया गया। उन दिनों बनारस में एक बहुत कठोर मजिस्ट्रेट नियुक्त था। बात-बात में वकीलों को वह सुना सुना कर कहता कि किसी को पकड़कर छोड़ना तो चिड़ीमार का काम होता है, किसी मजिस्ट्रेट का काम थोड़े ही है! मजिस्ट्रेट का काम तो सजा देना होता है। पुलिस वाले अपराधी को सामने लाए कि दो सजा। उसी अंग्रेज मजिस्ट्रेट के सामने 15 वर्षीय चंद्रशेखर को पुलिस ने पेश किया।

मजिस्ट्रेट ने बालक से पूछा- 'तुम्हारा नाम क्या है? बालक ने निर्भीकता से उत्तर दिया-आजाद। पिता का नाम?- मजिस्ट्रेट ने कड़े स्वर में पूछा। ऊंची गर्दन किए हुए बालक ने तुरंत उत्तर दिया- स्वाधीन। युवक की हेकड़ी देखकर न्यायाधीश क्रोध से भर उठा। उसने फिर पूछा- तुम्हारा घर कहां है? चंद्रशेखर ने गर्व से उत्तर दिया- जेल की कोठरी। न्यायाधीश ने क्रोध में चंद्रशेखर को 15 बेंत लगाने की सजा दी। उन दिनों कैदियों के शरीर पर विशेष लेप लगाया जाता था। लेप लगाने के बाद उसने बेंत लगाने वाले जल्लाद को बेंत लगाने का आदेश दिया और फिर चंद्रशेखर को तड़ातड़ बेंत पड़ने लगे।

लेकिन चंद्रशेखर भी अपनी हिम्मत के पक्के थे। उनकी हिम्मत व सहनशीलता ने बनारस के उस निर्दयी जेलर को भी हिला दिया। पंद्रह बेंतों की सजा के पश्चात, जेल के नियमानुसार तीन आने पैसे, जेलर ने चंद्रशेखर को दिए, लेकिन चंद्रशेखर ने वह पैसे लेकर जेलर के मुंह पर ही फेंक दिए। अब तक चंद्रशेखर की वीरता की कहानी बनारस के घर-घर में पहुंच गई थी और जेल के दरवाजे पर शहर की जनता फूल-मालाएं लेकर उनका स्वागत करने के लिए पहुंच चुकी थी। सबने मालाएं पहनाकर उनका स्वागत किया और इसके अगले दिन बनारस से प्रकाशित होने वाले 'मर्यादा' नामक समाचारपत्र में एक लेख चंद्रशेखर आजाद की फोटो सहित 'वीर बालक आजाद' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। उस समय इस समाचारपत्र के संपादक बाबू संपूर्णानंद जी थे, जो उस समय कांग्रेस के बड़े नेता थे, उन्होंने चंद्रशेखर आजाद की वीरता और साहस को विस्तृत रूप से प्रकाशित किया।

-युग निर्माण योजना

आपके पत्र

नव ऊर्जा संचित कर राष्ट्र कल्याण की प्रेरणा देते राष्ट्रीय पर्व

पंद्रह अगस्त 1947 का वह दिव्य प्रभात देश के लिए कितने आनन्द उल्लास का रहा होगा जो एक हजार वर्ष की गुलामी को भोगकर स्वतंत्र हुआ। आज हम अपनी उस स्वतंत्रता की स्मृति को चिरस्थायी बनाये रखने के लिए प्रतिवर्ष स्वतंत्रता दिवस को राष्ट्रीय उत्सव के रूप में मनाते हैं।

उठ जाग मुसाफिर भोर भई... का सहगान गाते हुये बालक प्रभात फेरी निकालते थे। राष्ट्र ध्वज तिरंगा मुक्त गगन में फहराया जा रहा है। आज हम स्मरण करते है, देश के उन नौनिहालों का, जिन्होंने मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए हँसते हँसते स्वयं का बलिदान कर दिया। इसी दिन के लिए कई माताओ के सपूत, बहिनों के भाई फांसी के पर झूल गये। उन अनगिनत वीरों ने अंग्रेजों की गोलियों को पीठ पर ही नही, बल्कि अपने सीने पर झेला था।

कितने क्रूर थे अंग्रेज, जिन्होंने जलिया वाले बाग में निहत्थे सभा पर गोलियो की बौछार करके दानवता का नग्न प्रदर्शन किया था। अंग्रेज डायर के उस कृत्य को इतिहास कभी क्षमा नही करेगा। अमृतसर की धरती अपने सपूतों के लहू से लाल हो गई। हम देशवासियों के पास शस्त्र कहां थे जो उनसे सामना करते? उनके पास बंदूकें और गोलियां थीं तो हमारे पास देश प्रेम के तराने गाती मस्तानों की टोलियां थी। चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह, सुखदेव, अशफाक उल्ला खां, रामप्रसाद बिस्मिल जैसे देशभक्त सिर पर कफ़न बांधकर चलने वाले वीर थे और ये दुर्बल देह में महावीर भगवान सा संकल्प धारण किये, सोटी और लंगोटी पहने अहिंसा और सत्याग्रह का वैचारिक शस्त्र धारण कर चलने वाली गांधी थे। गांधी की आंधी से यूनियन जैक हिल गया और उसके स्थान पर चढ़ गया अशोक चक्र वाला तिरंगा, उसे देखकर समस्त भारतीयों के मन बांसों उछलने लगे। मन मयूर नाच उठे। हृदय कमल खिल उठे। जीवन के कण कण में नव चेतना, नव जागृति अटखेलियां करने लगी, राष्ट्रभक्तो के गगन भेदी नारो से बहु मंडल गूंज उठा। आजादी की खुशी में देश के बंटवारे की पीड़ा को भी भूल गये। बाल, वृद्ध, वनिता सभी प्रसन्न थे। सभी का मुखमंडल खिलखिला रहे थे। मिठाइयों के थाल बांटे जा रहे थे।

वह रामराज्य, लाखों वर्ष का दीर्घकाल व्यतीत हो जाने पर भी जिसकी चमक और दमक किसी भी प्रकार से कम नहीं हुई है। आप सभी बुद्धिजीवी है, हम जानते हैं इस दीर्घ काल में समय ने कई करवटें लीं। अनेक राजा-महाराजा और सम्राट्-शहंशाह तलवारें चमकाते, भाले उठाते, हिनहिनाते अश्वों व चिंघाड़ते हाथियों पर बैठकर आये, अपनी कायरतापूर्ण वीरता और सत्ता की शक्ति से जन-मन में भय का संचार किया।

-कांतिकुमार मांडोत

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770
ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

चिंतन

सिंधु जल संधि पर कड़ा रुख अपनाए रखे भारत

पाकिस्तान की गीदड़भभकियों, धमकियों को गंभीरता से लेने की जरूरत नहीं है। सिंधु जल संधि को भारत ने जिस मकसद के लिए निलंबित किया है, उसके पूरे होने तक भारत को अपने रुख पर कायम रहना चाहिए। इधर तीन दिन में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री शाहबाज शरीफ, पाक फौज प्रमुख जनरल असीम मुनीर और पीपीपी नेता बिलावल भुट्टो ने भारत के खिलाफ उकसावे वाले बयान दिए हैं। पाकिस्तान बेशक अमेरिकी कठपुतली बनकर खेल रहा है और भारत के खिलाफ जहर उगल रहा है, लेकिन इससे भारत को न ही विचलित होने की जरूरत है और न ही प्रतिक्रिया देने की जरूरत है। भारत ने सिंधु जल समझौता तब निलंबित किया है, जब पाकिस्तान भारत के खिलाफ आतंकवादी गतिविधियों से बाज नहीं आ रहा था और पाक स्थित आतंकी गुट ने पहलगाम में हिंसा को अंजाम दिया। भारत के अनेक बार सबूत देने के बावजूद पाकिस्तान ने भारत के खिलाफ आतंकवादी हरकतें बंद नहीं की। पहलगाम घटना के बाद भारत का सब्र जवाब दे गया और सरकार ने पाकिस्तान के खिलाफ सख्त कदम उठाए, जिसमें ट्रेड पूर्ण रूप से बंद करने, अटारी व वाघा बॉर्डर बंद करने से लेकर सिंधु जल समझौते को निलंबित करने जैसे एक्शन हैं। भारत ने 1960 के सिंधु जल समझौते को 23 अप्रैल को स्थगित कर दिया था। पहलगाम में हुए आतंकी हमले में 26 लोग मारे गए थे। अब जब सिंधु, चिनाब व झेलम से पानी का बहाव पाकिस्तान में कम हुआ है और पाकिस्तान को जल संकट आसन्न दिखाई दे रहा है, तो बौखलाहट में पाकिस्तान सरकार के पदेन लोग भारत के खिलाफ जहर उगल रहे हैं। पाक फौज प्रमुख जनरल असीम मुनीर ने अमेरिका की धरती से भारत को परमाणु बम की धमकी दी कि अगर इस्लामाबाद को भारत से अस्तित्व का खतरा महसूस हुआ, तो वह आधी दुनिया को अपने साथ ले डूबेगा। खेदजनक है कि अमेरिका ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी के प्रमुख बिलावल भुट्टो जरदारी ने सिंधु दरिया के पानी पर कहा कि अगर भारत ने युद्ध थोपा, तो पाकिस्तान पीछे नहीं हटेगा। उसके बाद अब पाकिस्तान के प्रधानमंत्री शहबाज शरीफ ने भारत को खुली धमकी दी है कि वह पाकिस्तान का एक बूंद पानी भी किसी को छीनने नहीं देंगे। सवाल है कि ये लोग किस हैसियत से भारत को धमकियां दे रहे हैं, न तो यह कूटनीति की भाषा है और न किसी राष्ट्र की भाषा है। भारत का रुख साफ है कि जब तक पाकिस्तान आतंकवाद को खत्म नहीं करता है, तब तक भारत पाक से न कोई वार्ता करेगा और न ही सिंधु जल संधि को बहाल करेगा। पाकिस्तान अमेरिका व चीन के दम पर अगर भारत के खिलाफ उकसावे वाला बयान दे रहा है, तो वह ऐसा करता रहे। भारत अपनी आतंकवाद के खिलाफ जीरो टॉलरेंस नीति के अनुरूप ही कार्य करेगा। भारत ने स्पष्ट संदेश दिया है कि सीमा पार से पाकिस्तान की कोई भी आतंकी व सैन्य हरकत युद्धघोष मानी जाएगी। भारत स्पष्ट कर चुका है कि वह न्यूक्लियर ब्लैकमेलिंग को बर्दाश्त नहीं करेगा, पाक आतंकवाद खत्म करे, फिर वार्ता टेबल पर आए। पाक जिस अमेरिका व चीन के बल पर कूद रहा है, उसी से पाक को पानी मांगना चाहिए। भारत का सिंधु जल समझौते को निलंबित करना न किसी अंतरराष्ट्रीय कानून के दायरे में आता है और न ही यह संयुक्त राष्ट्र के चार्टर का उल्लंघन है। भारत वर्षों से पाक प्रायोजित आतंकवाद से पीड़ित है और इसलिए उसे राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए कठोर कदम उठाने का अधिकार है। भारत जिम्मेदार परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्र है, वह यूं ही किसी को धमकी नहीं देता है।

दिवस विशेष

विवेक शुक्ला

मुस्लिम लीग ने आग में घी डालने का किया था काम

मोहम्मद अली जिन्ना 7 अगस्त, 1947 को दिल्ली के सफदरजंग एयरपोर्ट से कराची के लिए रवाना हो रहे थे। उनके साथ उनकी बहन फातिमा जिन्ना भी थीं। तब यहां सांप्रदायिक दंगे भड़के हुए थे। पर मजाल है कि उन्होंने दिल्ली को हमेशा-हमेशा के लिए छोड़ने से पहले एक बार भी दंगाग्रस्त क्षेत्रों में जाकर शांति बहाली की जरूरत महसूस की हो। हालांकि जिस जिन्ना ने 16 अगस्त 1946 को 'डायरेक्ट एक्शन डे' का आह्वान किया था, उससे इस तरह की उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि वह नफरत की आग को बुझाने का काम करेगा। जिन्ना के आह्वान के चलते कोलकाता में इस दिन शुरू हुई हिंसा में हजारों बेगुनाह लोग मारे गए। इसे 'ग्रेट कलकत्ता किलिंग्स' कहा गया। जिन्ना या मुस्लिम लीग ने खून-खराबे को रोकने की बजाय आग में घी डालने का ही काम किया था। जब कोलकात्ता जल रहा था तब हुसैन शहीद सुहरावर्दी बंगाल के मुख्यमंत्री थे। उन पर आरोप लगे कि उन्होंने पुलिस को निर्देश दे दिए थे कि वह आंखें बंद करके बैठी रहे। इन दंगों में हिंदुओं को विशेष रूप से भारी नुकसान उठाना पड़ा। 16 से 20 अगस्त 1846 तक चली हिंसा में, अनुमानित 10 हजार लोग मारे गए। घायलों का आंकड़ा भी हजारों में था। खैर, सुहरावर्दी आगे चलकर पाकिस्तान के पहले प्रधानमंत्री भी बने। वरिष्ठ लेखक त्रिलोक दीप 1947 के बंटवारे पर बातें करने से बचते हैं। उन्हें बंटवारे ने बहुत गहरे घाव दिये हैं। इसरार करने पर बताने लगते हैं कि "मैं तब दस साल का था और अपने माता-पिता के साथ अगस्त, 1947 से कुछ पहले ही रावलपिंडी से लाहौर होता हुआ लखनऊ पहुंच गया था। रावलपिंडी के हालात लगातार खराब हो रहे थे। इसलिए हमने इंतजार करना मुनासिब नहीं समझा। पर मेरे नाना अमीचंद और नानी भाग्यवती को भीड़ ने उनके गांव में मार दिया था।" ये सब बताते हुए 90 साल के त्रिलोक दीप की आंखें भीगने लगती हैं। भारत के विभाजन को अब एक अरसा गुजर गया है, पर अब भी हमारे आसपास इस तरह के तमाम लोग मौजूद हैं, जिन्होंने उस दौर में हुए दंगों में अपनों को खोया। देश के बंटवारे के कारण लगभग 1.5 करोड़ लोग एक देश से दूसरे में गए। इस दौरान हिंदू-सिख और मुस्लिम समुदायों के बीच भयंकर सांप्रदायिक दंगे हुए। पंजाब, बंगाल और दिल्ली जैसे क्षेत्रों में हिंसा चरम पर थी। स्वीडन में रहने वाले पाकिस्तान मूल के राजनीतिक चिंतक डॉ. इश्तियाक अहमद अपनी किताब में लिखते हैं कि मोहम्मद अली जिन्ना की बयानबाजी ने सांप्रदायिक तनाव को और बढ़ाया। वे कभी साम्प्रदायिक दंगों को रोकने के लिए दंगाइयों के बीच में नहीं गए। दरअसल 1947 में जब विभाजन की प्रक्रिया शुरू हुई, तब पंजाब और बंगाल में हिंसा अपने चरम पर थी। तब जिन्ना का ध्यान मुख्य रूप से सत्ता पर काबिज होना था। उन्होंने 11 अगस्त 1947 को कराची में दिए अपने भाषण में पाकिस्तान को धर्मनिरपेक्ष मुल्क बनाने का वादा किया। वे जब इस तरह का दावा कर रहे थे तब कराची जल रहा था। वहां अल्पसंख्यकों का कत्लेआम होने लगा था। जिन्ना के पास दंगों को रोकने की कोई इच्छाशक्ति नहीं थी। जिन्ना की तरह मुस्लिम लीग में उनके नंबर दो समझे वाले लियाकत अली खान और बाकी नेताओं का भी ध्यान दंगों को रोकने की तरफ नहीं था। वेस्ट दिल्ली के जनकपुरी में सुखो खालसा स्कूल है। प्रख्यात रचनाकार भीष्म साहनी ने अपनी अमर रचना तमस में सुखो का उल्लेख किया है। ये एक छोटी सी तहसील है रावलपिंडी जिले की। पंजाब में महाराजा रणजीत सिंह के राज के दौरान सुखो में अनेक गुरुद्वारे भी बने। सुखो बेहतरीन जगह थी। उसका चरित्र समावेशी था। पर देश के बंटवारे का समय आपसी नफरत का दौर था। जो दोस्त और पड़ोसी सदियों से एक-दूसरे के साथ रह रहे थे, वे भी एक-दूसरे की जान के प्यासे हो गये थे। आजादी के ठीक पहले सांप्रदायिकता की बैसाखियां लगाकर पाशविकता का जो नंगा नाच सुखो में खेला गया था, उसका मार्मिक चित्रण भीष्म साहनी तमस में करते हैं। खैर, जिन्ना के विपरीत, महात्मा गांधी हिंसाग्रस्त क्षेत्रों में जाकर शांति स्थापित करने की कोशिश कर रहे थे। गांधी जी 7 सितंबर 1947 को अंतिम बार कोलकाता से दिल्ली के शाहदरा रेलवे स्टेशन पर उतरते हैं। दिल्ली सांप्रदायिक दंगों के कारण धू-धू करके जल रही थी। गांधी जी दंगा प्रभावित जगहों में गए, सभाएं की और हिंदू, मुस्लिम और सिख समुदायों के बीच सुलह की अपील की। वे इन सब जगहों में दंगाइयों से मुसलमानों को बचा रहे थे। गांधी के अलावा, नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद भी दंगों को रोकने के काम में दिन- रात लगे हुए थे। काश, जिन्ना और मुस्लिम लीग के नेताओं ने भी यही किया होता।

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

विभाजन विभीषिका

बृजमोहन अग्रवाल

निर्मम बंटवारे को भुला नहीं सकते

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने आज़ादी के जश्न के साथ-साथ बंटवारे के असहनीय दर्द को भी याद रखने को काफी अहम समझा और समूचे देश में 14 अगस्त को विभाजन विभीषिका दिवस मनाने का निर्णय लिया। इस साहसिक फैसले के बाद अगर देश की जनता आज़ादी के ठीक एक दिन पहले हुए लोगों के खौफनाक विस्थापन और उससे हुई उनकी निर्मम दुर्गति, उनके रक्त रंजित संघर्ष और बलिदान के बारे में सुन, समझकर देश में मानवता और भाईचारे की मिसाल कायम करती रहे तो यह उस दौरान असमय मारे गए लोगों को हम सब की तरफ़ से एक सच्ची श्रद्धांजलि होगी। भारत का विभाजन अभूतपूर्व मानव विस्थापन और मजबूरी में पलायन की एक दर्दनाक कहानी है।

देश के धार्मिक रूप से हुए बंटवारे के दर्द को कभी भुलाया नहीं जा सकता। नफरत और हिंसा की वजह से हमारे लाखों बहन और भाईयों को इसमें लापता होना पड़ा और अपनी जान तक गंवानी पड़ी। लाखों लोग बेघर हुए, अपनों से बिछड़ते हुए असमय काल का शिकार हो गए। महिलाओं पर हुए नाहक अत्याचार, उनकी अस्मिता का मर्दन, भूख से बिलखते बच्चे और बीमारी में भी वृद्धावस्था में अपने लिए सुरक्षित ठिकाने की तलाश में भटकते वरिष्ठ लोगों को मिले भीषण दंश की पीड़ा का अंदाजा लगाना आज के आधुनिक और अर्थकरी रंग-बिरंगी दुनिया में बहुत कठिन है। आजकल ज्यादातर लोग इतिहास को भूलकर आगे बढ़ने पर विश्वास रखते हैं। ऐसे आधुनिक युग में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने आज़ादी के जश्न के साथ-साथ बंटवारे के असहनीय दर्द को भी याद रखने को काफी अहम समझा और समूचे देश में 14 अगस्त को विभाजन विभीषिका दिवस मनाने का निर्णय लिया।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के इस ऐतिहासिक और साहसिक फैसले के बाद अगर देश की जनता आज़ादी के ठीक एक दिन पहले हुए लोगों के खौफनाक विस्थापन और उससे हुई उनकी निर्मम दुर्गति, उनके रक्त रंजित संघर्ष और बलिदान के बारे में सुन, समझकर देश में मानवता और भाईचारे की मिसाल कायम करती रहे तो य़ह उस दौरान असमय मारे गए लोगों को हम सब की तरफ़ से एक सच्ची श्रद्धांजलि होगी। भारत का विभाजन अभूतपूर्व मानव विस्थापन और मजबूरी में पलायन की एक दर्दनाक कहानी है। यह एक ऐसी कहानी है, जिसमें लाखों लोग अजनबियों के बीच एकदम विपरीत वातावरण में नया आशियाना तलाश रहे थे। विश्वास और धार्मिक आधार पर एक हिंसक विभाजन की कहानी होने के अतिरिक्त यह इस बात की भी कहानी है कि कैसे एक जीवन शैली तथा वर्षों पुराने सह-अस्तित्व के दौर का अचानक और नाटकीय रूप से अंत हो गया। इस विभीषिका में मारे गए लोगों का आंकड़ा अनुमानतः पांच से 10 लाख के बीच है। लॉर्ड माउंटबेटन 31 मई, 1947 को लंदन से सत्ता के हस्तांतरण पर मंजूरी लेकर नई दिल्ली लौटे थे। 2 जून, 1947 की ऐतिहासिक बैठक में विभाजन की योजना पर मोटे तौर पर सहमति बनी थी। भारत के विभाजन का निर्णय एक पूर्व शर्त की तरह था। सामान्य तौर पर इस योजना का व्यापक विरोध हुआ और विशेष रूप से इस विचार का कि भारत जैसे देश का विभाजन धार्मिक आधार पर किया जा रहा था।

ऐसा कहा जाता है कि इस विभाजन के लिए वे ही नेता मानसिक रूप से तैयार थे, जिन्हें इस विभाजन में अपना हित और उज्ज्वल भविष्य दिख रहा था। विभाजन के फलस्वरूप 1.3 करोड़ लोग अपनी जड़ों से उखड़ कर विस्थापित होने के लिए बाध्य कर दिए गए थे। भारत के विभिन्न हिस्सों को दहला देने वाली 1946 और 1947 में हुई सांप्रदायिक हिंसा की व्यापकता और क्रूरता पर विस्तार से लिखा गया है। इस हिंसा की प्रकृति न केवल लोगों के जीवन को नष्ट करने, बल्कि दूसरे समूह की सांस्कृतिक और भौतिक उपस्थिति को भी मिटा देने की थी। यह यथार्थ है कि जिन क्षेत्रों ने इस हिंसा को देखा, उन्होंने उन्हीं समुदायों को सदियों से सह अस्तित्व में रहते देखा था। पंजाब, बिहार, संयुक्त प्रांत और निश्चित रूप से

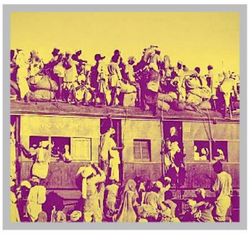

बंगाल कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जहां सह - अस्तित्व जीवन का एक तरीका रहा है। 1947 से पूर्व के पंजाब में एक भी ऐसे गांव की पहचान कठिन होगी, जिस पर किसी खास समुदाय द्वारा विशिष्टता के साथ दावा किया जा सके। यह सब 4 मार्च 1947 को शुरू हुआ। पुलिस ने हिंदुओं और सिखों के एक जुलूस पर, जो बहुत बड़ा नहीं था, गोली चलाई। करीब 125 छात्र गंभीर रूप से घायल हुए थे तथा 10 छात्र, जो सभी डीएवी कॉलेज, लाहौर के थे, मारे गए थे। 6 मार्च की सुबह तक अमृतसर, जालंधर, रावलपिंडी, मुल्तान और सियालकोट समेत पंजाब के मुख्य शहर दंगों की लपटों में घिर गए थे। शरणार्थियों को न केवल सड़क पर हिंसा का सामना करना पड़ा, बल्कि वे सदी की सबसे भीषण बाढ़ में से एक के शिकार भी हुए। इस खतरनाक यात्रा में लोगों को भूख, बीमारी, थकावट और प्रकृति की कठोर परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। उपमहाद्वीप के मूसलाधार मानसून को सहन करते हुए वे गीली दलदली भूमि और भारी संकट से गुजरे। लोग विकट परिस्थितियों से होकर पंजाब पहुंचे थे। विभाजन के दौरान सिन्ध के अल्पसंख्यकों (हिन्दू एवं सिख) को जितनी विकराल एवं भयावह त्रासदी सहनी पड़ी, उसका कटु अनुभव सिन्ध छोड़कर आए लोगों के मन में आज भी जीवन्त है। कराची में हुए भयावह दंगों ने अल्पसंख्यकों को इस हद तक भयभीत कर दिया था कि नवम्बर 1947 तक 2,50,000 लोग, जनवरी 1948 तक 4,78,000 तथा जून 1948 तक 10 लाख से अधिक लोगों को सिन्ध छोड़कर जाना पड़ा। बंटवारे के समय भारत और पाकिस्तान के बीच पलायन करने वाले लोगों ने रेलगाड़ियों का व्यापक रूप से उपयोग किया था। भारत और पाकिस्तान के बीच आपसी परामर्शी रेल सुविधा को जारी रखा गया था। हर दिन 5-6 ट्रेनें दोनों ओर से चलती थीं। ऐसी कई डरावनी कहानियां भी हैं, जिनमें रेलगाड़ियां जब अपने अंतिम गंतव्य स्थान पर पहुंचती तो उनमें केवल लाशें और घायल व्यक्ति ही मौजूद रहते। विभाजन के दौरान महिलाओं को भारी नुकसान उठाना पड़ा। विभाजन एवं उसके आघात का उनका अनुभव पुरुषों से बहुत अलग था। उनका अपहरण और बलात्कार किया गया। बहुतों को अपना धर्म बदलने और उन्हीं पुरुषों से शादी करने के लिए मजबूर किया गया, जिन्होंने शायद उनके परिवार का वध किया हो। भारत सरकार ने 33,000 महिलाओं के अपहरण की सूचना दी, जबकि पाकिस्तान सरकार ने 50,000 महिलाओं के अपहरण का अनुमान लगाया।

सबसे बड़ी संख्या में लोगों ने काफ़िले में पलायन किया। इन काफिलों की लंबाई 10 मील से लेकर 27 मील तक हुआ करती थी, जिनमें हजारों-हज़ार लोगों की तादाद होती थी। ये काफ़िलें विशेष रूप से भीड़ के हमले की चपेट में थे। लोग बिना आश्रय, स्वच्छता, भोजन या पानी के बिना चलते रहे। इस कारण हज़ारों बुजुर्गों और बच्चे थकावट, भुखमरी और बीमारी से मर गए। पाकिस्तान द्वारा सौंपे गए पीड़ितों की संख्या बहुत कम है। दूसरे बहुत कम युवतियों को खोजा गया है। सीमांतप्रांत में युवा लड़कियों को दास के रूप में बेचे जाने की भी जानकारी है। कभी जहां बाज़ार आबाद हुआ करते थे, वहां खंडहर पनाह भी नहीं दे पा रहे थे। छोटे-छोटे बच्चों को गोद में ली हुई माताएं जैसे विभाजनकारी शक्तियों को कोसते जा रहीं थीं। विस्थापित लोगों की ताजातरीन जानकारी लाउड स्पीकर से दी जा रही थी साथ ही लोगों की दयनीय अवस्था का हवाला देते हुए उनके पड़ोसियों और परिजनों को भी लोगों की स्थिति से अवगत कराया जा रहा था। धर्म के आधार पर किसी देश के विभाजन की ऐसी दुःखद त्रासदी दुनिया में इससे पहले कहीं ओर नहीं देखी गई थी। विभाजन की ऐसी त्रासदी के शिकार सभी निर्दोष लोगों को मेरा पुण्य कोटि-कोटि नमन।

(लेखक लोकसभा सांसद भाजपा हैं, ये उनके अपने विचार हैं।

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया **edit@haribhoomi.com** पर दे सकते हैं।

दृष्टिकोण को बनाएं व्यापक

संकलित

दर्शन

हम चाहते हैं कि हमारे बच्चे सब कुछ अच्छा करें। परीक्षाओं और प्रतियोगिताओं में लगातार जीतने की इच्छा उनके लिए जीवन से भी बड़ी हो जाती है। वे विश्वास करने लगते हैं कि हर कीमत पर जीतना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। जब उन्हें अस्वीकृति मिलती है, तब वे नहीं समझ पाते कि उन्हें क्या करना चाहिए। दरअसल, हम उन्हें विशाल दृष्टिकोण नहीं देते, तब जीवन में क्या सबसे महत्वपूर्ण है, इसके विषय में उनकी समझ असंतुलित हो जाती है। विशाल दृष्टिकोण यह है कि जीवन स्वयं में एक बहुत बड़ी परीक्षा है, जिससे होकर आप गुजर रहे हैं। ऐसा मत सोचिए कि परीक्षा में सफल या असफल हो जाने से पूरे जीवन की दिशा निर्धारित हो जाएगी। जो मूल्य एक दूसरे के विपरीत प्रतीत होते हैं, जैसे जीत या हार, सफलता या असफलता, ऊंचा या नीचा, वे वास्तव में एक दूसरे के पूरक हैं। एक मूल्य दूसरे मूल्य के महत्व को बढ़ाता है। एक विशाल आध्यात्मिक दृष्टिकोण के साथ ही युवा बिना अपनी मुस्कान और उत्साह को खोए हुए, जीवन के इन विपरीत मूल्यों की प्रशंसा करना सीख सकते हैं। ऐसी शक्ति, ऐसी मुस्कान, जिसे कोई छीन न सके और ऐसा साहस, जो विपरीत परिस्थितियों का सामना करने में भी समाप्त ना हो, वह सफलता है। युवाओं को स्वयं और समाज के लिए बड़े लक्ष्य और विशाल दृष्टिकोण के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहिए और सेवा को जीवन का एक हिस्सा बनाना चाहिए। ऐसी प्रतिबद्धता आपको बाधाओं के पार ले जा सकती है।

मन का भोजन हमारे विचार

संकलित

प्रेरणा

एक दिन गौतम बुद्ध अपने शिष्यों और अन्य लोगों को उपदेश दे रहे थे। सत्संग में काफी लोग बैठे हुए थे। भीड़ में से एक व्यक्ति उठा और उसने बुद्ध से पूछा कि तथागत मैं जब ध्यान करने बैठता हूं तो मेरा मन ध्यान में नहीं लग पाता है। कृपया बताइए, मैं ध्यान कैसे कर सकता हूं? बुद्ध के साथ ही सत्संग में बैठे हुए लोगों ने भी ये प्रश्न सुना, लेकिन बुद्ध ने उस व्यक्ति से कहा कि कृपया फिर से अपनी बात कहें। उस व्यक्ति ने फिर से कहा कि मेरा मन ध्यान में नहीं लगता है, मैं ध्यान कैसे कर सकता हूं? बुद्ध ने कहा कि एक बार और अपनी बात कहें। उस व्यक्ति ने एक बार और अपनी बात कह दी। बुद्ध ने कहा कि हमारे विचार मन के लिए भोजन हैं। जब तक मन को विचारों का भोजन मिलता रहेगा, हम ध्यान नहीं कर सकते हैं। जब हम ध्यान करने बैठे, तब मन को विचारों का भोजन नहीं देना चाहिए, यानी सोच-विचार करना बंद कर देना चाहिए। तब ही हम ध्यान कर पाएंगे। जब मन विचारों से खाली हो जाएगा, तब ही हम ध्यान कर पाएंगे। बुद्ध ने उस व्यक्ति से ध्यान के बारे में प्रश्न तीन बार पूछा था और बुद्ध ने भी तीन बार इस प्रश्न का उत्तर दिया। बुद्ध ने तीन बार उत्तर दिया तो लोगों ने पूछा कि आपने इस व्यक्ति से तीन बार प्रश्न पूछा और उत्तर भी तीन बार ही दिया, ऐसा क्यों? बुद्ध ने लोगों को समझाया कि मैं इन सज्जन से तीन बार प्रश्न पूछा, क्योंकि मैं प्रश्न के लिए इनकी गंभीरता को परखना चाहता था। जब मुझे लगा कि ये अपने प्रश्न के लिए गंभीर हैं, तब मैंने उत्तर भी तीन बार दिया, ताकि मेरी बात इन्हें अच्छी तरह समझ आ जाए।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

अंतर्मन

आज की पाती

भारत विभाजन की त्रासदी

1947, 14 अगस्त भारत का विभाजन एक अभिशाप था। यह केवल मात्र भारत की आत्मा पर चोट नहीं थी, बल्कि प्रत्येक भारतीय की अखंडता पर चोट थी, लाखों परिवार जो पंजाब-सिंध से नाता रखते थे, एक झटके में बेघर हो गए। इन परिवारों की आत्मा भारत माता के साथ जुड़ी थी। उनकी जमीन पाकिस्तान में जाते हुए पंजाब, सिंध, सियालकोट, गुजरांवाला में रह गई। परदादा, परदादी, दादा, दादियों द्वारा सुनाई गई कहानियों पर वह विभाजन का इतिहास सभी स्मरण करते हैं। वह पंजाब की गलियां, घोड़ा गाड़ियां, रेलवे स्टेशन, ईंटों के घर, आज भी सभी को याद है। विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस एक ऐसा दिन है जब विभाजन के समय हुए सभी अत्याचारों को हम स्मरण करते हैं।

- मनोज जोशी, जगदलपुर

ट्रेंड

कनेक्टिविटी का विस्तार

देशभर में कनेक्टिविटी के विस्तार के लिए हम प्रतिबद्ध हैं। इसी दिशा में हमारी सरकार ने लखनऊ मेट्रो के फेज-1B को मंजूरी दी है। इससे यहां पर्यटन को बढ़ावा मिलने के साथ आर्थिक गतिविधियों में भी तेजी आएगी। इसके साथ ही शहर में लोगों का सफर और सुविधाजनक होगा।

- नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

एसआईआर पर चर्चा हो

बिहार से एसआईआर की शुरुआत की गई है, जो अब पूरे देश में करने जा रहे हैं। हमारी मांग है कि एसआईआर पर चर्चा हो, लेकिन भाजपा सरकार चर्चा से भाग रही है। विपक्ष चाहता है कि सदन चले, लेकिन भाजपा सरकार सदन नहीं चलने दे रही है।

- मल्लिकार्जुन खड़के, कांग्रेस अध्यक्ष

मोदी का करिश्मा नहीं

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का कहीं कोई करिश्मा नही है, ये चुनाव आयोग जैसी संवैधानिक संस्थाओं के बल पर चुनाव जीत रहे है। 2020 में इन्होंने बिहार विधानसभा चुनाव में हमें 12,756 वोट के अंतर से 10 से अधिक सीटें जबरन हराई।

- तेजस्वी यादव, पूर्व डिप्टी सीएम, बिहार

फैसले पर विचार

यह जानकर बहुत खुशी हुई कि मुख्य न्यायाधीश ने एनसीआर में आवारा कुत्तों से संबंधित फैसले पर विचार करने की सहमति दे दी है। कानून पारित करना और उसे लागू करना सबसे पहले मानवीय होना चाहिए।

- रणदीप हुड्डा, अभिनेता

करंट अफेयर

अमेरिका में हिंदू मंदिर की नाम पट्टिका तोड़ी गई

अमेरिका के इंडियाना शहर में एक हिंदू मंदिर के नामपट्ट को विरूपित कर दिया गया जिसे भारतीय वाणिज्य दूतावास ने 'निंदनीय' बताया है। मंदिर के आधिकारिक जनसंपर्क हैंडल ने मंगलवार को 'एक्स' पर एक पोस्ट में बताया कि यह 'घृणित कृत्य'' ग्रीनवुड शहर स्थित बीएपीएस स्वामीनारायण मंदिर में हुआ। इसमें कहा गया है कि एक साल से भी कम समय में यह चौथी बार है जब किसी बीएपीएस मंदिर को निशाना बनाया गया है। शिकागो स्थित भारतीय वाणिज्य दूतावास ने इस कृत्य पर कड़ा संज्ञान लिया और इसे 'निंदनीय' बताया। उसने 'एक्स' पर कहा, 'इंडियाना के ग्रीनवुड स्थित बीएपीएस स्वामीनारायण मंदिर के मुख्य नामपट्ट का अपमान निंदनीय है।' दूतावास ने कहा कि उसने 'शीघ्र कार्रवाई' के लिए कानून प्रवर्तन अधिकारियों के समक्ष यह मामला उठाया है। इसमें कहा गया है कि महावाणिज्य दूत ने ग्रीनवुड के मेयर सहित श्रद्धालुओं और स्थानीय नेतृत्व की एक सभा को भी संबोधित किया और 'वहां एकता एवं एकजुटता तथा उपद्रवियों के विरुद्ध सतर्कता बरतने का आह्वान किया।' मंदिर प्रशासन ने अपने पोस्ट में यह भी कहा कि इस कृत्य ने ' हमारे समुदाय के संकल्प को मजबूत किया है और हम धर्म-विरोधी व्यवहार के विरुद्ध एकजुट हैं।'

ऑफ बीट

दौड़ने से नशे की लत से मिल सकता है छुटकारा

शोध से पता चलता है कि व्यायाम लत से छुटकारा पाने में मदद कर सकता है। यह एक नशामुक्त आनंद है, जो मूड को बेहतर कर सकता है, लालसा (क्रेविंग्स) और मानसिक स्वास्थ्य के लक्षणों को कम कर सकता है, जिससे दोबारा नशे में लौटने से बचाव हो सकता है। हालांकि, अमेरिका में विशेष रूप से नशे से छुटकारा पाने के लिए दौड़ने वाले लोगों के समूह मौजूद हैं, लेकिन अधिकतर शोध नशा-उपचार के दौरान क्लीनिक में ट्रेडमिल पर किए गए हैं। इससे कई सवाल अनुत्तरित रह जाते हैं जैसे लोग समय के साथ लत से उबरने की अपनी प्रक्रिया में दौड़ का उपयोग कैसे करते हैं, इससे किसे लाभ होता है और क्यों। हम यह समझना चाहते थे कि दौड़ने से लोगों को नशीले पदार्थ या शराब के इस्तेमाल से नशामुक्त जीवन की ओर बढ़ने में कैसे मदद मिलती है।अधिकांश लोगों ने शराब को नशे का मुख्य स्रोत बताया। नतीजे बताते हैं कि नशीले पदार्थ या शराब के इर्द-गिर्द सिमटा जीवन धीरे-धीरे दौड़ने से व्यवस्थित हो गया। शुरुआत में ज्यादातर प्रतिभागी वजन घटाने के लक्ष्यों से प्रेरित थे, न कि स्वास्थ्य लाभ से। वे दौड़ने की तैयारी के दौरान भी मादक पदार्थों का सेवन करते रहे, कभी-कभी लंबी दौड़ शुरू करने से पहले थोड़ी शराब पी लेते थे।

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से **hbcgpati@gmail.com** पर भेज सकते हैं।

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 153

समय पर समाधान जरूरी

केंद्रीय वित्त एवं कॉरपोरेट कार्य मंत्री निर्मला सीतारमण ने मंगलवार को लोक सभा में दिवाला एवं ऋण शोधन अक्षमता संहिता (संशोधन) विधेयक, 2025 प्रस्तुत किया। इस संशोधन विधेयक से दिवाला एवं ऋण शोधन अक्षमता संहिता (आईबीसी) में सुधार का मार्ग प्रशस्त हो जाएगा। यह विधेयक चर्चा के लिए संसद की प्रवर समिति को भेजा गया है। यह सातवां मौका है जब आईबीसी में संशोधन हो रहा है। पिछले कुछ समय से इस विधेयक का इंतजार हो रहा था। विभिन्न पक्षों एवं नीति विश्लेषकों ने समाधान प्रक्रियाओं के लंबे समय तक खिंचने और उम्मीदों पर खरा नहीं उतरने के लिए आईबीसी की आलोचना की है। हाल में जिस मामले का जून 2025 के अंत तक समाधान निकल कर आया उसमें औसतन 602 दिन लग गए। हाल में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बाद पूरी आईबीसी प्रक्रिया पर प्रश्न चिह्न खड़ा हो गया था। न्यायालय ने अपने उक्त आदेश में एक समाधान योजना खारिज कर दी थी और निगमित कर्जधारक के परिसमापन का आदेश दिया था। हालांकि, अच्छी बात यह रही कि यह आदेश वापस ले लिया गया है और अब मामले पर दोबारा सुनवाई हो रही है। दिवालिया प्रक्रिया का मकसद मामलों का त्वरित समाधान करना और परिसंपत्तियों का मूल्य ह्रास रोकना है। समाधान निकालने में देरी से परिसंपत्तियों का मूल्यांकन कम हो जाता है जिससे न केवल ऋणदाता प्रभावित होते हैं बल्कि संपूर्ण अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता पर असर होता है। हालांकि, सरकार की इस बात के लिए सराहना की जानी चाहिए कि वह आईबीसी में लगातार सुधार के लिए प्रयासरत रही है और नवीनतम विधेयक उपयुक्त दिशा में उठाया गया कदम है। इस विधेयक का मकसद आईबीसी में सुधार कर मामलों का समय पर निपटारा करना है। संशोधन विधेयक में जिन प्रमुख बातों की चर्चा है उनमें ऋणदाता की पहल पर शुरू होने वाली ऋण शोधन अक्षमता समाधान प्रक्रिया भी एक है। इसमें न्यायालय से बाहर मामलों के त्वरित एवं कम खर्च पर समाधान करने का भी प्रावधान है। इस प्रक्रिया का मकसद इस पर भी ध्यान देना है कि कारोबार को कोई व्यवधान न पहुंचे या यह कम से कम रहे।

स्पष्ट है कि संशोधन विधेयक का लक्ष्य न्यायिक प्रक्रिया पर दबाव कम करना है। आईबीसी में संशोधन के बाद न्यायिक प्रक्रिया 150 दिनों में पूरा हो जाने की उम्मीद है। न्याय निर्णयन प्राधिकरण आवश्यकता पड़ने पर समाधान प्रक्रिया अधिकतम 45 दिनों के लिए बढ़ा सकता है। लोक सभा में पेश इस संशोधन विधेयक में समूह ऋण शोधन अक्षमता एवं सीमा पार ऋण शोधन अक्षमता के लिए भी प्रावधानों का उल्लेख किया गया है। समूह ऋण शोधन अक्षमता प्रक्रिया का उद्देश्य पेचीदा ऋण शोधन अक्षमता का सामना करने वाली जटिल कंपनी समूह संरचनाओं से निपटना है। इससे एक साझा पीठ गठित करने और ऋण शोधन अक्षमता प्रक्रिया में समन्वय स्थापित करने में मदद मिलेगी जिससे समाधान में लगने वाला समय कम हो जाएगा और समय रहते ठोस नतीजे मिल जाएंगे। सीमा पार ऋण शोधन अक्षमता ढांचे का मकसद भारत और किसी अन्य देश में कार्यवाही के दौरान अंशधारकों के हितों की रक्षा करना है। सरकार इस संबंध में नियम तैयार करेगी। इस विधेयक में वित्तीय ऋणदाता की तरफ से शुरू ऋण शोधन प्रक्रिया से संबंधित प्रावधान में संशोधन का प्रस्ताव है। ऋण नहीं चुकाने की बात साबित होने और प्रक्रियात्मक आवश्यकताएं पूरी होने पर न्याय निर्णयन प्राधिकरण को अनिवार्य रूप से आवेदन स्वीकार करना होगा। जिन आवेदनों में प्रावधान में वर्णित सभी शर्तें पूरी की जा चुकी हैं उनमें न्याय निर्णयन प्राधिकरण आवेदन अस्वीकार करने के लिए किसी अन्य कारण पर विचार नहीं कर पाएगा। प्राधिकरण को 14 दिनों के भीतर आवेदन पर निर्णय लेना होगा या देरी के लिए कारण बताने होंगे। इससे समय रहते मामलों पर सुनवाई शुरू होने के साथ ही समय पर उनके समाधान भी आने में भी मदद मिलेगी।

कानून में सुधार एवं विभिन्न प्रावधान मजबूत करने से आईबीसी से ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद है। किंतु, एक अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू पर भी ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। समाधान प्रक्रिया में देरी होने के कई कारण हैं जिनमें राष्ट्रीय कंपनी विधि पंचाट और राष्ट्रीय कंपनी विधि अपील पंचाट में मानव संसाधनों की कमी भी एक है। जब तक इन दोनों संस्थाओं में पर्याप्त मानव संसाधन सुनिश्चित नहीं किए जाएंगे तब तक मामलों के समाधान में देरी से निजात नहीं मिल पाएगी। कानून में सुधार अवश्य किया जाना चाहिए लेकिन सरकार को इन संस्थाओं में पर्याप्त क्षमता सुनिश्चित करने पर भी ध्यान देना चाहिए। प्रवर समिति को भी इस विषय पर अवश्य विचार करना चाहिए।

शुल्क युद्ध में ट्रंप को मिल रही सफलता?

ट्रंप के टैरिफ से राजस्व बढ़ रहा है, अमेरिकी उद्योगों को सुरक्षा मिल रही है और बाजार भी स्थिर है। बता रहे हैं टीटी राम मोहन

अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने हाल ही में कुछ देशों पर सख्ती बरतते हुए ऊंचे आयात शुल्क (टैरिफ) लगाए हैं, जिससे भारत भी प्रभावित हुआ है। भारत पर 25 फीसदी का टैरिफ लगाया गया है और रूस से तेल आयात करने पर 25 फीसदी का अतिरिक्त जुर्माना भी भरना पड़ेगा। इसके बाद अमेरिका, भारतीय दवा कंपनियों के निर्यात पर भी बड़ा शुल्क लगाने की तैयारी में है, जिससे इन कंपनियों को बड़ा नुकसान हो सकता है।

इन शुल्कों का असर केवल भारत पर ही नहीं हुआ है। लगभग 70 देशों को इन शुल्कों का सामना करना पड़ रहा है, जिसमें 10 फीसदी का सार्वभौमिक या बुनियादी शुल्क (यूनिवर्सल टैरिफ) भी शामिल है। ट्रंप इन टैरिफ का इस्तेमाल सिर्फ अमेरिका का व्यापार घाटा कम करने के लिए नहीं कर रहे हैं बल्कि इनका इस्तेमाल राजनीतिक या निजी वजहों से भी कर रहे हैं।

भारत पर 25 फीसदी शुल्क लगाने के बाद, ट्रंप ने भारत को 'मृत अर्थव्यवस्था' कहकर और भी अपमानित किया। उन्होंने पाकिस्तान के साथ तेल भंडार की खोज के लिए एक समझौते का भी जिक्र किया और ऐसे संकेत दिए कि भविष्य में पाकिस्तान भारत को तेल बेच सकता है, जो भारत पर कसा गया एक तंज था।

सिर्फ भारत ही नहीं बल्कि कई और देश भी ट्रंप की इन मनमानी कार्रवाइयों का शिकार हुए हैं। कनाडा पर 35 फीसदी का शुल्क लगाया गया है क्योंकि वह फेंटानिल और अन्य दवाओं की आपूर्ति रोकने में नाकाम रहा है। ट्रंप ने यह भी साफ कर दिया कि कनाडा का फिलिस्तीन को एक राष्ट्र के रूप में मान्यता देने का फैसला भी उन्हें पसंद नहीं आया।

स्विट्जरलैंड पर 39 फीसदी का टैरिफ लगाया गया है जो किसी भी यूरोपीय देश पर सबसे ज्यादा टैरिफ है। ट्रंप इस बात से नाराज हैं कि स्विट्जरलैंड की दवा कंपनियां अमेरिका को दवाएं महंगी बेचती हैं। वहीं दूसरी ओर दक्षिण अफ्रीका के निर्यात पर 30 फीसदी का शुल्क लगाया गया है क्योंकि ट्रंप वहां 'गोरों के खिलाफ नरसंहार' होने का दावा करते हैं। ब्राजील के निर्यात पर भी 50 फीसदी का शुल्क लगाया गया है, जो भारत के बराबर है। दरअसल ट्रंप मानते हैं कि उनके दोस्त और ब्राजील के पूर्व राष्ट्रपति जेयर बोल्सोनारो पर राजनीतिक कारणों से गलत मुकदमा चलाया जा रहा है।

भले ही ट्रंप के इन मनमाने तरीकों से हर जगह लोग नाराज हैं और उनके फैसलों पर टीका-टिप्पणी कर रहे हैं लेकिन हकीकत यह है कि ट्रंप इस टैरिफ की लड़ाई में जीत रहे हैं। जब उन्होंने 'बराबरी का शुल्क' लगाने की घोषणा की थी तब विश्लेषकों ने अनुमान लगाया था कि दूसरे देश भी अमेरिका के निर्यात पर शुल्क लगाकर जवाबी कार्रवाई करेंगे, जिससे व्यापार युद्ध शुरू हो जाएगा और 1930 के स्मूट-हॉले टैरिफ की तरह सबका नुकसान होगा, जिसके कारण महामंदी की स्थिति बनी थी।

लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ है। ब्रिटेन, जापान, वियतनाम, दक्षिण कोरिया, इंडोनेशिया और फिलिपींस जैसे देशों ने ट्रंप की बात मान ली और एकतरफा व्यापार समझौते कर लिए हैं। यहां तक कि सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के लिहाज से दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था यूरोपीय संघ (ईयू) ने भी अपने हाथ खड़े कर लिए।

ईयू की प्रमुख उर्सुला वॉन डेर लेयेन, ट्रंप के स्कॉटलैंड स्थित गोल्फ कोर्स पर उनसे मिलने गईं ताकि कोई व्यापार समझौता हो सके। ट्रंप ने उन्हें तब तक इंतजार करवाया जब तक उन्होंने और उनके बेटे ने गोल्फ का दूसरा राउंड खत्म नहीं कर लिया। इसके बाद, उन्होंने लेयेन को अपने आलीशान घर का दौरा करवाया और अपने बॉल रूम की शान-शौकत के बारे में शेखी बघारी। लेयेन ने ट्रंप की तारीफ करते हुए कहा, 'आप एक सख्त वार्ताकार लेकिन बातचीत को सफलता की ओर ले जाने वाले व्यक्ति हैं।' ट्रंप ने कहा, 'लेकिन मैं न्यायपूर्ण तरीके से यह सब करता हूं।' इस पर लेयेन ने भी सहमति जताई।

इसके बाद अमेरिका-ईयू व्यापार समझौते की घोषणा हुई। इस करार के तहत, ईयू से अमेरिका को निर्यात होने वाले सामानों पर 15 फीसदी का टैरिफ लगेगा जबकि ईयू अमेरिका से आने वाले औद्योगिक सामानों पर सभी टैरिफ हटा लेगा। हालांकि, ईयू से अमेरिका जाने वाले स्टील, एल्युमीनियम और तांबे पर 50 फीसदी का टैरिफ बना रहेगा। इसके अलावा, ईयू ने अगले तीन वर्षों में अमेरिका से 750 अरब डॉलर की ऊर्जा खरीद करने और राष्ट्रपति ट्रंप के कार्यकाल में अमेरिका में 600 अरब डॉलर का निवेश करने का वादा किया है। दूसरे विश्व युद्ध की शब्दावली में कहें तो यह एक 'बिना शर्त वाला समर्पण' है।

ट्रंप के आलोचकों ने उनके संरक्षणवाद की नीति के भयानक परिणामों के प्रति चेतावनी दी थी। उन्होंने कहा था कि अमेरिका में महंगाई बढ़ेगी, विकास दर कम होगी और शेयर तथा बॉन्ड बाजार में गिरावट देखी जाएगी। साथ ही, वैश्विक अर्थव्यवस्था भी ध्वस्त हो जाएगी।

लेकिन इनमें से कोई भी भविष्यवाणी सच नहीं हुई। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) ने जुलाई 2025 में अपने वैश्विक अर्थव्यवस्था के अपडेट में इस वर्ष के लिए वृद्धि दर का अनुमान अप्रैल 2025के अनुमान से 0.2 फीसदी अंक बढ़ाकर 3 फीसदी कर दिया है। यह वही दर है जिस पर 2011 से वैश्विक अर्थव्यवस्था बढ़ रही है। जहां तक अमेरिकी अर्थव्यवस्था में वृद्धि की बात है, तो आईएमएफ ने अप्रैल के 1.5 फीसदी के अनुमान से इसे बढ़ाकर 1.9 फीसदी कर दिया है। इससे तो ऐसा बिल्कुल नहीं लगता कि ट्रंप की नीतियों से अमेरिकी अर्थव्यवस्था को कोई नुकसान हो रहा है।

अमेरिकी शेयर बाजार पिछले पांच साल के रिकॉर्ड स्तर के करीब है। सरकारी बॉन्ड पर मिलने वाली यील्ड जनवरी 2025 की तुलना में कम है जब ट्रंप ने पद संभाला था, और यह 2023 तथा 2024 के बॉन्ड यील्ड के अनुरूप है। इसके अलावा जून में मुद्रास्फीति बढ़कर 2.7 फीसदी हो गई जो कि उतनी परेशानी वाली बात नहीं है जितना अनुमान लगाया गया था।

अब विश्लेषक हमें यह समझाने की कोशिश कर रहे हैं कि चीजें इतनी अलग क्यों हैं। मुद्रास्फीति कम क्यों है? उनका कहना है कि अमेरिकी आयातकों ने ऊंचे टैरिफ के डर से पहले ही बहुत सारा सामान जमा कर लिया था इसलिए टैरिफ बढ़ने का असर अभी मुद्रास्फीति पर नहीं हुआ है। यह बात मौजूदा मुद्रास्फीति के लिए सही हो सकती है, लेकिन सवाल यह है कि फॉरवर्ड लुकिंग बॉन्ड के लिए यील्ड क्यों नहीं बढ़ी? ट्रंप के आलोचक जानबूझकर मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने में तेल कीमतों की भूमिका को नजरअंदाज कर रहे हैं। ब्रेंट क्रूड तेल की कीमतें, एक साल पहले की तुलना में कम से कम 8 डॉलर कम हैं और ट्रंप इन्हें और भी नीचे लाना चाहते हैं।

इसके अलावा एक सवाल यह भी है कि वित्तीय बाजार में हलचल क्यों नहीं हुई? इसकी वजह यह है कि बाजारों ने बहुत ऊंचे टैरिफ की उम्मीद की थी और अब जो टैरिफ का स्तर तय हुआ है, उससे उन्हें राहत मिली है। लेकिन अभी का शुल्क स्तर ट्रंप के पद संभालने से पहले के स्तर से सात गुना ज्यादा है! शेयर कीमतें इतनी ऊंची क्यों हैं? इसका कारण आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) को लेकर मची होड़ है। लेकिन एआई के बारे में इस होड़ के बारे में तब भी पता था जब विश्लेषक हमें आगाह कर रहे थे कि ट्रंप शुल्क से शेयर की कीमतों में भारी गिरावट आएगी।

'द इकॉनमिस्ट' पत्रिका ने ट्रंप की नीतियों की कड़ी आलोचना की थी और इनके खराब नतीजों की चेतावनी दी थी। अब जब वैसी कोई खतरनाक स्थिति नहीं देखी गई है तब इसके लिए उसने एक नया स्पष्टीकरण पेश किया है।

पत्रिका का तर्क है कि आज वैश्विक अर्थव्यवस्था में झटकों को सहने की क्षमता बेहतर है और इसके कई कारण हैं। आपूर्ति श्रृंखला पहले से ज्यादा कुशल और मजबूत हो गई हैं। तेल की कीमतों में बदलाव का असर अब कम होता है क्योंकि ऊर्जा के कई और स्रोत उपलब्ध हैं। कंपनियां झटकों से निपटना सीख गई हैं, सेवा क्षेत्र औद्योगिक क्षेत्र की तुलना में झटकों के प्रति कम संवेदनशील है और सरकारें भी अर्थव्यवस्था को झटकों से बचाने के लिए तुरंत कदम उठाती हैं। यानी, पूंजीवाद ने एक ऐसी लचीली अर्थव्यवस्था तैयार की है जिस पर कुछ ज्यादा असर नहीं होता है। यह विश्लेषण दरअसल एक सवाल खड़ा करता है, अगर वैश्विक अर्थव्यवस्था इतनी लचीली है, तब इकॉनमिस्ट ने ट्रंप की नीतियों के नकारात्मक प्रभावों के बारे में इतनी चिंता क्यों जताई थी?

जहां तक ट्रंप का सवाल है, उनके टैरिफ से सरकार को ज्यादा राजस्व मिल रहा है, और अमेरिकी उद्योगों को संरक्षण मिल रहा है। साथ ही विदेशी कंपनियां अमेरिका में निवेश करने के साथ ही उत्पादन भी कर रही हैं। यह सब वित्तीय बाजारों को अस्थिर किए बिना हो रहा है। ऐसे में कोई हैरानी नहीं कि ट्रंप पर आलोचनाओं का कोई असर नहीं हो रहा है। ट्रंप खुद को एक विजेता मानते हैं, शिकायत करने वाला नहीं और यह कोई छोटी बात नहीं है।

सूचीबद्धता को लेकर पसोपेश, नेतृत्व की उलझनें

सामयिक सवाल

निवेदिता मुखर्जी

टाटा संस के सबसे बड़े शेयरधारक, टाटा ट्रस्ट्स ने हाल ही में कार्यकारी अध्यक्ष एन. चंद्रशेखरन (जो चंद्रा के नाम से मशहूर हैं) का कार्यकाल पांच साल के लिए और बढ़ाने का प्रस्ताव पारित किया। इस खबर ने दुनिया का ध्यान खींचा। इसके कई कारण हैं। पहला कारण जिसने उद्योग विशेषज्ञों को हैरान किया, वह था इस प्रस्ताव को पारित करने का समय। चंद्रा का दूसरा कार्यकाल फरवरी 2027 तक है जिसमें अभी 18 महीने का वक्त है। स्टील से सॉफ्टवेयर तक फैले इस समूह की होल्डिंग कंपनी में लगभग 66 फीसदी हिस्सेदारी रखने वाले टाटा ट्रस्ट ने इस मामले में इतनी जल्दी और इतने समय पहले क्यों गंभीरता से विचार किया?

वर्ष 2022 में, चंद्रा को जब टाटा संस के कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में दूसरा कार्यकाल मिला था तब क्या ऐसा कुछ हुआ था? बिल्कुल नहीं। 11 फरवरी, 2022 को टाटा संस के निदेशक मंडल ने कथित तौर पर उनके पहले पांच साल के कार्यकाल की समीक्षा की और फिर अगले कार्यकाल के लिए उन्हें फिर से नियुक्त कर दिया।

रतन टाटा उस समय टाटा ट्रस्ट्स के अध्यक्ष और टाटा समूह के मानद अध्यक्ष थे। उस वक्त टाटा संस की बोर्ड बैठक में उन्हें विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था और उन्होंने चंद्रा के कार्यकाल में पांच साल का विस्तार करने की सिफारिश की थी। यह घटना, चंद्रा के पहले कार्यकाल के खत्म होने से सिर्फ 10 दिन पहले हुई थी। ये सारी बातें सामान्य प्रक्रिया जैसी लग रही थीं। उस समय चंद्रा की पुनर्नियुक्ति से पहले टाटा ट्रस्ट का कोई प्रस्ताव नहीं आया था।

फरवरी 2017 में एन. चंद्रशेखरन के टाटा संस के चेयरमैन बनने से पहले साइरस मिस्त्री इस पद पर थे लेकिन उनके कार्यकाल में विस्तार करने का मौका ही नहीं आया। अक्टूबर 2016 में कथित रूप से भरोसे और प्रदर्शन से जुड़े मसलों को लेकर मिस्त्री को, टाटा संस के चेयरमैन पद से हटा दिया गया था।

मिस्त्री को हटाने के बाद, टाटा संस के बोर्ड ने रतन टाटा को अंतरिम गैर-कार्यकारी अध्यक्ष नियुक्त किया, जबकि अगले कार्यकारी अध्यक्ष की तलाश के लिए एक समिति बनाई गई। हालांकि बाद में कंपनी के आतंरिक उम्मीदवार चंद्रशेखरन को टाटा संस का शीर्ष नेतृत्व करने के लिए चुना गया जो टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज (टीसीएस) के मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) थे।

मिस्त्री से पहले, रतन टाटा 1991 से 2012 तक 21 साल तक टाटा संस के चेयरमैन रहे। लेकिन वह 75 साल की उम्र में इस पद से हट गए। रतन टाटा असल में टाटा संस और टाटा ट्रस्ट्स दोनों के अध्यक्ष थे, ऐसे में यह आखिरी बार था जब एक ही व्यक्ति ने यह दोहरी भूमिका निभाई। टाटा ट्रस्ट्स की तरफ से भी शीर्ष पद पर नियुक्ति या पुनर्नियुक्ति के लिए किसी प्रस्ताव की जरूरत नहीं पड़ी। जेआरडी टाटा के मामले में भी यही स्थिति थी। वह 1938 में नौरोजी सकलतवाला के बाद टाटा समूह के प्रमुख बने और अगले 53 साल तक इस पद पर रहे।

अब हम इस विषय पर फिर से वापस आते हैं कि टाटा ट्रस्ट्स द्वारा टाटा संस के अध्यक्ष का कार्यकाल बढ़ाने के हालिया प्रस्ताव का क्या महत्त्व है? प्रक्रिया के मुताबिक, इस प्रस्ताव को, मंजूरी के लिए टाटा संस के बोर्ड के सामने रखा जाएगा। हालांकि ऐसे किसी प्रस्ताव के बिना भी टाटा संस अपने समूह के नेतृत्व के बारे में फैसला लेता ही। आमतौर पर, पेशेवर तरीके से चलाई जाने वाली कंपनियों में जब किसी नेतृत्वकर्ता का कार्यकाल खत्म होने वाला होता है, तब तीन विकल्प होते हैं: अगर नियमों की अनुमति हो तब मौजूदा नेतृत्वकर्ता का कार्यकाल बढ़ाना, अगले नेतृत्वकर्ता की तलाश करने के लिए एक समिति बनाना या शीर्ष पद के लिए किसी आंतरिक उम्मीदवार का चुनाव करना।

लेकिन यह मामला सिर्फ नियुक्ति या दोबारा नियुक्ति की प्रक्रिया के बारे में नहीं है। इस मामले में टाटा संस के सबसे बड़े शेयरधारक, टाटा ट्रस्ट्स ने आंतरिक स्तर पर और बाहरी स्तर पर यह संदेश भेजा है कि वह मौजूदा चेयरमैन के नेतृत्व का समर्थन करता है। निश्चित रूप से सबसे बड़े शेयरधारक के तौर पर, टाटा ट्रस्ट्स की राय की अनदेखी नहीं की जा सकती है।

चूंकि टाटा ट्रस्ट्स ने उसी बैठक में एक और अहम मामले पर प्रस्ताव पारित किया है, तो स्थिति थोड़ी जटिल दिखती है। प्रस्ताव के अनुसार, टाटा ट्रस्ट्स चाहता है कि अध्यक्ष चंद्रा और टाटा संस का बोर्ड दो काम करे- पहला, टाटा संस के दूसरे सबसे बड़े शेयरधारक के तौर पर शापूरजी पालोनजी समूह की हिस्सेदारी खत्म करने की दिशा में काम करे। दूसरा, भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) से बात करके टाटा संस को सार्वजनिक सूचीबद्धता की अनिवार्यता से बाहर रखा जाए। अहम बात यह है कि सितंबर 2022 में आरबीआई ने टाटा संस को एक ऊपरी-श्रेणी की गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी घोषित की थी। इस वर्गीकरण के तहत टाटा संस के लिए तीन साल के भीतर शेयर बाजार में सूचीबद्धता कराना अनिवार्य है। आरबीआई के पास टाटा संस का यह अनुरोध लंबित है, जिसमें उसने ऊपरी-श्रेणी की मुख्य निवेश कंपनी के वर्गीकरण में बदलाव की मांग की है।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

टाटा संस की सूचीबद्धता से जुड़ी आरबीआई की समयसीमा अब करीब आ रही है ऐसे में उद्योग के जानकार टाटा ट्रस्ट्स के प्रस्ताव में शामिल तीनों बिंदुओं को एक साथ जोड़कर देख सकते हैं। इसका मतलब यह हो सकता है कि सबसे बड़े शेयरधारक, सिर्फ मौजूदा अध्यक्ष का कार्यकाल बढ़ाने की बात नहीं कर रहे, बल्कि इसके साथ दो और शर्तें जोड़ रहे हैं, जिसमें शापूरजी पलोनजी समूह की हिस्सेदारी बेचना और टाटा संस को प्राइवेट कंपनी बनाए रखने की बात शामिल है। ये शर्तें समूह के नेतृत्व की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम मानी जा सकती हैं।

रतन टाटा के बाद के दौर में, नोएल टाटा (टाटा ट्रस्ट्स के अध्यक्ष) और टाटा संस के बीच संबंधों को लेकर उत्सुकता बनी हुई है। सवाल यह है कि क्या सबसे बड़ा शेयरधारक समान बात कह रहा है? अगर ऐसा है और नोएल टाटा को ट्रस्ट के लोगों का पूरा समर्थन मिल रहा है तब इसका व्यापक अर्थ यह है कि टाटा समूह की नीतियों की निरंतरता बनी रहेगी। लेकिन अगर ऐसा नहीं है, तो हो सकता है कि टाटा ट्रस्ट के भीतर नियंत्रण की बात और परोपकारिता के पहलू के बीच कुछ पक रहा हो। परोपकारिता टाटा ट्रस्ट्स का मुख्य उद्देश्य रहा है और यही रहना चाहिए।

आपका पक्ष

अमेरिका पर निर्भरता घटाने की जरूरत

सरकार ने ट्रंप शुल्क चुनौती से निपटने के लिए बहुआयामी रणनीति पर काम शुरू कर दिया है। भारत ने नए बाजार की तलाश के लिए रूस, चीन, यूरोप, खाड़ी देशों और अफ्रीका के साथ व्यापारिक संपर्क तेज कर दिया है, ताकि अमेरिका पर निर्भरता घटे। उत्पादन लागत में कमी करने के लिए घरेलू उद्योगों को बिजली, परिवहन और कच्चे माल में राहत देकर अंतर-राष्ट्रीय बाजार में प्रतिस्पर्धा बनाए रखने पर ध्यान देना होगा। अमेरिका के साथ टैरिफ छूट या विशेष व्यापार समझौते के लिए उच्चस्तरीय वार्ता शुरू करनी चाहिए। ट्रंप शुल्क से प्रभावित किसानों और निर्यातकों के लिए सरकारी खरीद, सब्सिडी और आसान ऋण की सुविधा बढ़ानी होगी। साथ ही आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने आयात-प्रतिस्थापन और वैल्यू-एडेड उत्पादों का घरेलू उत्पादन बढ़ाना चाहिए।

विकास कुमार शर्मा, महराजगंज

ट्रंप शुल्क से प्रभावित निर्यातकों के लिए सरकारी खरीद, सब्सिडी और आसान ऋण की सुविधा बढ़ानी होगी

भारत को तलाशने होंगे नए व्यापारिक साझेदार

भारत को आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए कई देशों के साथ जुड़कर और नए व्यापारिक साझेदारों की तलाश करके व्यापार विविधीकरण को आगे बढ़ाना चाहिए। साथ ही छोटे और बड़े दोनों तरह के उद्योगों को प्रोत्साहन और सहायता प्रदान करके स्थानीय विनिर्माण को मजबूत करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इससे 'मेक इन इंडिया' पहल और 'स्वदेशी' भावना की एक नई लहर को बढ़ावा मिलेगा जिसका उद्देश्य भारत को उच्च तकनीक विनिर्माण में अग्रणी बनाना होगा।

दीपक कौशल, लखनऊ

तत्काल निगरानी की आवश्यकता

देश में औद्योगीकरण की तेज रफ्तार के बीच जल निकासी और सीवरेज प्रबंधन की स्थिति लगातार चिंता का विषय बनी हुई है। मैनहोल की सफाई के दौरान श्रमिकों की मौत जैसी घटनाएं यह दर्शाती हैं कि बुनियादी ढांचा सुधार के दावों के बावजूद सुरक्षा मानकों और तकनीकी उपकरणों का अभाव गंभीर है। अधिकांश नगर निकाय अभी भी मैनुअल स्कैवेंजिंग जैसी पुरानी और खतरनाक पद्धतियों पर निर्भर हैं, जो न केवल मानवीय गरिमा के खिलाफ है बल्कि कानूनी रूप से भी प्रतिबंधित है। तकनीकी दृष्टि से देखा जाए तो स्वचालित मशीनों और रोबोटिक उपकरणों का उपयोग, ऑक्सीजन सेंसर, गैस डिटेक्टर और सुरक्षा प्रशिक्षण जैसे उपाय इन हादसों को लगभग समाप्त कर सकते हैं। लेकिन समस्या केवल संसाधनों की कमी नहीं, बल्कि प्रशासनिक लापरवाही और जवाबदेही की अनुपस्थिति भी है। कई बार उपकरण उपलब्ध होने के बावजूद उनका उपयोग नहीं किया जाता है। वहीं ठेकेदारी प्रथा में सुरक्षा प्रोटोकॉल के अनुपालन की निगरानी बेहद कमजोर है। अगर नगर निकाय और ठेकेदारों पर कानूनी और आर्थिक दंड को सख्ती से लागू किया जाए तो लापरवाही कम की जी सकती है। भारत को तकनीकी समाधान, कानूनी प्रवर्तन और सामाजिक जागरूकता इन तीनों को समान महत्त्व देकर इससे मुक्ति मिल सकती है।

अवनीश कुमार गुप्ता, प्रयागराज

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

नई दिल्ली स्थित लाल किला के परिसर में 79वें स्वतंत्रता दिवस समारोह के लिए बुधवार को पूर्ण अभ्यास किया गया। इसमें कई स्कूलों के छात्र-छात्राओं ने हिस्सा लिया।

दैनिक जागरण

अनुकरणीय आचरण से ही प्रतिष्ठा प्राप्त होती है

मतदाता हितैषी प्रक्रिया

यह संतोषजनक है कि सुप्रीम कोर्ट ने बिहार में मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआइआर मामले की सुनवाई करते हुए यह तो कहा कि यह मतदाता हितैषी प्रक्रिया है, लेकिन आखिर वह कब तक इस मामले को सुनेगा? इस मामले का पटाक्षेप किया जाना चाहिए ताकि कुछ विपक्षी दल इस पर सस्ती राजनीति करने से बाज आएं। वे मतदाता सूची के सत्यापन की प्रक्रिया को लेकर आसमान सिर पर उठाए हैं और यह जताने में लगे हुए हैं कि इसके जरिये चुनाव आयोग बिहार में कुछ खास मतदाताओं को जानबूझकर मतदान से वंचित करने की साजिश कर रहा है, ताकि भाजपा को चुनावी लाभ मिल सके। इस आरोप पर जोर देने के लिए कांग्रेस नेता राहुल गांधी यह भी कहने में लगे हुए हैं कि लोकसभा के पिछले चुनाव में वोट की चोरी हुई थी। यदि ऐसा है तो कांग्रेस को 99 सीटें कैसे मिलीं और भाजपा 240 पर क्यों सिमटी? क्या कोई राहुल गांधी को यह बताएगा कि आप नेता विपक्ष 99 सीटों के कारण ही बन सके? इसकी भी अनदेखी न की जाए कि बिहार में मतदाता सूची के सत्यापन की प्रक्रिया का विरोध तो जोर-शोर से किया जा रहा है, लेकिन चुनाव आयोग के एक सही और आवश्यक काम में विपक्षी दल किसी तरह का सहयोग करने और यहां तक कि अपनी उचित आपत्तियां दर्ज कराने से इन्कार कर रहे हैं। क्या यह उनका दायित्व नहीं बनता कि मतदाता सूची के सत्यापन की प्रक्रिया को यथासंभव दुरुस्त करने में अपने हिस्से की जिम्मेदारी निभाएं?

यह हैरानी की बात है कि बिहार की मतदाता सूची का पहला प्रारूप जारी किए जाने के 13 दिन बाद भी किसी भी राजनीतिक दल ने चुनाव आयोग के सामने अपनी लिखित आपत्ति दर्ज नहीं कराई है। इसके बजाय वे अपने आरोपों को तूल देने के लिए चुनाव आयोग की छोटी-छोटी गलतियों पर हायतौबा मचाने में लगे हुए हैं। इसे ही तिल का ताड़ बनाना कहते हैं। क्या देश में कोई ऐसी प्रक्रिया रही है, जिसमें किसी तरह की विसंगति या गड़बड़ी न होती हो। क्या जब कांग्रेस ने अपने कार्यकाल में आधार लागू किया था तो सब कुछ सही तरीके से हुआ था? क्या फोटो मतदाता पहचान पत्र शुरू करते समय चुनाव आयोग से कहीं कोई गलतियां नहीं हुई थीं? क्या यह इकलौता और अनोखा मामला है कि बिहार की एक महिला के मतदाता पहचान पत्र में उसकी आयु 35 के स्थान पर 124 वर्ष लिखी मिली? क्या वायनाड में जितने भी मतदाता हैं, सबके पहचान पत्र एकदम सही हैं? यह सही है कि मतदाता पहचान पत्र बनाने और उनका सत्यापन करते समय किसी तरह की गलती-गड़बड़ी नहीं होनी चाहिए, लेकिन क्या कोई और खासकर कांग्रेस यह दावा कर सकती है कि उसके समय चुनाव आयोग का हर काम बिना किसी गलती-गड़बड़ी के होता था?

तभी हिंदी बनेगी बिंदी

हाईस्कूल और इंटरमीडिएट की परीक्षा में हिंदी विषय में छात्रों के फेल होने वाले छात्रों की संख्या कम करने का जो उपाय माध्यमिक शिक्षा परिषद, उत्तर प्रदेश ने तलाशा है, वह बहुत कारगर नहीं हो सकता। दरअसल प्रदेश के इस परीक्षा बोर्ड का यह मानना कि पहले दिन हिंदी की परीक्षा होती है, इसलिए खराब परिणाम आ रहा है, यह गले नहीं उतरता। अगर यह तर्क गढ़ा जा रहा है कि पहले दिन विद्यार्थियों में घबराहट होती है और इस मानसिक दबाव का असर परीक्षा के परिणाम पर आता है तो यह कोई समाधान नहीं। पहले दिन अब जिस विषय या ट्रेड की परीक्षा होगी, उसमें भी यही दबाव सामने आएगा। बोर्ड अपने परीक्षा कार्यक्रम में बदलाव करके वर्ष 2026 की परीक्षा में पहले दिन हिंदी विषय की परीक्षा नहीं कराएगा। ऐसे में बोर्ड को यह समझना होगा कि केवल इतने बदलाव से हिंदी माथे की बिंदी नहीं बनेगी। हिंदी उत्तर प्रदेश बोर्ड के बच्चों के लिए इसलिए भी सहज और सरल होनी चाहिए, चूंकि यह उनकी मातृभाषा है। हिंदी विषय की पढ़ाई को लेकर विद्यालयों में और सजगता आवश्यक होगी। हमें देखना चाहिए कि उनके पाठ्यक्रम में सरलता, बोधगम्यता और सरसता कितनी है? शिक्षकों की संख्या और उनका शैक्षणिक स्तर कैसा है? बोर्ड ने जो दूसरी पहल परीक्षा क्रम में विषयों में अंतराल बढ़ाने की, की है उसका असर सकारात्मक होगा। यूपी बोर्ड की परीक्षा औसतन 14 कार्यदिवसों में संपन्न हो रही है। लिहाजा परीक्षा दिवस बढ़ाकर परीक्षार्थियों को तैयारी का अधिक समय दिया जाना उचित निर्णय है। साथ ही इस दिशा में कुछ अन्य व्यावहारिक निर्णय भी लिए जाने चाहिए।

> हिंदी की परीक्षा में असफल होने वाले छात्रों की संख्या कम करने के लिए नए सिरे से रणनीति बनाए जाने पर ध्यान देना होगा

आत्मघाती राह पर अमेरिका

अजय कुमार

ट्रंप के ऊंचे टैरिफ से भारत को कुछ कठिनाइयां जरूर झेलनी पड़ सकती हैं, पर अमेरिका को भी इसकी बड़ी आर्थिक कीमत चुकानी पड़ेगी

टैरिफ नीति के पीछे राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की चाहे जो मंशा हो, लेकिन इससे किसी का कोई भला नहीं होने वाला। इसके जरिये देशों को निशाना बनाया जा रहा है और प्रतिस्पर्धा को कुंद किया जा रहा है। इसके चलते खुद अमेरिका के लिए मूल्य वृद्धि, आपूर्ति श्रृंखला में गतिरोध और जवाबी कदम जैसे जोखिम बढ़ गए हैं। भारत में ट्रंप टैरिफ की बहुत चर्चा है। अमेरिका ने जिस तरह साफ्टवेयर एवं सेवाओं, मोबाइल फोन और दवाओं को इन प्रतिबंधों के व्यापक दायरे से दूर रखा है, वह यही दर्शाता है कि कहीं न कहीं उसे भी अपनी आर्थिकी पर इसके गंभीर असर की आशंका महसूस हो रही है। उसके निशाने पर मुख्य रूप से कपड़े, परिधान, फर्नीचर, बिस्तर, कालीन, मशीनरी, धातु, आभूषण, वाहन कलपुर्जे, पेट्रोलियम, झींगे और रसायन जैसे उत्पाद हैं। अमेरिका को लगता है कि इसके जरिये दबाव बढ़ाकर वह भारत को व्यापार समझौते के लिए विवश कर देगा। हालांकि वास्तविकता देखें तो हालात अमेरिका के उतने अनुकूल भी नहीं हैं। ऊंचे टैरिफ से भारत को कुछ कठिनाइयां जरूर झेलनी पड़ सकती हैं, पर अमेरिका को इसकी कहीं बड़ी आर्थिक कीमत चुकानी होगी। कपड़ों एवं परिधान के उदाहरण से इसे बखूबी समझा जा सकता है। इसे अक्सर भारत के सबसे नाजुक कारोबारी क्षेत्रों में गिना जाता है। भारत ने 2024-25 में 35 अरब डालर का कपड़ा एवं परिधान निर्यात किया। इसमें 8.4 अरब डालर निर्यात अमेरिका को किया गया। भारत के अन्य प्रमुख कपड़ा एवं परिधान बाजार यूरोपीय संघ, ब्रिटेन, जापान, आस्ट्रेलिया व पश्चिम एशिया हैं।

यूरोपीय संघ भी विशालकाय बाजार है। जहां अमेरिका 107 अरब डालर का आयात करता है, वहीं यूरोपीय संघ 400 अरब डालर सालाना से अधिक। इस बाजार में भारत के लिए व्यापक अवसरों के द्वार खुलने की संभावना है। ब्रिटेन ही 27 अरब डालर का आयात करता है। हाल में उसके साथ हुए मुक्त व्यापार समझौते(एफटीए) के बाद भारतीय निर्यातकों को इस बाजार में चीनी आपूर्तिकर्ताओं के मुकाबले 8 से 12 प्रतिशत का लागत लाभ हासिल होने की संभावना है। आस्ट्रेलिया के साथ व्यापार समझौते के चलते वहां भी यही स्थिति है। जापान और दक्षिण कोरिया भी चीन से खरीदारी से इतर विकल्प तलाशने में लगे हैं तो भारत शून्य या घटी हुई ड्यूटी के जरिये इस अवसर का लाभ उठा सकता है। अन्य उभरते हुए बाजारों में भी व्यापक अवसर हैं।

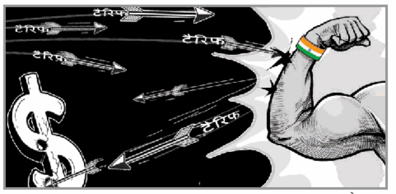

अवधेश राजपूत

भारत अपने निर्यात को न्यूनतम दीर्घकालिक नुकसान के साथ नए सिरे से संयोजित कर सकता है। सरकारी सहायता भी इस संक्रमण के दौर को सुगम बनाने में सहायक होगी। भारत का कुल निर्यात 825 अरब डालर के स्तर को पार करते हुए 6 प्रतिशत की दर से आगे बढ़ रहा है। इसलिए यदि अमेरिका को होने वाले निर्यात से कुछ असर भी पड़े तो भारत उसे झेल सकता है। हालांकि अमेरिकी उपभोक्ताओं को इसका खामियाजा भुगतना पड़ेगा। उनके लिए कीमतें खासी बढ़ जाएंगी, विशेष रूप से उन विशिष्ट भारतीय उत्पादों की, जिनके विकल्प भी बहुत सीमित हैं। पश्मीना शाल की ही बात करें तो भारत अमेरिका को सबसे अधिक मात्रा में इसका निर्यात करता है। टैरिफ के चलते इसकी कीमतों में 50 प्रतिशत तक की बढ़ोतरी हो सकती है। यही बात बनारसी, कांजीवरम साड़ी और पटोला पर भी लागू होती है। अपेक्षाकृत कम विशिष्ट उत्पादों के मामले में स्थिति अधिक लचीली और विकल्पों से भरी होती है। अभी चीन, वियतनाम, बांग्लादेश और भारत कुल अमेरिकी आयात का 60 प्रतिशत आपूर्ति करते हैं। नई टैरिफ दरों के चलते वियतनाम, बांग्लादेश जैसे किसी और देश की हिस्सेदारी इसमें बढ़ सकती है। चूंकि घरेलू उपभोग में परिधान पर व्यय की एक बड़ी हिस्सेदारी होती है, इसलिए उनकी कीमतों में निरंतर बढ़ोतरी का असर मौद्रिक नीति में सख्ती के रूप में निकलेगा, जो अंततः अमेरिकी अर्थव्यवस्था की रफ्तार को सुस्त करेगी।

ऊंचे टैरिफ से अमेरिका के राजस्व में बढ़ोतरी का अनुमान भी धरा का धरा रह सकता है। कीमतें बढ़ने से मांग घट सकती है तो राजस्व भी घटेगा। टैरिफ से घरेलू उत्पादन के कायाकल्प की बातें भी बेमानी लगती हैं, क्योंकि वस्त्र उद्योग में एकाएक उत्पादन बढ़ाने की व्यापक क्षमताएं मौजूद ही नहीं। टैरिफ से तात्कालिक मुनाफा घटेगा, जिससे स्टोर बंद करने की नौबत आ सकती है और डिजाइन, वितरण, लाजिस्टिक्स और खुदरा क्षेत्र में नौकरियों पर संकट मंडरा सकता है। सामाजिक तानेबाने पर भी इसका बुरा असर पड़ सकता है। प्रमुख अमेरिकी व्यापारिक केंद्रों पर मुख्य रूप से भारतीय मूल के उद्यमी न केवल भारत से आयात, अपितु डिपार्टमेंटल स्टोर, फैशन ब्रांड और ई-कामर्स इकाइयों को आपूर्ति भी नियंत्रित करते हैं। ऊंचे टैरिफ न केवल भारतवंशियों के इस तबके, बल्कि व्यापक अमेरिकी अर्थव्यवस्था का भी अहित करेंगे।

ट्रंप की टैरिफ नीति ने भारत-अमेरिका साझेदारी पर भी ग्रहण लगाने का जोखिम बढ़ा दिया है। भारत की स्वतंत्रता के बाद अधिकांश समय दोनों देशों के रिश्तों में एक दूरी बनी रही और इस सदी की शुरुआत से ही उसमें गर्मजोशी का भाव बढ़ा। रिश्तों में कायापलट के इस दौर में इलेक्ट्रानिक्स, आइटी और रक्षा मंत्रालय में सेवा के दौरान मुझे भी इन क्षेत्रों में बढ़ते रिश्तों में योगदान देने का अवसर मिला। ये क्षेत्र हमारी आर्थिक एवं रणनीतिक साझेदारी के स्तंभ के रूप में उभरे। ऐसे में यह बहुत सालने वाली बात है कि द्विपक्षीय रिश्तों में दो दशकों की मेहनत पर संकीर्ण स्वार्थ से प्रेरित तात्कालिक फायदे वाले एक कदम से पानी फेरा जा रहा है। तकनीकी सहयोग और रक्षा साझेदारी जैसे मामलों में जहां विश्वास ही मायने रखता है, वहां खटास भरा माहौल बहुत प्रतिकूल होता है। जब चीन के उभार को संतुलित करने के लिए अमेरिका को भारत से सहयोग बढ़ाना चाहिए, तब नई दिल्ली को वैकल्पिक साझेदारियों की ओर धकेला जा रहा है। इससे अमेरिका व्यापार में नुकसान उठाने के साथ ही अपना जियो-पालिटिकल लाभ भी गंवाएगा।

(लेखक संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं पूर्व रक्षा सचिव हैं। लेख में व्यक्त विचार किसी संस्था के नहीं)
response@jagran.com

आंसू छलकाने वाली विभाजन की त्रासदी

आज देश विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस मना रहा है। 2021 से हर साल 14 अगस्त को विभाजन की त्रासदी को याद करने का उद्देश्य आज की पीढ़ी को उस विभीषिका के शिकार लोगों के दुख-दर्द से परिचित कराना और भारत के बंटवारे के सबक सीखना है, ताकि फिर कभी मानवता को ऐसी त्रासदी का सामना न करना पड़े। भारत का बंटवारा मानव इतिहास की सबसे दुखद घटना है। इसमें लाखों परिवार स्वार्थ और नफरत की भेंट चढ़ गए। विभाजन की त्रासदी भयानक और दर्दनाक है। भविष्य के शासक सत्ता से समझौते के लिए कुछ भी करने को तैयार दिख रहे थे। उन्हें लगता था कि कहीं देर न हो जाए और उन्होंने जनता को इसका मूल्य चुकाने को विवश किया। तब अचानक लाखों लोगों को अपना सब कुछ छोड़कर अनजान इलाकों में भूखे-प्यासे भटकने पर मजबूर होना पड़ा।

डा. केएल जुनेजा

मैंने पाकिस्तान से आए किसी व्यक्ति को भीख मांगते तो नहीं देखा, लेकिन उनकी दुखभरी कहानियों का कोई अंत नहीं

विभाजन के समय मेरी उम्र करीब साढ़े चार-पांच साल थी। उस समय की तमाम बातें मेरी यादों में हैं। ये यादें डराती हैं। हम झंग जिले के बाघ कुकारा गांव में रहते थे। एक सुबह अचानक शोर हुआ। मेरी 12 साल की बहन मुझे और मेरे दो साल के भाई को एक किले की ओर ले गई। वहां मेरे घर के अन्य सदस्य भी थे। मेरे पिता ने नम आंखों से हमारी गाय और उसके बछड़े को खूंटे से खोल दिया। उनके आंसू अकारण नहीं थे। उन्होंने गाय को बच्चे की तरह पाला था। एक और धुंधली सी याद है कि हम जैसे-तैसे भाग कर गांव के पास रेलवे स्टेशन पर पहुंचे, जहां एक मालगाड़ी खड़ी थी। वह भारत जा रही थी। उसके एक डिब्बे का दरवाजा टूटा था। अभी पिताजी-चाचाजी सोच-विचार कर ही रहे थे कि क्या करें कि तभी अफवाह फैली कि हमला होने वाला है। जान बचाने के लिए सब उस डिब्बे में बैठ गए। गाड़ी चल दी, कुछ दूर जाने पर गाड़ी धीमी हुई। तभी कुछ लोग हमें मारने के लिए दौड़ लगाते दिखे। एक आदमी भाले के साथ मालगाड़ी के पीछे दौड़ा। उसने दरवाजे के पास बैठ मेरे पिता को निशाना बनाना चाहा। पिता कांसे का भारी लोटा लिए थे। उन्होंने उसे ही उस पर फेंका, जो उसे लगा और वह गिर गया। जब हम भारत की सीमा में आ गए और मालगाड़ी से उतरने के बाद

मानव इतिहास की भयावह घटना भारत विभाजन। फाइल

भटक रहे थे तो पास के ईंट भट्ठे के मजदूर खाना बनाते दिखे। हमारे परिवार में उस समय लगभग 30 लोग थे। सभी भूख से व्याकुल थे। उन्होंने मजदूरों से पूछा कि क्या कहीं से आटा मिल जाएगा और क्या आप अपने बर्तन और चूल्हे का इस्तेमाल हमें करने देंगे? वे तैयार हो गए। पिता-चाचा आटा खरीदकर लाए और रोटियां बनाईं। अचानक वहां मिर्च का अचार बेचने वाला आ गया। उससे मिर्ची खरीदी गई और बड़ों को चार रोटी-चार मिर्ची और छोटों को दो रोटी-दो मिर्ची दी गई।

भारत आने के बाद समस्या यह थी कि जाया कहां जाए, बसा कहां जाए, काम क्या किया जाए। हमारे परिवार ने जगह-जगह धक्के खाए। वे श्रीगंगानगर, भरतपुर और रोहतक गए। मेरा बड़ा भाई पढ़ने में अच्छा था, लेकिन नियति ने ऐसा खेल खेला कि वह बिस्कुट बेचने लगा। उसके जैसे लाखों बच्चों ने सुनहरे भविष्य की कुर्बानी दी। पिता बताया करते थे कि कैसे उन्होंने एक भैंस खरीदी और उसका दूध बेचकर गुजारा करने लगे। समय बीतने के साथ उन्हें पाकिस्तान में उनकी जमीन के बदले रोहतक के कलानौर गांव में कुछ जमीन मिली, पर वह कंकरीली थी। उसे खेती लायक बनाया गया। हमारा परिवार रोटी-कपड़े का मोहताज नहीं रहा। मैंने पाकिस्तान से आए किसी भी व्यक्ति को भीख मांगते नहीं देखा, पर उनकी दुखभरी कहानियों का कोई अंत नहीं। जो यह कहते हैं कि आजादी की लड़ाई में सिर्फ कांग्रेस ने बलिदान दिया, उन्हें उन लाखों परिवारों की ओर देखना चाहिए, जिन्होंने विभाजन की पीड़ा झेली। आज के अधिकांश नेताओं को क्या पता कि कांग्रेस ने क्या कुर्बानी दी और आम लोगों ने क्या झेला?

जब मैं स्कूल जाने लगा तो मुझे भगोड़ा, रिफ्यूजी और न जाने क्या-क्या सुनना पड़ा। स्कूल जाने का सौभाग्य मेरे बड़े भाई-बहन को नहीं मिला। किसी तरह मैंने मैट्रिक पास किया। घर की हालत सुधरी नहीं थी। पिता ने मुझे एक संबंधी के यहां काम के लिए भेजना तय किया। मैं उनके यहां पांच साल काम करता, बदले में वे पिता को दस हजार रुपये देते। मैं पढ़ने की जिद कर रहा था। आखिर मेरा रोना रंग लाया। मुझे भेजने की योजना टाल दी गई। मैंने एमए और पीएचडी की और प्रोफेसर बना। हमारा सौभाग्य रहा कि विभाजन के दौरान हमारे परिवार के किसी व्यक्ति की जान नहीं गई। इसकी एक वजह यह भी रही कि हम जहां रहते थे, वहां समर्थ लोगों में गिने जाते थे। बाद में जैसे-जैसे स्थिति बिगड़ी, तो हम असहाय होते गए और अंततः वहां से जो कुछ हाथ में आया समेटकर भागने को विवश हुए। सबका भाग्य ऐसा नहीं था। मेरी नानी के गांव में हिंदुओं के 30-40 घर थे। वहां लोगों ने उनसे कहा कि अपनी लड़कियों का निकाह हमारे लड़कों से कर दो और कलमा पढ़कर मुसलमान बन जाओ। नानी के गांव के लोगों ने तय किया कि मर जाएंगे, पर न तो बहन-बेटियों का किसी से निकाह करेंगे और न मुसलमान बनेंगे। कोई उपाय न रहा तो उन्होंने दिल पर पत्थर रखकर अपनी बहन-बेटियों को मार कर जला दिया। चूंकि ऐसी रोंगटे खड़े करने वाली कहानियां न जाने कितनी हैं, इसलिए विभाजन की भयावहता को भूला नहीं जाना चाहिए।

(अविभाजित भारत में जन्मे लेखक पूर्व प्रोफेसर हैं)
response@jagran.com

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

ऊर्जा

स्वाधीनता का महत्व

स्वाधीनता के रंगों से सराबोर होने के बीच हमें उसका महत्व भी समझना होगा। स्वाधीनता केवल एक शब्द नहीं, अपितु एक वृहद विचार है। यह शक्ति का पुंज है और सामर्थ्य का स्रोत भी है। जब हम स्वाधीनता का अनुभव करते हैं तो हमारे मस्तक पर चमक उत्पन्न हो जाती है। सीना गर्व से फूल जाता है। हम स्वयं पर स्वयं का नियंत्रण महसूस करते हैं। स्वाधीनता सदैव संघर्ष से प्राप्त होती है। किसी अन्य देश के अधीन राष्ट्र अपना स्वाभिमान खो देता है। उस राष्ट्र के नागरिक भी अपनी अस्मिता की रक्षा नहीं कर पाते। उन्नति के सारे द्वार बंद हो जाते हैं। व्यक्ति को स्वयं की सामर्थ्य पर संदेह होने लगता है। राष्ट्र अवनति के मार्ग पर धंसता चला जाता है।

स्वाधीनता के साथ जीवन चतुर्दिक विकास के मार्गों को प्रशस्त करता है। जबकि पराधीन व्यक्ति अंधकार में डूबा रहता है। ठीक इसी प्रकार नशे के अधीन हुआ व्यक्ति कभी अपना जीवन स्तर नहीं उठा सकता। वह भी एक तरह से पराधीन ही है। इसी तरह विलासिता के संसाधनों के अधीन हुआ व्यक्ति भी जीवन भर सिर्फ संसाधन जुटाने में लगा रहता है, लेकिन उनके उपभोग के लिए प्रायः समय भी नहीं निकाल पाता।

बाह्य स्वाधीनता के साथ-साथ आत्मिक स्वाधीनता भी अत्यंत आवश्यक है। हम आत्मिक रूप से ईर्ष्या, द्वेष और घृणा आदि के अधीन रहकर अंधकार की देहरी पर पड़े रहते हैं। यह दुर्गुण हमें स्वाधीन होने ही नहीं देते। आत्मिक स्वाधीनता के लिए सारे दुर्गुणों का त्याग करना होगा। एक पक्षी की सर्वोन्नति उसके उन्मुक्त गगन में उड़ान भरने से ही संभव है। वह सुविधाओं से संपन्न पिंजरे में बंद रहकर जीवन का आनंद नहीं उठा सकता। स्वाधीनता जीवन के वास्तविक आनंद को अर्थ देती है। हमें आजीवन स्वाधीनता के महत्व को समझकर इसकी सार्थकता के लिए प्रयास करने चाहिए।

ललित शौर्य

शिक्षा का व्यवसायीकरण चिंताजनक

डा. दर्शनी प्रिया

शिक्षा विकास और विस्तार की जननी है, बशर्ते यह आदर्शमूलक और गैर व्यवसायीकृत हो। देश विकास के मानकों पर निरंतर आगे बढ़ रहा है। पश्चिमी देश शिक्षा सूचकांक जैसे मानकों में भारत के बढ़ते दबदबे से चकित हैं। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति से भारतीय शिक्षा पद्धति विकासोन्मुख हुई है। परंतु पिछले दिनों राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत के शिक्षा जैसे अति महत्वपूर्ण विषय पर जताई गई चिंता सोचने को मजबूर करती है। वस्तुतः उन्होंने कहा है कि अच्छी शिक्षा की सारी योजनाएं आज समाज के हर व्यक्ति की बहुत बड़ी आवश्यकता बन गई है। लेकिन यह आम आदमी की पहुंच के दायरे से बाहर है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि शिक्षा के क्षेत्र में सहज, सुलभ और सस्ती सुविधाएं उपलब्ध कराया जाना समय की मांग है। लेकिन इस मांग की आपूर्ति की दिशा में हम अभी तक पूरी तरह से सफल नहीं हो पाए हैं। आज भारत के 2.68 लाख ग्राम पंचायतों और 6.65 लाख गांवों में लगभग 3.35 लाख निजी स्कूल संचालित हैं जो सरकार से किसी भी प्रकार की सहायता के बिना स्वतंत्र रूप से चलाए जाते हैं। विडंबना है कि ऐसे ज्यादातर कोचिंग संस्थान पंजीकृत नहीं हैं। हालांकि भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के उच्च शिक्षा विभाग के कोचिंग सेंटर पंजीकरण एवं विनियम दिशानिर्देश 2024 के जारी किए जाने के बाद से हालत कुछ सुधरे हैं और कुछ निजी कोचिंग संस्थानों ने पंजीयन शुरू किया है। फिर एक बड़ी संख्या अब भी पंजीयन के दौर से बाहर है।

> शिक्षा का पेशेवराना चलन भावी पीढ़ी की जड़ों को खोखला करेगी जिससे उनका बौद्धिक विकास दुष्प्रभावित होगा

निजी कोचिंग सेंटरों और स्कूलों की बढ़ती संख्या और उससे जुड़े बेहिसाब शुल्क ने शिक्षा जैसे पुनीत कार्य को विशुद्ध व्यवसाय के रास्ते पर धकेल दिया है। आकर्षक नारों और एक बड़ी टैगलाइन के साथ एक खास रणनीति के तहत बाजार में उतरते हैं। जहां छात्रों का आर्थिक दोहन मुख्य उद्देश्य होता है। इसका लक्ष्य छात्रों को अपने संस्थानों के प्रति आकर्षित करना होता है। जाहिर है कि क्रैश कोर्स, कम फीस, कम समय में शार्टकट से सफलता दिलाने का वादा, आदि के नाम पर छात्रों को आर्थिक रूप से निचोड़ा ही जाता है।

हाल ही में राष्ट्रीय शिक्षा आयोग ने कहा है कि ''शिक्षा वस्तु नहीं है और छात्र उपभोक्ता नहीं है'' और इसे सभी मानक शैक्षिक संस्थानों को मानना चाहिए। राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग ने कालेजों और विश्वविद्यालयों के खिलाफ छात्रों द्वारा दायर याचिकाओं पर सुनवाई करते हुए कहा कि, 'असत्य दावों वाले विज्ञापनों को विज्ञापनदाता द्वारा अनुचित व्यापार व्यवहार माना जाए और उन पर सख्त कार्रवाई की जाए। केंद्र सरकार की ओर से इन संस्थानों पर नियंत्रण के लिए एक नियामक प्रणाली विकसित करने संबंधी दिशा-निर्देश दिए गए थे, लेकिन ये कब तक कार्यान्वित होते हैं, यह देखना समीचीन होगा।

(लेखिका आकाशवाणी में अधिकारी हैं)

सवालों के घेरे में न्यायिक तंत्र

'महाभियोग की लंबी प्रक्रिया' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय में स्पष्ट किया गया कि किस प्रकार जस्टिस यशवंत वर्मा के सरकारी आवास में अधजले नोट मिलने जैसे गंभीर भ्रष्टाचार के आरोपों के बावजूद उनका इस्तीफा न देना और महाभियोग प्रक्रिया का लंबा खिंचना न्यायपालिका की गरिमा पर आघात करता है। ऐसे मामलों में तो त्वरित एवं प्रभावी कार्रवाई की सख्त जरूरत है। लोकतंत्र में आदर्श स्तंभ कही जाने वाली न्यायपालिका तभी अपनी आभा कायम रख सकती है, जब उसके भीतर बैठे लोग निष्पक्ष, पारदर्शी और बेदाग हों। परंतु यदि किसी न्यायाधीश पर गंभीर भ्रष्टाचार के आरोप हों, फिर भी वह पद और सुविधाओं से चिपके रहें तो यह केवल संस्था की गरिमा को ठेस नहीं पहुंचाता, बल्कि जनता के भरोसे को भी डगमगा देता है। सवाल यह है कि क्या न्यायपालिका के लिए जवाबदेही केवल शब्दों का खेल रह गई है? वर्तमान प्रक्रिया में महाभियोग एक लंबी और लगभग असंभव राह है। यही वजह है कि दोष सिद्ध होने तक वर्षों निकल जाते हैं और आरोपित जज तब तक सुविधा भोगते रहते हैं। समाधान स्पष्ट है एक स्वतंत्र निकाय का गठन किया जाए, जिसमें सेवानिवृत्त न्यायाधीश, संवैधानिक विशेषज्ञ और जनप्रतिनिधि शामिल हों। यह आयोग समयबद्ध जांच करे और आरोप सिद्ध होने पर तत्काल निलंबन एवं पदच्युत करने का अधिकार रखे। साथ ही, जजों के लिए संपत्ति का वार्षिक राजफाश और पारदर्शी आचार संहिता लागू हो।

अमन सिंह गौर, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

प्रतिक्रिया

घटते हुए मानवीय मूल्य

हाल ही में घटित नागपुर-जबलपुर नेशनल हाईवे पर हुए हादसे से जुड़ा एक दुखद मामला न केवल एक परिवार के लिए गहरा व्यक्तिगत दुख है, बल्कि समाज की मानवीय संवेदनाओं के ह्रास का भी कठोर उदाहरण है। दरअसल दुर्घटना की चपेट में आए व्यक्ति की पत्नी की ट्रक से टक्कर में मौत हो गई, परंतु आधे घंटे तक वह सड़क पर खड़े होकर मदद की गुहार लगाता रहा, फिर भी कोई रुका नहीं। यह घटना बताती है कि आजकल लोग दुर्घटना, मारपीट या आपदा के समय पीड़ित की मदद करने की बजाय दूरी बनाकर खड़े रहना या वीडियो बनाना ज्यादा बेहतर समझते हैं। हमारे समाज में यह संवेदनहीनता कई कारणों से बढ़ रही है- कानूनी झंझट का डर, समय की कमी और ''यह मेरी जिम्मेदारी नहीं'' जैसा सोच। नतीजा यह है कि इंसान अब इंसान के लिए नहीं रुकता, जबकि जानवरों के लिए बहस और आंदोलनों में जोश दिखाया जाता है। यह असंतुलन बताता है कि भावनाएं केवल मुद्दों तक सीमित रह गई हैं, जमीनी कार्यों में नहीं। इसे सुधारने के लिए सबसे पहले ''गुड सेमैरिटन'' कानून की जानकारी हर नागरिक तक पहुंचानी होगी, जिसमें मदद करने वालों को कानूनी सुरक्षा दी जाती है। स्कूल और कालेज स्तर पर मानवीय मूल्यों और प्राथमिक चिकित्सा की शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए।

मधु सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम, मध्य प्रदेश

विवादास्पद मुद्दों से बचा जाए

बुधवार को प्रकाशित ध्रुव सी. कटोच द्वारा लिखे गए आलेख 'कश्मीर को लेकर सतर्क रहें' में जिन दृष्टांतों का उल्लेख किया गया है, इसे लेकर वहां के आम जन एवं प्रशासन को ही सतर्क रहने की आवश्यकता नहीं है, अपितु ऐसे मामलों को लेकर समस्त भारतवासी सतर्क रहें। 13 जुलाई को शहीदी दिवस मनाने की शुरुआत का साल भी गौरतलब है। इसी साल पांच मार्च 1948 को शेख अब्दुल्ला को जम्मू-कश्मीर का प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया था। ऐसा वहां के महाराजा हरि सिंह ने जिन परिस्थितियों में किया, वह भी गौर करने लायक है। सवाल यह है कि 13 जुलाई, 1931 की घटित घटना की पृष्ठभूमि सांप्रदायिक थी, तभी तो जम्मू संभाग के लोग इस दिन को काला दिवस के तौर पर मनाते हैं। ऐसे में यह शोध का विषय है कि 1948 से पूर्व कश्मीर के लोगों में यह परिपाटी नहीं थी यानी आम मुसलमान की भावना के अनुरूप नहीं है शहीदी दिवस मनाना।

मुकेश कुमार मनन, पटना

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

कल्पमेधा

शिक्षा ने ऐसी बहुत बड़ी आबादी पैदा की है जो पढ़ तो सकती है, पर यह नहीं पहचान सकती कि क्या पढ़ने लायक है।

- जीएम ट्रेवेल्यन

तैयारियों में चूक

देश के कई इलाकों में इन दिनों लोगों को भारी बरसात की वजह से त्रासदी झेलनी पड़नी पड़ी है। उत्तराखंड के धराली में भूस्खलन के बाद से लापता 68 लोगों का अभी तक पता नहीं चल पाया है। धराली के अलावा हिमालय पर्वतीय श्रृंखला में बसे कई इलाकों में लोगों को मौसम का प्रकोप झेलना पड़ा है। पहाड़ी इलाकों में बादल फटने और मैदानी क्षेत्रों में बिजली गिरने की घटनाएं बढ़ रही हैं। मैदानी इलाकों में कभी भीषण गर्मी, तो कभी अचानक हुई बारिश से लोगों का जीना मुहाल हो गया है। पिछले कुछ दिनों में दिल्ली, पंजाब, हरियाणा और यूपी समेत कई राज्यों में अप्रत्याशित आंधी-बारिश देखी गई। मौसम में इस तरह का बदलाव जलवायु परिवर्तन का नतीजा है, जिससे दुनिया भर में मौसम का चक्र बिगड़ गया है। पर्यावरण संरक्षण को लेकर वैज्ञानिक अक्सर चेताते रहते हैं, लेकिन विकास की होड़ में प्रकृति का विनाश थम नहीं रहा है। वैज्ञानिकों की चेतावनी अनसुनी कर हिमालय क्षेत्र में विभिन्न विकास परियोजनाओं में तेजी के बाद से पहाड़ी इलाकों में त्रासदी बढ़ी है।

त्रासदी का यह एक पहलू है। पहाड़ी इलाकों में राहत एवं बचाव दलों को भेजकर औपचारिकता निभा ली जाती है। न तो लापता लोगों का पता चल पाता है और न ही कोई ऐसी ठोस योजना आकार ले पाती है, जिससे सुनिश्चित किया जा सके कि जान-माल का नुकसान नहीं होगा। दूसरा पहलू मैदानी इलाकों का है, जब बारिश की वजह से जनजीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। सड़कें बंद हो जाती हैं, जलभराव से जीना मुहाल हो जाता है। इस तरह की समस्याएं बढ़ती जा रही हैं। सरकार के पास आपदा मोचन बल जैसी संस्था है, जो आपदाग्रस्त इलाकों में उतारी जाती है। क्या कभी इस सवाल पर विचार हुआ है कि बढ़ती जा रही इस तरह की समस्याओं से निपटने के लिए तैयारियां कहीं कम तो नहीं? तैयारियों में कहां चूक होती है, यह देखना होगा। प्राथमिकता इस बात की होनी चाहिए कि हादसे से पहले लोगों की जान कैसे बचे और भूस्खलन, जल-जमाव, खस्ताहाल सड़कें, बदहाल निकासी से जनजीवन को प्रभावित होने से कैसा बचाया जा सके।

मौसम ने इस बार जैसा रंग दिखाया है, उसके बाद हमारी नींद खुल जानी चाहिए। हर साल ऐसा लगता है कि गर्मी पिछले बरस से अधिक पड़ रही है। सर्दी का मौसम सिकुड़ता जा रहा है, जबकि बारिश अनियमित हो चली है। गर्मी में पानी के लिए तरसने वाले इलाकों में बारिश के दौरान नागरिक सुविधा के इंतजाम पानी में बह जाते दिखे हैं। ये सारे संकेत डराने वाले हैं और साथ ही चेताने वाले भी। दो स्तरों पर काम करने की जरूरत है – पहला उपाय दीर्घकालिक हो और दूसरा फौरी। तुरंत राहत के रूप में उन लोगों की सुरक्षा का ध्यान रखा जाना चाहिए, जिन्हें खुले में काम करना पड़ता है, जैसे श्रमिक, यातायात पुलिसकर्मी, रेहड़ी-पटरी दुकानदार आदि। दीर्घकालिक उपाय के तहत कड़े कदम उठाने पड़ेंगे। हमारे महानगरों में नदियों-तालाबों पर तेजी से कब्जा हो रहा है। आर्द्रभूमि पर इमारतें खड़ी की जा रहीं। इसे रोकना होगा। हरियाली बढ़ानी होगी। प्रकृति से छेड़छाड़ को बंद करना होगा।

महंगाई से राहत

पिछले कई वर्षों से आम आदमी महंगाई से बेहाल है। उसकी क्रय शक्ति काफी हद तक प्रभावित हुई है। मगर अब यह स्थिति बदल सकती है। भारतीय रिजर्व बैंक मौद्रिक नीतियों में फेरबदल कर महंगाई को काबू में करने के जो उपाय करता रहा है, उसका असर दिखाई देने लगा है। मंगलवार को राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय की ओर से जारी आंकड़ों के अनुसार खुदरा महंगाई दर बीती जुलाई में घट कर 1.55 फीसद रह गई। यह पिछले आठ साल में सबसे कम है। गौरतलब है कि जून 2017 में जो महंगाई दर दर्ज की गई थी, उस समय यह आंकड़ा 1.46 फीसद था। खुदरा महंगाई में गिरावट आम लोगों के लिए बड़ी राहत है। हमारी अर्थव्यवस्था पर भी इसका बेहतर प्रभाव पड़ेगा। मगर सवाल यह है कि क्या भविष्य में भी महंगाई काबू में रहेगी। जाहिर है इस पर निरंतर नजर रखने की जरूरत होगी। फिलहाल मानसून के दौरान अधिक बारिश, जलाशयों में पर्याप्त जल स्तर और खरीफ की अच्छी बुवाई से कृषि पैदावार बेहतर होने से खाद्य पदार्थों की कीमतों में स्थिरता की उम्मीद की जा सकती है। मगर इस समय खाद्य तेलों के बार-बार बढ़ते मूल्यों पर भी अंकुश लगाने की जरूरत है। इनके दाम पिछले महीने भी बढ़े हैं।

कोई दो राय नहीं कि आम नागरिकों का जीवन सुधारने और उनकी क्रय शक्ति बनाए रखने के लिए महंगाई पर स्थायी नियंत्रण होना चाहिए। मुद्रास्फीति में नरमी आंकड़ों में नहीं, बाजारों में दिखनी चाहिए ताकि लोगों को लगे कि उपभोक्ता वस्तुओं और खाद्य पदार्थों के दाम वास्तव में घटे हैं। अनुमान लगाया जा सकता है कि खुदरा महंगाई में नरमी को देखते हुए रिजर्व बैंक की मौद्रिक समिति अपनी अगली समीक्षा बैठक में रेपो दर यथावत रख सकती है, लेकिन यह भी तय है कि मौद्रिक नीति का रुख इस बात पर भी निर्भर करेगा कि महंगाई किसी दिशा में जाती है। मौजूदा भू-राजनीतिक तनाव के बीच सजग रहना होगा। उम्मीद कर सकते हैं कि उपभोक्ता मांग बढ़ेगी। लोग खरीदारी के लिए प्रोत्साहित होंगे। खुदरा महंगाई घटने का सकारात्मक असर लोगों के जीवन पर पड़ेगा।

बिखरते परिवार, उपेक्षित होते बुजुर्ग

पारिवारिक मूल्य जो हमें बुजुर्गों का सम्मान करना सिखाते थे, अब किताबों और रीति-रिवाजों तक ही सीमित रह गए हैं। आज के समय में जीवन की गति तीव्र हो गई है, नतीजतन बुजुर्गों की देखभाल को अब अतिरिक्त जिम्मेदारी या बोझ के रूप में देखा जाता है।

देवेंद्रराज सुथार

कुछ समय पहले अयोध्या में दिल दहला देने वाली एक घटना ने भारत में बुजुर्गों की हो रही दुर्दशा सामने रख दी है। कैंसर से पीड़ित बुजुर्ग महिला को उसके ही परिजन रात के अंधेरे में ई-रिक्शा में लाद कर सड़क किनारे छोड़ गए। महिला इतनी लाचार थी कि न तो बोल सकती थी और न ही चल सकती थी। यह पूरी घटना पास में लगे सीसीटीवी कैमरे में कैद हो गई, जिससे पता चलता है कि किस तरह एक असहाय महिला को सड़क पर छोड़ दिया गया। बाद में उसने अस्पताल में दम तोड़ दिया। यह कोई अकेली घटना नहीं है। यह हमारे समाज में बुजुर्गों के प्रति बढ़ती उपेक्षा और अमानवीयता की एक ऐसी परत है, जिसकी तह में हम नहीं जाते और अक्सर नजरअंदाज कर देते हैं। पारिवारिक मूल्य जो हमें बुजुर्गों का सम्मान करना सिखाते थे, अब किताबों और रीति-रिवाजों तक ही सीमित रह गए हैं। आज के समय में व्यक्तिवाद अपने चरम पर है और जीवन की गति तीव्र हो गई है, ऐसे में बुजुर्गों की देखभाल को अतिरिक्त जिम्मेदारी या बोझ के रूप में देखा जाता है।

हम ऐसे युग में जी रहे हैं जहां परंपराएं और आधुनिकता आपस में टकरा रही हैं। संयुक्त परिवार धीरे-धीरे खत्म हो रहे है। उसकी जगह एकल परिवार की संस्कृति ले रही है, जिसमें बुजुर्गों के लिए जगह कम होती जा रही है। आर्थिक स्वतंत्रता और व्यक्तिगत उपलब्धियों की ओर अग्रसर आज की पीढ़ी के लिए समय की कमी और सामाजिक प्रतिबद्धताओं की सीमाएं बुजुर्गों की देखभाल को बोझ बना रही हैं। भारत में बुजुर्गों की जनसांख्यिकी स्थिति भी सामाजिक चुनौती बन रही है। इस समय भारत में 60 वर्ष और उससे अधिक आयु के लगभग 15 करोड़ तीस लाख लोग हैं और अनुमान है कि 2050 तक यह संख्या 34 करोड़ सत्तर लाख तक पहुंच सकती है। वर्ष 2031 तक बुजुर्गों की आबादी कुल जनसंख्या का लगभग 20.1 फीसद तक पहुंचने की संभावना है, जिससे हमारे सामाजिक और आर्थिक बुनियादी ढांचे पर भारी दबाव पड़ सकता है।

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष की रपट भी यही संकेत देती है कि आने वाले वर्षों में न सिर्फ स्वास्थ्य सेवाओं पर दबाव बढ़ेगा, बल्कि सामाजिक सुरक्षा प्रणालियां और पारिवारिक संरचनाएं भी इस बदलाव से गहराई से प्रभावित होंगी। देश के दक्षिणी और पश्चिमी हिस्सों, खासकर केरल और तमिलनाडु में बुजुर्गों का अनुपात सबसे ज्यादा है, जो दर्शाता है कि इन क्षेत्रों को इस जनसांख्यिकीय बदलाव से निपटने के लिए जल्द से जल्द और प्रभावी रणनीति अपनानी होंगी। स्पष्ट है कि भारत बहुत समय तक युवा राष्ट्र नहीं रह पाएगा। ऐसे में हमारी नीतियों और नजरिए में बदलाव जरूरी है, लेकिन जनसंख्या वृद्धि ही एकमात्र चिंता का विषय नहीं है। बुजुर्गों के साथ दुर्व्यवहार और उपेक्षा की समस्या भी भारत में एक गहरे संकट के रूप में उभर रही है। कई अध्ययनों से पता चला है कि घर के अंदर बुजुर्गों की उपेक्षा की दर 47.5 फीसद है, जबकि घर के बाहर यह आंकड़ा 32 फीसद तक पहुंच जाता है।

वर्ष 2022 में 22 शहरों में किए गए एक अध्ययन में 35 फीसद बुजुर्गों ने कहा कि उनके बेटों ने उनके साथ दुर्व्यवहार किया, 21 फीसद ने बहुओं को दोषी ठहराया, जबकि दो फीसद ने बाहरी सहायकों को दोषी ठहराया। ये आंकड़े बताते हैं कि वृद्ध जनों की सबसे अधिक उपेक्षा उन्हीं लोगों द्वारा की जा रही है, जिनसे उन्हें सबसे अधिक सुरक्षा और स्नेह की अपेक्षा होती है। महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय है। पुरुषों की तुलना में वे

> **हम ऐसे युग में जी रहे हैं जहां परंपराएं और आधुनिकता आपस में टकरा रही हैं। संयुक्त परिवार की अवधारणा धीरे-धीरे लुप्त हो रही है और उसकी जगह एकल परिवार की संस्कृति ले रही है, जिसमें बुजुर्गों के लिए जगह कम होती जा रही है। आर्थिक स्वतंत्रता और व्यक्तिगत उपलब्धियों की ओर अग्रसर आज की पीढ़ी के लिए समय की कमी और सामाजिक प्रतिबद्धताओं की सीमाएं बुजुर्गों की देखभाल को बोझ बना रही हैं। बुजुर्गों की जनसांख्यिकी स्थिति भी सामाजिक चुनौती बन रही है। भारत में 60 वर्ष और उससे अधिक आयु के लगभग 15 करोड़ तीस लाख लोग हैं और अनुमान है कि 2050 तक यह संख्या 34 करोड़ सत्तर लाख तक पहुंच सकती है।**

मानसिक, भावनात्मक और आर्थिक शोषण का अधिक शिकार होती हैं, खासकर विधवा होने पर जब उनकी सामाजिक और पारिवारिक स्थिति और भी कमजोर हो जाती है।

सरकारी योजनाओं के प्रति जागरूकता और पहुंच भी बेहद सीमित है। वृद्धावस्था पेंशन योजना के बारे में केवल 55 फीसद, विधवा पेंशन योजना के बारे में 44 फीसद और अन्नपूर्णा योजना के बारे में केवल 12 फीसद बुजुर्गों को ही जानकारी है। ये आंकड़े न केवल नीति निर्माण में खामियों की ओर इशारा करते हैं, बल्कि यह भी दर्शाते हैं कि जागरूकता और क्रियान्वयन के स्तर पर हम कितने पीछे हैं। ग्रामीण भारत में स्थिति और भी भयावह है, जहां स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच नगण्य है और सामाजिक सुरक्षा तंत्र लगभग नदारद है। बुजुर्गों की इस स्थिति का मूल कारण केवल आर्थिक या स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं ही नहीं, बल्कि पारिवारिक और सामाजिक ढांचे में आ रहे बदलाव भी हैं। संयुक्त परिवार जो कभी सामाजिक सुरक्षा की गारंटी हुआ करते थे, आज बिखर चुके हैं। शहरीकरण और वैश्वीकरण के दौर में युवा बेहतर जीवन की तलाश में शहरों और विदेशों का रुख कर रहे हैं, जिससे बुजुर्ग गांवों या छोटे शहरों में अकेले रह जाते हैं।

मध्यम वर्गीय परिवारों को पहले बुजुर्गों की देखभाल का सबसे मजबूत आधार माना जाता था, अब ये खुद आर्थिक तंगी से जूझ रहे हैं। इलाज, देखभाल और पुनर्वास की बढ़ती लागत उन्हें लाचार बना रही है। महिलाओं की बढ़ती कार्य भागीदारी ने पारंपरिक देखभाल को चुनौती दी है। पहले महिलाएं घर पर बुजुर्गों की देखभाल करती थीं, लेकिन आज उनके पास समय का अभाव है। संपत्ति और उत्तराधिकार को लेकर पारिवारिक विवाद भी बुजुर्गों के लिए अपमानजनक स्थितियां पैदा करते हैं। इन तमाम जटिलताओं के बीच मानसिक स्वास्थ्य ऐसा विषय है, जिस पर न तो समाज खुल कर बात करता है और न ही सरकार पर्याप्त ध्यान देती है। अवसाद, अकेलापन, चिंता और सामाजिक अलगाव जैसे मुद्दे बुजुर्गों की मूक पीड़ा को और गहरा करते हैं। कई बुजुर्ग अपनी पीड़ा नहीं बताते, क्योंकि उन्हें लगता है कि समाज में उनकी कोई आवाज नहीं है। यह चुप्पी तब एक सामाजिक अपराध में बदल जाती है, जब उनकी उपेक्षा को सामान्य मान लिया जाता है।

इसका समाधान सिर्फ सरकारी नीतियों से नहीं निकलेगा। इसके लिए एक समग्र, बहुआयामी और संवेदनशील दृष्टिकोण की आवश्यकता है। वृद्ध जनों के लिए राष्ट्रीय नीति का न केवल प्रभावी क्रियान्वयन हो, बल्कि समय पर उसमें संशोधन भी किया जाए ताकि वह वर्तमान सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के अनुरूप हो। सामुदायिक स्तर पर जागरूकता अभियान चला कर सामाजिक सोच में आवश्यक बदलाव लाया जा सकता है। निजी क्षेत्र और गैर-सरकारी संगठनों की भागीदारी से वृद्ध आश्रमों की गुणवत्ता में सुधार लाया जा सकता है और देखभाल के ऐसे तरीके विकसित किए जा सकते हैं जो पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों के बीच संतुलन बना सकें।

वृद्ध जनों के साथ दुर्व्यवहार के मामलों में त्वरित न्याय होना चाहिए ताकि समाज को यह स्पष्ट संदेश मिल सके कि उनकी उपेक्षा और शोषण किसी भी कीमत पर स्वीकार्य नहीं है। परिवारों और समुदायों के स्तर पर ऐसी संरचनाएं विकसित की जानी चाहिए जो वृद्ध जनों को सम्मानजनक जीवन जीने में सक्षम बना सकें। यदि हम वास्तव में एक विकसित राष्ट्र बनना चाहते हैं, तो हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि हमारा विकास समावेशी हो। कोई भी बुजुर्ग असहाय, अकेला और उपेक्षित न रहे।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

उपहार के आयाम

रेखा शाह आरबी

उपहार लेना और देना हमारी संस्कृति का हिस्सा है। जब कोई हमें उपहार देता है तो हमारा मन अत्यधिक प्रसन्न होता है। सामान्य स्थितियों में उपहार देने वाले के प्रति हम अतिरिक्त अनुराग का अनुभव करते हैं। यही कारण है कि जब हम किसी के प्रति अपना प्रेम, स्नेह, आभार, शुभकामना, सम्मान व्यक्त करना चाहते हैं, तो उपहार देकर करते हैं। पारंपरिक नजरिए से देखें तो उपहार एक सुंदर तरीका है किसी को धन्यवाद, आभार या शुभकामनाएं देने का। उपहार हमारी हमारी कृतज्ञता, आत्मीयता को सहज ही दूसरे तक पहुंचा देते हैं। हमारे मन में उनके लिए कितना स्नेह, आदर या फिर कौन-सी भावनाएं हैं, यह प्रदर्शित करते हैं। रिश्तों को मजबूत बनाते हैं और एक दूसरे से मजबूती से जोड़े रखते हैं। उपहार देना दूसरों के प्रति हमारे परवाह करने का एक तरीका भी है, जो सामने वाले को बताता है कि वह हमें याद है, हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है। उपहार भावनाओं को व्यक्त करने के साथ-साथ स्थायी रिश्ते और यादें बनाने का एक सशक्त माध्यम है और रिश्तों को दीर्घायु बनाने का सुंदर साधन है।

हालांकि ऐसा नहीं है कि अगर कोई व्यक्ति किसी मौके पर अपने किसी प्रिय को उपहार नहीं दे सका तो इससे उसकी अहमियत कम हो जाएगी या इसी से उसकी संवेदना का पैमाना तय किया जाएगा। मगर जो बातें समाज में चलन में होती हैं, हम उसी के आधार पर स्थितियों का आकलन करते हैं। दरअसल, अलग-अलग व्यक्ति द्वारा दिया गया उपहार अलग-अलग भावनाएं अभिव्यक्त करता है। मसलन, अगर उपहार गुरु से मिलता है तो वह प्रेरणा और प्रोत्साहन दर्शाता है। माता-पिता से मिला उपहार उनके निस्वार्थ प्रेम को प्रदर्शित करता है और अपने से आयु में छोटे अनुजों द्वारा प्राप्त उपहार हमारे प्रति सम्मान को दिखाता है।

उपहार देना तभी सार्थक होता है जब इसके साथ हमारी भावनाएं भी स्नेह से भरी और पवित्र हों। अगर हम स्वार्थवश किसी को कोई वस्तु उपहार दे रहे हैं, तो हमें उतनी आत्म संतुष्टि या खुशी नहीं मिल सकती है, जितनी निस्वार्थ भाव से उपहार देने पर मिलती है। अगर हम किसी को उपहार देते हैं और बदले में किसी चीज की आशा रखते हैं तो यह उपहार किसी भी तरीके से नहीं कहा जा सकता। बल्कि इसे लेन-देन या सौदा माना जाएगा या फिर व्यवसाय भी कहा जा सकता है। ऐसे उपहार का संबंध आत्मीयता से न के बराबर होता है।

विवाह से लेकर त्योहार, जन्मदिन, वर्षगांठ, गृह प्रवेश के अवसरों पर हम अपने सगे-संबंधियों या दोस्तों को उपहार देते रहते हैं। उपहार कितना महंगा है और कितना सस्ता है, प्रेम में यह बिल्कुल महत्त्वपूर्ण नहीं होता है। दोस्त, परिवार या किसी संबंधी के प्रति प्रेम में सिर्फ मनोभाव का महत्त्व होता है। जरूरी नहीं है कि हम किसी को सोना-चांदी या महंगे ब्रांडेड कपड़े, गैजेट उपहार दें, तभी हम किसी का हृदय जीत पाएंगें। दिल से दिया गया छोटा-सा उपहार भी सोने-चांदी और महंगे उत्पाद से ज्यादा अनमोल हो जाता है और हम उसे जीवन भर संभाल कर रखते हैं। दिल से दिया गया उपहार हमेशा किसी महंगे उपहार से बेहतर होता है। चाहे वह साधारण कार्ड या हस्तलिखित नोट ही क्यों न हो। उसमें सबसे ज्यादा महत्त्व रखता है उपहार देने के पीछे कितना लगाव और प्रेम छिपा है।

सही भावना के साथ दिए गए उपहार बरसों बीत जाने के बाद भी भावनात्मक रूप से अनमोल ही बने रहते हैं। जैसे बचपन में जब हम अपने सगे-संबंधियों में से किसी को कोई खिलौना दिए रहते हैं, तो बड़े हो जाने के बाद भी खिलौने को देख कर उस व्यक्ति की मधुर याद ताजा हो जाती है। रिश्ते को प्राणवायु मिल जाता है, वह पुनर्जीवित हो जाता है। जबकि बड़े हो जाने के बाद उनका मूल्य हमारे लिए कुछ भी नहीं रह जाता है, लेकिन भावनात्मक याद और लगाव बरसों बाद भी रह जाता है।

विज्ञान के पहलू से देखें तो हमारा मस्तिष्क देने की क्रिया पर सकारात्मक क्रिया-प्रतिक्रिया देता है, जिससे हम बहुत ज्यादा खुशी महसूस करते हैं। खुशी का हार्मोन 'डोपामाइन' किसी को कुछ देने पर सक्रिय हो जाता है और हमें उतनी ही खुशी महसूस होती है, जितनी कि जब हम अपने मनपसंद व्यक्ति से मिलते हैं या अपना मनपसंद भोजन खाते हैं। मस्तिष्क में आक्सीटोसिन का स्राव होता है, जो सामाजिक बंधन और विश्वास को मजबूत करता है और फिर न्यूरान्स के सक्रिय होने से हम खुशी महसूस करते हैं। एक अध्ययन में यह भी पाया गया है कि जो लोग दूसरों पर पैसा खर्च करते हैं, वे उन लोगों की तुलना में ज्यादा खुश रहते हैं, जो खुद पर पैसा खर्च करते हैं। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। हम सभी देखते हैं कि हमारे माता-पिता जब हमें उपहार देते हैं या कोई भी वस्तु देते हैं तो वे हमसे ज्यादा प्रसन्न होते हैं।

इसीलिए जब भी किसी को उपहार देना हो तो पूरे आदर, मन और दिल के साथ ही देना चाहिए, ताकि वह जीवन भर उसकी कोमल याद में बना रहे। हमारा देना न सिर्फ उस व्यक्ति की प्रसन्नता का कारक होगा, बल्कि हमारे लिए भी प्रसन्नता का कारक बनेगा। उस व्यक्ति से जिंदगी भर दोस्ती, पारिवारिक संबंध, प्रेम संबंध गहरा रहेगा। कई बार जो बातें हम अपने मुंह से नहीं कह पाते हैं, हमारा उपहार बहुत सटीकता के साथ सामने वाले के समक्ष प्रकट कर देता है। यह बिना बोले दिल से दिल को जोड़ने की कला है। हम उपहार देकर किसी के लिए अपना प्रेम और स्नेह व्यक्त कर सकते हैं। रिश्तों को मजबूत कर सकते हैं। अपनी कृतज्ञता और आत्मीयता व्यक्त कर सकते हैं। खुशी और सकारात्मकता फैला सकते हैं। अपने बंधनों को और मजबूत कर सकते हैं। सहानुभूति और परवाह प्रदर्शित कर सकते हैं। एक सकारात्मक प्रभाव बना सकते हैं।

दुनिया मेरे आगे

> **उपहार देना तभी सार्थक होता है जब इसके साथ हमारी भावनाएं भी स्नेह से भरी और पवित्र हों। अगर हम स्वार्थवश या किसी चीज की आशा में किसी को कोई वस्तु उपहार दे रहे हैं, तो हमें उतनी आत्म संतुष्टि या खुशी नहीं मिल सकती है, जितनी निस्वार्थ भाव से उपहार देने पर मिलती है।**

समावेशी राह

देश भर की पंचायतें प्रशासनिक इकाइयां न रह कर लोकतंत्र की आधारशिला बन गई हैं। विशेष रूप से महिलाओं के लिए उसने एक राजनीतिक मंच प्रदान किया है। आज भारत में लगभग दस लाख 45 हजार महिलाएं पंचायती राज संस्थाओं में चुनी गई हैं, जो स्थानीय शासन में दुनिया की सबसे अधिक महिला भागीदारी है। महिलाओं की यह बढ़ी हुई संख्या न केवल सांकेतिक, बल्कि ग्रामीण समाज में निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिला दृष्टिकोण को शामिल करने का प्रयास भी है। कई महिला प्रतिनिधियों ने शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, महिला सुरक्षा और जल प्रबंधन जैसे मुद्दों पर प्राथमिकता देकर उल्लेखनीय कार्य किए हैं। इससे स्पष्ट है कि जब महिलाओं को अवसर और अधिकार दिए जाते हैं, तो वे समाज के समग्र विकास में अहम योगदान देती हैं। फिर भी, प्रभावी भागीदारी के मार्ग में कई बाधाएं हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षा प्रमुख समस्या है, जिसके कारण अनेक महिला प्रतिनिधि नियम, प्रक्रिया और वित्तीय प्रबंधन को समझने में कठिनाई महसूस करती हैं। नतीजा यह कि उनके स्थान पर उनके पति या परिवार के पुरुष सदस्य निर्णय लेते हैं। यह प्रवृत्ति महिलाओं की स्वतंत्रता और नेतृत्व क्षमता को कमजोर करती है।

– मो अजहर आलम अंसारी, पूर्णिया

पाकिस्तान की फितरत

कुछ समय से पाकिस्तान की बौखलाहट साफ नजर आ रही है। आपरेशन सिंदूर के बाद भी पाक की फितरत में कोई बदलाव नहीं आया। आतंक को समर्थन देने वाले पाकिस्तानी सेना के प्रमुख मुनीर ने एक बार फिर भारत को परमाणु हमले की धमकी दी है। हालांकि गीदड़ भभकी देना पाक की पुरानी आदत और फितरत में शामिल है। समझ से परे है कि आपरेशन सिंदूर में घुटने पर लाकर खड़ा करने और धूल चटाने के बाद भी पाकिस्तान पर असर नहीं पड़ा। आखिर बार-बार मुनीर जहर उगल कर भारत को क्या बताना चाहते है? लगता है कि एक बार फिर भारत को सख्त रुख अपनाना होगा। हमें हल्के में लेने की भूल पाकिस्तान भुगत चुका है। फिर भी वह भारत की सहनशीलता की परीक्षा ले रहा है। पाकिस्तान इस समय अमेरिका की बैसाखी पर है, यह कब हट जाएगी, किसी को नहीं पता। अच्छा यही होगा कि पाक सेना प्रमुख जहर उगलना बंद करें।

– योगेश जोशी, बड़वाह

चुनौतियों की राह

अमेरिका की दिन प्रतिदिन बदलती घोषणाओं के बीच भारत को अमेरिका के साथ व्यापार करते समय फूंक-फूंक कर कदम रखने की जरूरत है। अमेरिका को नया अमेरिका बनाने के पीछे राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की मंशा अपने पुत्रों के व्यापार को वैश्विक स्तर पर स्थापित करने की है। हैरत है कि वे अपने भरोसेमंद देशों के साथ भी रुखा व्यवहार कर रहे हैं। दुनिया के कतिपय देश जो अमेरिका के खिलाफ बोलने में असमर्थ है, वे राष्ट्रपति पद की अवधि खत्म होने का इंतजार कर रहे हैं। वर्ष 2016 में राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव लड़ने से पहले, ट्रंप ने एक व्यवसायी के रूप में अपना करिअर बनाया। उनका ध्यान गगनचुंबी इमारतों, होटलों, कसीनो और गोल्फ कोर्स के नवीनीकरण पर था। पहली बार राष्ट्रपति चुनाव जीतने के बाद ट्रंप ने अपने कारोबार के भीतर सभी प्रबंधन भूमिकाओं से इस्तीफा दे दिया था। प्रधानमंत्री ने स्पष्ट कर दिया है कि भारत के हितों की रक्षा करना सर्वोपरि है।

– युगल किशोर राही, छपरा

प्रकृति का प्रकोप

भारत में मानसून के दौरान कई राज्यों में लोगों को बाढ़ का सामना करना पड़ रहा है। वहीं कई प्रांतों में भारी तबाही के साथ-साथ जान-माल का नुकसान भी हुआ है। उत्तराखंड में बादल फटने से तबाही मच गई। चट्टानें खिसकने और बाढ़ के खतरे लगातार बने हुए हैं। ऐसा पहली बार नहीं हुआ है कि उत्तराखंड के उत्तरकाशी में बारिश की वजह से इस तरह की भीषण तबाही हुई हो। ऐसी आपदा हर साल देखने को मिलती है। अगर भविष्य में इस आपदा से छुटकारा पाना है, तो हमें वैज्ञानिक पद्धति से इसका कोई समाधान ढूंढना होगा। पहाड़ों में विकास कार्यों की रफ्तार को संतुलित करना होगा। क्योंकि पहाड़ों को काट कर सड़कें बनाने, होटलों और आवास का निर्माण करने से पहाड़ी क्षेत्र हर दिन कमजोर हो रहे हैं। यह पर्यावरण के लिए भी खतरनाक स्थिति है।

– शाहिद हाशमी, अमेठी

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

प्रेरणा
कुदरत हमें बस इंसान बनाती है, हिन्दू, मुस्लिम, दलित, ब्राह्मण हमें समाज बनाता है। - **कमला भसीन**

संपादकीय

चीन के प्रति ट्रम्प की नरमाई में क्या सबक हैं?

ट्रम्प ने चीन पर टैरिफ बढ़ाने का फैसला अगले तीन माह के लिए यह कहते हुए रोक दिया है कि ट्रेड डील को मौका दिया जाना चाहिए। क्या चीन का पिछले तीन वर्षों से लगातार अमेरिकी सोयाबीन की खरीद एक-तिहाई कर देना और वह भी इस संदेश के साथ कि ब्राजील से खरीद बढ़ा सकते हैं, ट्रम्प की नरमाई का कारण रहा? क्या रेयर-अर्थ तत्वों की सप्लाई रोकने से अमेरिकी उद्योग पर आसन्न संकट बड़ा कारण था? या इनके अलावा यूरोप, खासकर फ्रांस और जर्मनी का दबाव में न आना, भारत का कृषि आयात में अमेरिकी जीएम उत्पाद सोयाबीन, मक्का और मांसाहार-पोषित जानवरों का डेयरी उत्पाद खरीदने पर राजी न होना, चीन-रूस की धुरी में भारत का शामिल होना और ब्राजील की अमेरिका की जगह यूरोप और चीन को कृषि निर्यात की ताकत ने ट्रम्प को चीन के साथ उदारवादी रवैया अपनाने को मजबूर किया? भारत के पास चीन या ब्राजील की तरह फिलहाल ऐसा कोई जरिया नहीं है, जो ट्रम्प को समझौते के मोड में लाए। दो देशों के बीच सौहार्द्र या पुराने संबंधों की भाषा ट्रम्प को प्रभावित नहीं करती। लिहाजा अगली संयुक्त राष्ट्र महासभा की बैठक में शामिल होने के बाद ट्रम्प से मिलने की मोदी की सोच कितनी खरी उतरेगी और क्या वह ट्रम्प के रवैए में बदलाव लाएगी, कहना मुश्किल है। भारत जीएम सोयाबीन और मक्के को सस्ते पशु-आहार के रूप में उपयोग कर सकता है, पर न तो अमेरिकी डेयरी उत्पाद खरीद सकता है, ना ही रूस से संबंध बिगाड़ सकता है।

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
humarehanuman@gmail.com

प्रकृति रूठी तो स्वतंत्र होने की बड़ी कीमत चुकानी होगी

जब हम अपनी स्वतंत्रता का उत्सव मना रहे होते हैं तब प्रकृति अपनी स्वतंत्रता की मांग कर रही होती है। मनुष्य को गुलामी पसंद नहीं, लेकिन वो प्रकृति को गुलाम बना रहा है। स्वबोध का अनुभव ही स्वतंत्रता है। हमने मनुष्यों की गुलामी को तो समाप्त कर दिया, पर मानसिक गुलामी रह गई। आज हम सब कहीं ना कहीं डरे हुए हैं। अगर इस मौसम की बात करें तो पानी से। कहीं ना आने का डर, कहीं अधिक आने का डर। जमीन को ज्वर आ गया है। आसमान अशांत हो गया है। और लगातार प्राकृतिक विपदाओं की खबरें मिलती हैं, क्योंकि प्रकृति भी स्वतंत्रता चाहती है। हमारा देश जिस तरह से विकास कर रहा है, कई ईर्ष्यालु मुल्क हमें घेरे खड़े हैं। हमारे विरोधी और प्रतिस्पर्धी देशों से तो हम निपट लेंगे, लेकिन प्रकृति से कैसे निपटेंगे? उसकी स्वतंत्रता को लेकर हम अत्यधिक गंभीर रहें, उसका सम्मान करें। जब भी स्वतंत्रता दिवस मनाएं तो यह विचार प्रत्येक भारतीय को करना चाहिए कि मैं अपने तईं प्रकृति का मान करूंगा। अगर प्रकृति रूठी रही तो मनुष्य को अपने स्वतंत्र होने की बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी।

• Facebook:Pt. Vijayshankar Mehta

पाठकों के पत्र

मनमानी एमआरपी पर लगाम जरूरी

बाजार में उपभोक्ताओं के साथ खुलेआम लूट हो रही है। एमआरपी इसका उदाहरण है, जिसका कोई हिसाब-किताब नहीं है। एमआरपी वास्तविक मूल्य से अधिक भी हो सकती है। ऐसे में किसी वस्तु पर मनमानी एमआरपी अंकित कर उपभोक्ताओं से अधिक जीएसटी वसूला जा रहा है। यह उपभोक्ता संरक्षण एवं वस्तु सेवा अधिनियम का खुल्लम-खुल्ला उल्लंघन है। समय रहते इसे नियंत्रित करना बहुत जरूरी है। - **नलिन खोईवाल,** इंदौर, मध्यप्रदेश

जैविक खेती पर जोर दिया जाए

देश में कैंसर जैसी बीमारियां तेजी से पांव पसार रही हैं। देश के किसानों को रासायनिक कृषि के बजाय जैविक खेती पर जोर देना चाहिए, ताकि खाद्यान्न उत्पादन में विषाक्त कणों का प्रभाव ना हो। केन्द्र और राज्यों की सरकारों को भी जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए ठोस कदम उठाने चाहिए। ऐसा करने से आने वाली पीढ़ियों का भविष्य सुरक्षित रखा जा सकेगा।
- **अजीत सिंह सिसोदिया,** बीकानेर, राजस्थान

हार्ट अटैक पर जागरूकता बढ़े

इन दिनों अचानक से होने वाले हार्ट अटैक की घटनाएं बढ़ रही हैं। ऐसे में जरूरी है कि सभी सरकारी-गैर सरकारी संस्थाओं में, सार्वजनिक जगहों पर इस आशय की जानकारी लगाई जाए कि किसी को अचानक हार्ट अटैक आने पर क्या किया जाना चाहिए। इससे उस व्यक्ति को तुरंत सहायता मिल सकेगी और उसकी जान बचाई जा सकेगी। क्योंकि ऐसे हालात में आमतौर पर लोगों को समझ नहीं आता है कि क्या करना चाहिए। - **विनय मोघे,** पुणे, महाराष्ट्र

चुनाव आयोग निष्पक्ष रहे

राहुल गांधी ने आरोप लगाया है कि लोकसभा चुनावों में बेंगलुरु की महादेवपुरा विधानसभा में एक लाख से ज्यादा मतदाता फर्जी पाए गए। इधर, चुनाव आयोग ने एसआईआर पर जबाव में कहा है कि 65 लाख मतदाताओं को क्यों हटाया, इसका जवाब देने का दायित्व उसका नहीं है। चुनाव आयोग सत्तारूढ़ दल का सहयोगी बनकर काम कर रहा है, जबकि वह एक निष्पक्ष संस्थान है।
-**जंग बहादुर सिंह,** जमशेदपुर, झारखंड

आप अपने पत्र editpage@dbcorp.in पर भेज सकते हैं

क्या आप जानते हैं

डेथ वैली में खुद ही खिसकती हैं चट्टानें

कैलिफॉर्निया के डेथ वैली नेशनल पार्क के 'पलाया रेसट्रैक' में भारी-भरकम चट्टानें अपने आप कई सौ मीटर दूर खिसक जाती हैं। इस सूखे इलाके में मामूली वर्षा होती है। 2014 के एक शोध में पाया कि बेहद कम तापमान के कारण बारिश का पानी मिट्टी पर बर्फ की पतली सतह बना देता है। सूरज की गर्मी से बर्फ की सतह टूटती है तो हल्की हवा के झोंके से भी ये चट्टानें इन सतहों पर फिसलती चली जाती हैं।

300 किलोग्राम तक की चट्टानें यहां 250 मीटर तक खिसकती दिखी हैं। दशकों तक यह घटना रहस्य बनी रही थी।

दूरदृष्टि • रूस के साथ हमारे बेहद महत्वपूर्ण रक्षा-संबंध रहे हैं और यह अमेरिका को खटक रहा है

भारत-रूस दोस्ती को तोड़ने की कोशिशें

कूटनीति

मनोज जोशी
विदेशी मामलों के जानकार
manoj1951@gmail.com

ट्रम्प के 50% टैरिफ ने भारत-अमेरिका संबंधों में खटास ला दी है। भारतीय विदेश मंत्रालय ने ट्रम्प की इस कार्रवाई को 'अनुचित, अन्यायपूर्ण और अतार्किक' बताते हुए कहा कि भारतीय आयात देश की ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने की आवश्यकता पर आधारित हैं। यकीनन, इस कार्रवाई में भारत को विशेष रूप से निशाना बनाया गया है। चीन, तुर्किये जैसे देश भी रूस से तेल-व्यापार कर रहे हैं, यूरोप उससे प्राकृतिक गैस खरीद रहा है, लेकिन पेनल्टी भारत पर लगाई गई।

इन टैरिफ के चलते भारत दुनिया के बड़े उपभोक्ता-बाजार से बाहर जैसा हो जाएगा। फिलहाल अस्थायी छूट के दायरे में शामिल किए गए स्मार्टफोन और फार्मा उत्पादों के अलावा भारत अमेरिका में हीरे, सोना, मशीनरी, स्टील, एल्युमीनियम, पेट्रो उत्पाद, परिधान, वस्त्र, वाहन और उनके पुर्जों का निर्यात करता है। यह निर्यात अभी 87 अरब डॉलर का है।

यह समझना मुश्किल है कि टैरिफ में अकेले भारत को ही क्यों निशाना बनाया गया? यह अमेरिका को रियायत देने के लिए भारत को बाध्य करने की कठोर रणनीति हो सकती है। ट्रेड डील पर एक और चरण की बातचीत के लिए अमेरिका का दल अगले कुछ दिनों में भारत आएगा। यह कदम उससे भी जुड़ा हो सकता है।

इसमें दो मुद्दे हैं। पहला- रूस से तेल की खरीद, जिसके बिना भारत का काम चल तो सकता है, लेकिन इसे बंद करने से भारत-रूस संबंधों को नुकसान होगा। दूसरा- अमेरिकी कृषि और डेयरी उत्पादों को भारतीय बाजार में प्रवेश दिलवाना, जिस पर प्रधानमंत्री मोदी जोर देकर कह चुके हैं कि वे समझौता नहीं करेंगे, भले ही उन्हें इसके व्यक्तिगत नतीजे भुगतने पड़ें।

यह पुतिन को यूक्रेन में युद्धविराम के लिए मजबूर करने का प्रयास भी हो सकता है। भले ही, फिलहाल रूस नहीं सुन रहा, लेकिन हाल ही में एक अमेरिकी दूत रूस गया था और जल्द ही ट्रम्प और पुतिन की वार्ता भी होने वाली है। यदि यह सफल रही तो ट्रम्प अपनी जीत की घोषणा कर अतिरिक्त टैरिफ वापस ले सकते हैं।

इसमें पाकिस्तान का मसला भी है। यह अनसुलझा सवाल है कि अमेरिका ने पाकिस्तान से नजदीकी बढ़ाने का फैसला क्यों किया? इसके पीछे एक कारण उस क्रिप्टो डील को भी माना जा सकता है, जो पहलगाम हमले के बाद पाकिस्तान ने ट्रम्प समर्थित कंपनी से की थी। दूसरी ओर, यह व्यापक दक्षिण-पूर्व नीति से जुड़ा भी हो सकता है, जिसमें ईरान को नियंत्रित करने के लिए पाकिस्तानी सेना का उपयोग शामिल हो। आसिम मुनीर की अमेरिका यात्राओं से भी यह समझ आता है।

लेकिन गंभीर चिंता यह है कि इस मामले में 1950 के दशक से चली आ रही भारत-रूस की दोस्ती को तोड़ने का अमेरिका का बड़ा भू-राजनीतिक लक्ष्य भी छिपा हो सकता है। साथ ही इसमें उस ब्रिक्स को समाप्त करने की मंशा भी सम्भव है, जिसे ट्रम्प अमेरिका के वैश्विक नेतृत्व के लिए खतरा मानते हैं।

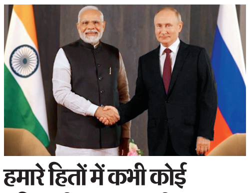

हमारे हितों में कभी कोई बुनियादी टकराव नहीं रहा...

दुनिया की बड़ी ताकतों के आपसी रिश्तों पर गौर करें तो भारत-रूस के रिश्ते सबसे टिकाऊ रहे हैं। भारत-रूस की दोस्ती हमेशा बनी रही है। इसका महत्वपूर्ण कारण यह है कि दोनों देशों में हितों का कोई बुनियादी टकराव नहीं है।

रूस के साथ हमारे बेहद महत्वपूर्ण रक्षा-संबंध रहे हैं। परमाणु पनडुब्बी परियोजना का ही उदाहरण लें, जो रूसी सहायता से बनी है और इसके बिना संभव नहीं हो पाती। इसी तरह से ब्रह्मोस मिसाइल है, जिसे रूसी मदद से अपग्रेड किया जाएगा। आने वाले दिनों में रूस परमाणु पनडुब्बी परियोजना में भी हमारी मदद कर सकता है। ये ऐसी प्रणालियां हैं, जो कोई और हमें नहीं देगा।

दुनिया की बड़ी ताकतों के आपसी रिश्तों पर गौर करें तो भारत-रूस के रिश्ते सबसे टिकाऊ रहे हैं। समय-समय पर जहां कई देश एक-दूसरे से कभी दोस्ती और कभी दुश्मनी करते रहे, वहीं भारत-रूस की दोस्ती हमेशा बनी रही। इसका महत्वपूर्ण कारण यह है कि दोनों देशों में हितों का कोई बुनियादी टकराव नहीं है। यह तथ्य है कि रूस दक्षिण एशिया में अपने संबंधों को लेकर भारत का अनुसरण करता रहा है। इसीलिए उसने पाकिस्तान से दूरी बनाए रखी है। चीन और अमेरिका 1972 तक दुश्मन थे, फिर 1993 तक अर्ध-सहयोगी बने और आज फिर से विरोधी हैं। इसी तरह, ट्रम्प अभी तक तो पुतिन समर्थक थे, लेकिन अब अचानक रूस-विरोधी हो गए हैं।

भारत-अमेरिका संबंधों को अब जल्द ठीक करना कठिन होगा। किसी भी संबंध में 'भरोसा' सबसे जरूरी होता है और ट्रम्प के रवैए से भले यह नष्ट ना हुआ हो, डगमगाया जरूर है। इसका एक परिणाम 'क्वाड' का कमजोर पड़ना भी होगा। क्वाड समिट सम्भवतः इसी साल नई दिल्ली में होगी। लेकिन क्या कोई सोच भी सकता है कि टैरिफ, ऑपरेशन सिंदूर और रूस से जुड़ी उथल-पुथल के बाद यह समिट होगी? और यदि हुई, तो ट्रम्प इसमें आएंगे? **(ये लेखक के अपने विचार हैं)**

नजरिया • गैर-राजनीतिक रहना चाहिए रुख

संवैधानिक पदों की निष्ठाओं पर उठते सवाल चिंतनीय हैं

जनतंत्र

पवन के. वर्मा
पूर्व राज्यसभा सांसद व राजनयिक
pavankvarma1953@gmail.com

अब जब हम नए उपराष्ट्रपति के नामांकन की प्रतीक्षा कर रहे हैं, तो पूर्व उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ द्वारा 21 जुलाई को- मानसून सत्र के ऐन पहले- रहस्यमयी तरीके से दिया गया इस्तीफा मानो भुला-सा दिया गया है। कुछ लोगों का कहना है धनखड़ अभी कहां हैं, इस बारे में भी ज्यादा लोगों को खबर नहीं है।

स्वतंत्र भारत में पहली बार ऐसा हुआ था, जब किसी पदासीन उपराष्ट्रपति द्वारा पद से इस्तीफा दिया गया हो। यह कोई मामूली बात नहीं है। इससे पहले जिन उपराष्ट्रपतियों ने पद पर रहते हुए त्यागपत्र दिया, वो सिर्फ इसलिए था, क्योंकि वे राष्ट्रपति चुनाव के उम्मीदवार थे। देर रात अचानक दिए अपने त्यागपत्र में धनखड़ ने स्वास्थ्य कारणों का हवाला दिया था। शायद, यह सच हो सकता है। लेकिन सार्वजनिक रूप से ज्ञात तथ्य यह तो नहीं दर्शाते कि वे गम्भीर रूप से अस्वस्थ थे। उनकी हाल ही में एंजियोप्लास्टी जरूर हुई थी, किंतु वह एक सामान्य प्रक्रिया थी, और प्राणघातक नहीं थी। 74 की उम्र भी इतनी नहीं होती। इसके अलावा, इस बात का भी कोई प्रमाण नहीं है कि इस्तीफे के बाद उन्हें अस्पताल में भर्ती कराया गया हो।

वास्तव में, जिस दिन उन्होंने इस्तीफा दिया, उस दिन भी वे अस्वस्थ नहीं दिखे, बल्कि पूरी तरह सक्रिय रहे थे। राज्यसभा के सभापति के तौर पर उन्होंने दोपहर 12:30 बजे बिजनेस एडवाइजरी कमेटी (बीएसी) की बैठक तय की, जिसमें विपक्ष और भाजपा के नेताओं ने हिस्सा लिया। उनका प्रतिनिधित्व सदन के नेता जेपी नड्डा और संसदीय कार्य मंत्री किरेन रिजिजू कर रहे थे। बैठक में शामिल किसी भी व्यक्ति ने यह संकेत नहीं दिया कि धनखड़ बीमार लग रहे थे, या अपनी सामान्य ऊर्जा से कम थे। बैठक बेनतीजा रही और शाम 4:30 बजे फिर से शुरू होने वाली थी। लेकिन जब बैठक फिर से शुरू हुई, तो इस बार उसमें एक बड़ा अंतर था। नड्डा और रिजिजू इसमें शामिल नहीं हुए। उसी शाम धनखड़ ने इस्तीफा दे दिया।

स्पष्ट है कि अचानक हुए इस घटनाक्रम के पीछे सिर्फ स्वास्थ्य संबंधी ही नहीं, और भी कारण रहे होंगे। खासकर इसलिए क्योंकि धनखड़ के कार्यालय ने अगले हफ्ते उनकी सार्वजनिक व्यस्तताओं की घोषणा कर दी थी। फिर देश के दूसरे सबसे बड़े संवैधानिक पद पर बैठे व्यक्ति द्वारा अचानक ऐसा निर्णय लेने की क्या वजह थी? उनके कार्यकाल में दो वर्ष भी शेष थे।

इतना तो निश्चित है कि अपने कार्यकाल के दौरान धनखड़ ऐसे उपराष्ट्रपति रहे थे, जिन्होंने यथासम्भव सत्ताधारी दल की अपेक्षाओं का पालन किया, भले ही वे ऐसा करने के लिए बाध्य न रहे हों। इससे पहले, पश्चिम बंगाल के राज्यपाल के रूप में भी वे मुख्यमंत्री ममता बनर्जी के साथ लगातार टकराव की स्थिति में रहे थे। उनकी यह बात सराही गई होगी। शायद पार्टी की अपेक्षाओं के अनुरूप कार्य करने की उनकी जुझारू भूमिका के लिए ही उन्हें उपराष्ट्रपति पद से पुरस्कृत किया गया हो। हालांकि ऐसा उनकी योग्यता के आधार पर भी हो सकता था, क्योंकि वे संविधान के अच्छे जानकार और एक प्रतिष्ठित वकील थे।

राज्यसभा के सभापति के रूप में, सत्ता पक्ष के प्रति उनके झुकाव के चलते ही विपक्ष ने उनके खिलाफ महाभियोग प्रस्ताव प्रस्तुत किया था। यह भी हमारे संसदीय इतिहास में पहली बार होने वाली घटना थी। उन्होंने विपक्षी सदस्यों को निष्कासित किया था और सदन में संघ की भी प्रशंसा की थी। फिर ऐसा क्या हुआ कि त्यागपत्र देने की नौबत आई?

ऐसी अटकलें हैं कि जब उन्होंने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति शेखर यादव- जिन्होंने कथित तौर पर अशोभनीय साम्प्रदायिक बयान दिए थे- के खिलाफ विपक्ष के महाभियोग प्रस्ताव को स्वीकार किया तो यह बात पार्टी नेतृत्व को पसंद नहीं आई। यह भी कहा जा रहा है कि उनकी 'गलती' न्यायमूर्ति यशवंत वर्मा के खिलाफ विपक्ष के महाभियोग प्रस्ताव को स्वीकार करना था, जिसका श्रेय भाजपा लेना चाहती थी। या फिर यह कि संसदीय सर्वोच्चता बनाम न्यायपालिका के मामले पर उनका तीखा रुख सरकार को एक असहज स्थिति में डाल देने वाला था। जो भी हो, यह तो साफ है कि उन्होंने कुछ ऐसा किया, जिससे उन्हें पूर्व में उन्हें उपकृत करने वाली पार्टी का ही कोपभाजन बनना पड़ा।

पूर्व उपराष्ट्रपति वाले मामले में मुद्दा संवैधानिक पद की निष्ठा का है। अगर ऐसे किसी पद पर आसीन व्यक्ति तभी पदाधिकारी रह सकता है, जब वह गैर-राजनीतिक न रह पाए तो स्वतंत्र संस्थाओं का नेतृत्व करने वालों का क्या?

पर इस सबमें वास्तविक चिंताजनक मुद्दा एक गैर-राजनीतिक संवैधानिक पद की निष्ठा का है। अगर ऐसे किसी पद पर आसीन व्यक्ति तभी पदाधिकारी रह सकता है, जब वह गैर-राजनीतिक होने की अपनी शपथ का निर्वाह न करे तो स्वतंत्र संस्थाओं का नेतृत्व करने वाले दूसरे लोगों का क्या? और हमारे लोकतंत्र के लिए इसके क्या मायने हैं? **(ये लेखक के अपने विचार हैं)**

विश्लेषण • हिंसक पशुओं को ही आबादी से दूर रखें

आवारा कुत्तों के मामले में कई पहलुओं पर समझ जरूरी है

मुद्दा

विराग गुप्ता
सुप्रीम कोर्ट के वकील
viraggupta@hotmail.com

मुम्बई में कबूतरों को दाना देने पर एफआईआर और दिल्ली में आवारा कुत्तों पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद सार्वजनिक विमर्श में ध्रुवीकरण हो गया है। लेकिन इस फेर में हमें बहस के छह वास्तविक और बड़े बिंदुओं को नजरों से ओझल नहीं होने देना चाहिए।

1. **कानून** : नसबंदी और रैबीज इंजेक्शन के बाद उसी स्थान पर कुत्तों को छोड़ने के नियम को सुप्रीम कोर्ट के जज ने बेतुका बताया है। कई लोग मनुष्यों की तरह कुत्तों के लिए भी जीवन की सुरक्षा और घूमने-फिरने के संवैधानिक अधिकार को मानते हैं। लेकिन फिर उस तर्क के अनुसार बकरी, भैंस, मुर्गा आदि के जीवन के अधिकार का सम्मान करते हुए देश में तमाम प्रकार की पशु-क्रूरताओं पर प्रतिबंध लग जाना चाहिए। विशेष दर्जा देने के तर्क के साथ कानून के अनुसार जवाबदेही भी सुनिश्चित करनी होगी। कोई इंसान अगर दुर्व्यवहार या हिंसा करे तो उसे जेल भेजा जा सकता है। इसी तरह से हमला करने और काटने वाले कुत्तों को भी आबादी से दूर भेजना न्यायसंगत है।

2. **स्वच्छता** : राजधानी दिल्ली में सिर्फ 5767 कुत्तों का एमसीडी में रजिस्ट्रेशन कराया गया है। डेंगू और मलेरिया रोकने के लिए भी कूलर के पानी की जांच होती है। इसी तरह सड़क, पार्क और कॉलोनियों में करोड़ों कुत्तों के शौच, पेशाब, जूठन खाने आदि की वजह से बढ़ रही गंदगी और बीमारियों को रोकने के लिए भी नियमों को सख्ती से लागू करने की जरूरत है। कोरोना के वायरस को रोकने के लिए पूरे देश की जनता को क्वारेंटाइन और लॉकडाउन में झोंक दिया गया था। इसी आधार पर हिंसक या खतरनाक कुत्तों को भी आबादी से दूर भेजने की जरूरत है।

3. **जज** : 4 साल पहले केरल हाईकोर्ट ने ब्रूनो कुत्ते की हत्या के मामले में स्वतः संज्ञान लिया था। इसलिए करोड़ों लोगों की सुरक्षा से जुड़े मामले में सुप्रीम कोर्ट के स्वतः संज्ञान में कुछ भी गलत नहीं है। लेकिन चीफ जस्टिस के आदेश के बाद इस मामले की सुनवाई अब तीन जजों की नई बेंच करेगी। पिछले कई फैसलों पर हो रहे विवादों से साफ है कि जजों की व्यक्तिगत अभिरुचि और मीडिया के दबाव के बगैर संविधान और कानून के अनुसार अदालत के फैसले होने चाहिए। आनन-फानन में जज बदलने या फैसलों को पलटने से जजों के साथ सर्वोच्च न्यायालय का मान कमजोर होता है। पटाखे और वाहनों पर प्रतिबंध के पुराने फैसलों पर विवाद से साफ है कि जनहित से जुड़े मामलों में राजधानी दिल्ली या एनसीआर की बजाय पूरे देश में सुप्रीम कोर्ट के फैसले लागू होने चाहिए।

4. **रैबीज** : पिछले साल भारत में लगभग 6 करोड़ आवारा कुत्तों के काटने के 37 लाख से ज्यादा मामले आए। जबकि सिर्फ दिल्ली-एनसीआर में 11 लाख आवारा कुत्तों ने इस साल अभी तक लगभग 6.62 लाख लोगों को काट लिया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार रैबीज की वजह से साल 2004 में भारत में 20,565 सालाना मौतें हुई थीं, जो कि पूरी दुनिया में रैबीज से होने वाली मृत्युओं का 35 फीसदी है। रैबीज केवल कुत्तों से ही नहीं फैलता, लेकिन इसके 96 फीसदी से ज्यादा मामले कुत्तों के काटने से ही होते हैं। चिंताजनक बात यह है कि एंटी रैबीज वैक्सीन के साथ ही इम्युनोग्लोबुलिन भी दिया जाता है, जो देश के अधिकांश अस्पतालों में उपलब्ध नहीं है।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

5. **मुआवजा** : सर्पदंश के सालाना 58 हजार मामलों की अब बीमारी के तौर पर रिपोर्टिंग जरूरी हो रही है। उसी तर्ज पर कुत्तों के काटने के हर मामले की रिपोर्टिंग भी जरूरी है। एक स्ट्रीट डॉग को लाठी से पीटने के मामले में दिल्ली पुलिस के एएसआई के खिलाफ साढ़े तीन साल बाद मुकदमा दर्ज हुआ था। उसी तर्ज पर कुत्तों के काटने के मामले में मालिकों और अनुचित संरक्षण देने वालों पर मुकदमा होना चाहिए। आक्रामक कुत्तों की ब्रीडिंग और उनको पालने पर प्रतिबंध लगना चाहिए। कुत्तों के काटने के सभी मामलों में फ्री इलाज के साथ पीड़ित व्यक्ति और परिवार को समुचित मुआवजा मिलना चाहिए।

दिल्ली-एनसीआर में 11 लाख कुत्तों ने इस साल अभी तक लगभग 6.62 लाख लोगों को काट लिया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार रैबीज से 2004 में भारत में 20,565 सालाना मौतें हुई थीं, जो पूरी दुनिया की 35% थीं।

6. **बजट** : आवारा कुत्तों के बढ़ते संकट में नसबंदी, रैबीज इंजेक्शन और शेल्टर हाउस हजारों करोड़ के फंड में एनजीओ और अफसरों का भ्रष्टाचार उजागर हो रहा है। देश में 40% आबादी पोषक भोजन से वंचित है तो फिर दिल्ली के कुत्तों के विस्थापन के लिए 15 हजार करोड़ रुपए के खर्च का जुगाड़ कैसे होगा? आज भारतीय पेट-केयर का बाजार ही एक लाख करोड़ रुपए से ज्यादा का है। समृद्ध वर्ग के पशु प्रेमियों को आयातित कुत्तों के बजाय आवारा कुत्तों को गोद लेने के साथ उनके कल्याण की योजनाओं को सफल बनाने के लिए सीएसआर की तर्ज पर अधिकतम आर्थिक सहयोग देना चाहिए। **(ये लेखक के अपने विचार हैं)**

डिफ्रेंट एंगल • महिलाओं को आज भी समाज में सम्मान और बराबरी पाने के लिए 'एडजस्ट' करना पड़ता है...

हमें घरों में भी अपनी स्वतंत्रताओं के लिए प्रयास करने होंगे

आधी आबादी

मेघना पंत
पुरस्कृत लेखिका, पत्रकार-वक्ता
meghnapant@yahoo.com

इस महीने की शुरुआत में लखनऊ की सड़कों पर सैकड़ों महिलाएं बेलन, झंडे और तलवारें लहराते हुए निकलीं। वे सांसद डिम्पल यादव के पहनावे पर एक मौलवी की टिप्पणी का विरोध कर रही थीं। मौलवी ने डिम्पल के मस्जिद में साड़ी पहनने को अशोभनीय बताते हुए उस पर आपत्ति जताई थी। महिलाओं ने अपने विरोध को 'शक्ति का शंखनाद' नाम दिया। संदेश साफ था कि हमें मत बताओ कि क्या पहनना है, कैसे जीना है।

यकीनन, यह एक प्रभावी विरोध-प्रदर्शन था। लेकिन यह एक स्याह सच्चाई को भी उजागर करता है, जिस बारे में हम अभी भी अधिक बातें नहीं करते। यह कि भले ही भारत की महिलाएं सार्वजनिक स्थलों पर अपनी स्वायत्तता के लिए लड़ाई लड़ रही हों, लेकिन हममें से कई अब भी अपने घरों में ही आजाद नहीं हैं।

'शादी के बाद सब कुछ बदल जाता है'- ये महज फिल्मों का घिसा-पिटा डायलॉग नहीं है। यह लाखों भारतीय महिलाओं की एक जीवंत सच्चाई है। हनीमून का खुमार उतरते-उतरते महिलाओं की शारीरिक, आर्थिक, लैंगिक और भावनात्मक स्वतंत्रताएं धीरे-धीरे कम होने लगती हैं। कई महिलाओं के लिए शादी का मतलब घरेलू बंदीगृह में होने जैसा हो जाता है : खाना बनाना, देखभाल करना और समझौते करना। अपने वजन से लेकर कोख तक, हर चीज के लिए उन्हें जज किया जाता है।

शादी के वक्त बहुतेरी औरतों को लगता है कि अब उन्हें पहले से ज्यादा आजादी मिलेगी, लेकिन उसका जीवन अदृश्य जंजीरों में जकड़कर रह जाता है- किससे मिलना है, कितना कमाना है, कब बोलना है और कब चुप हो जाना है- ये तमाम बंदिशें लगाई जाने लगती हैं। जब तक महिलाएं इसे समझ पाती हैं, उनका आत्मसम्मान एक 'अच्छी पत्नी' होने की किसी और की परिभाषा में फिट होने के लिए सिकुड़ चुका होता है।

कई महिलाओं के लिए यही 'शादी के बाद आजादी' का सच है। उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे बच्चों के लिए नौकरी छोड़ दें। इस अंदेशे से आप कुछ प्रकार के कपड़े नहीं पहन सकते कि लोग क्या कहेंगे। ससुराल वाले जब आपका अपमान करें तो आपसे कहा जाता है कि 'एडजस्ट कर लो'। और ईश्वर ना करे अगर आपने संबंध तोड़ लिए तो आप पर स्वार्थी, नए जमाने की और अनैतिक होने तक का ठप्पा लगा दिया जाता है।

तो जहां महिलाएं डिम्पल यादव के मनचाहे कपड़े पहनने के पूरी तरह से जायज हक के लिए प्रदर्शन कर रही होती हैं, वहीं हमें यह भी पूछना चाहिए कि क्या हम घरों में भी खुद को यह अधिकार देती हैं? क्या हम शादियों में रोजाना होने वाले लैंगिक भेदभाव पर सवाल उठाती हैं? क्या हम मानती हैं कि चारदीवारी के भीतर भी हमारी कोई आजादी होनी चाहिए?

यह सिर्फ शादी का ही मसला नहीं है। शादी के इतर भी पूरे देश में पहनावे को लेकर महिलाओं पर कई तरह की पाबंदियां होती हैं। कुछ मंदिरों पर पोस्टर लगा कर महिलाओं को चेतावनी दी गई कि वे जींस, स्कर्ट या वेस्टर्न कपड़े पहनकर यहां ना आएं और आएं तो बाहर से ही दर्शन करें। इससे पहनावे के निजी चयन को लेकर आक्रोश पैदा हो गया। कॉर्पोरेट जगत की एक कंपनी ने भी लैंगिक भेदभाव वाले ड्रेस कोड के तहत महिलाओं से पिन्ड शॉल और चूड़ीदार पहनने और बालों को बांधकर आने के लिए कहा। इस पर भी लोगों ने प्रतिक्रियाएं देते हुए इसे आउटडेटेड और बचकाना बताया।

ये घटनाएं एक पैटर्न को उजागर करती हैं। महिलाओं को आज भी निजी तौर पर और समाज में सम्मान, शालीनता और बराबरी का दर्जा पाने के लिए एडजस्ट करना पड़ता है। चाहे वह मौलवी हो, नौकरी देने वाला हो, मंदिर हो या ससुराल, संदेश यही है कि आपको हमारी माननी ही पड़ेगी।

आइए, इस स्वतंत्रता दिवस पर हम कहें कि 'बीवियों को आजादी दो'। यह सवाल उठाने के लिए महिलाओं को प्रोत्साहित करें कि उनका आकलन अब भी कपड़ों या उनके व्यवहार से ही क्यों किया जाना चाहिए? क्योंकि यदि हम अपने ही घरों में अपनी स्वतंत्रताओं के लिए नहीं लड़े तो दुनिया के सामने विरोध-प्रदर्शनों के कोई मायने नहीं रह जाएंगे।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)